गुरु परमेश्वर

सम्पूर्ण गुरु की खोज

कृपाल सिंह

‘गुरु परमेश्वर :
सम्पूर्ण गुरु की खोज’

मूल अंग्रेज़ी पुस्तक :
'God-man'
(1967)

हिन्दी अनुवाद :

प्रथम संस्करण : 1993
वर्तमान संस्करण (संशोधित) : 2021

मुद्रक :

समर्पित

सर्वशक्तिमान परमात्मा को,

जो आज तक आए सभी

संत-महापुरुषों के रूप में कार्य करता रहा है

तथा

परम संत बाबा सावन सिंह जी महाराज को,

जिनके पावन चरणों में बैठकर

लेखक ने परम पवित्र 'नाम'

का मधुर रस पान किया

“कोई इन्सान पुत्र को नहीं जानता, केवल पिता के; और कोई इन्सान पिता को नहीं जानता, केवल पुत्र के और उसके, जिस पर पुत्र उसे प्रकट करना चाहे।”

– **पवित्र बाइबिल** (मत्ती 11:27)

विषय-सूची

	प्राक्कथन	7
1.	गुरु क्या है	11
2.	गुरु 'शब्द' है	17
3.	गुरुओं के स्तर	27
4.	गुरु : एक या अनेक	31
5.	वक़्त का गुरु	33
6.	गुरु की आवश्यकता	37
7.	पुरातन संत	41
8.	गुरु बिन घोर अंधियार	63
9.	ऐतिहासिक प्रमाण	67
10.	गुरु नानक जी से पहले और बाद में	71
11.	धर्मग्रंथ और उनका मोल	73
12.	गुरु महापुरुष अथवा सत्पुरुष है	81
13.	सत्गुरु और जीवों की निज-घर वापिसी	87
14.	सत्गुरु और उसका मिशन	91
15.	सत्गुरु और उसका काम	93
16.	सत्गुरु और उसका कर्तव्य	95
17.	सत्गुरु प्रभु का अवतार है	97
18.	गुरुदेव	103
19.	पूरा गुरु	111
20.	पूरे गुरु को कैसे पायें और पहचानें	113
21.	सत्गुरु का जीवन व आचरण	117
22.	सत्गुरु की शारीरिक बनावट	119
23.	सत्गुरु का प्रभाव	121
24.	गुरु, गुरुदेव, सत्गुरु और मालिक की एकता	135

25.	एकता का भाव	137
26.	परमात्मा और गुरु की दातें	153
27.	सत्गुरु की संभाल	161
28.	गुरु का मेहर भरा हाथ	171
29.	गुरु के आगे आत्म–समर्पण	173
30.	सत्गुरु के वचन	179

संक्षिप्त जीवन–चरित्र : परम संत कृपाल सिंह जी महाराज 187

प्राक्कथन

यह मेरा परम सौभाग्य था कि मुझे चौबीस अल्पकालीन, ख़ूबसूरत, प्रेरणादायी वर्षों के लिए अपने सत्गुरु, परम संत हुजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज के पवित्र चरण–कमलों में बैठने का और उनका प्रेम, मार्गदर्शन एवं संरक्षण पाने का मौक़ा मिला।

जब सत्य का एक खोजी सत्गुरु के क़दमों में आता है, तो उसके मन में निरन्तर उठने वाले इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है कि प्रभु क्या है और कैसे उसकी सृष्टि उसको पा सकती है।

सत्गुरु का मिशन बताना मेरे लिए सौभाग्य का विषय है। सत्गुरु प्रभु का परवाना लेकर आता है और वह पीड़ित इंसानियत को 'नाम' या 'शब्द'– कांतिमय स्वरलहरियों की दात मुफ़्त बाँटता है, जिससे जुड़कर जीव, या'नी आत्मा–देहधारी, वापिस निजघर लौट सकता है।

यदि आत्मा 'शब्द की धारा' को पकड़ ले, तो यह 'अनाम प्रभु की रस्सी' उसे प्रभु के दर तक पहुँचा सकती है। पर अभी हमारी आत्मिक इन्द्रियाँ, उस पर मन और माया के मोटे–मोटे चढ़े हुए पर्दों के कारण, हमारे चारों ओर शब्द की गूँज के बावजूद भी, आत्मा इसे सुन नहीं पाती और न ही इसकी महिमा को देख सकती है। इंसान अपने सृजनकर्ता से अपने संबंध को पुनःस्थापित कैसे कर सकता है?

धुरि खसमै का हुकमु पाइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।

– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰556)

किसी ज़िंदा सत्गुरु के जीवनदायी स्पर्श के बिना, आत्मा जन्मों–जन्मों की अपनी नींद से उठ कर नाम उठ नहीं सकती।

हम बाइबिल के कथन से परिचित हैं :

आदि में शब्द था.......और शब्द ही परमात्मा था।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:1-2)

शब्द देहधारी हो गया और हमारे बीच रहा।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

अतः सत्गुरु, वास्तव में, संसार के विभिन्न धर्मों में उद्धरित शब्द, नाम, कलमा, आकाशवाणी, सरोशा, Word या उद्‌गीत है।

धर्मग्रंथों के प्रेमियों के लिए, धर्मग्रंथों की असली क़ीमत का वर्णन किया गया है।

जो पुरातन संतों की उपासना करते हैं, उनके लिए उनके ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत किये गये हैं।

एक सत्गुरु अपने शिष्यों के बीच विचरता हुआ, जो विवेक, शांति, सांत्वना और प्रेरणा के वचन बोलता है या कभी प्रेममयी झिड़की भी लगाता है, उसका अल्प शब्दों में बयान करना असंभव है। उसके निःस्वार्थ, दया से परिपूर्ण कार्य और उसका महामानवीय प्रेम, उसके आसपास के लोगों को पूर्णतया आश्वस्त कर देते हैं कि उसकी 'सत्' की शिक्षाएँ प्रश्न किये जाने से अतीत हैं।

परन्तु जिन लोगों ने उसकी संगति का उपहार पाया, उनके ऊपर उसके जीवन, आचरण और दया–मेहर की अमिट छाप अंकित हो जाती है।

गुरु की दया–मेहर और सँभाल जीव को उसके चरण–कमलों में आत्म–समर्पण करने को प्रेरित करती है, जिससे वह उसके 'शब्द' के मार्गदर्शन में सदा रह सके।

प्रभु करे कि जीवन की गुत्थी को सुलझाने की चाह रखने वाला अथक जिज्ञासु उसके 'नाम' में सदा का विश्राम पा जाए।

– कृपाल सिंह

तू तीर्थयात्री का पथ है, अंधे की आँख, मृत व्यक्ति का जीवन
(तुझ पर मेरी आशा टिकी है)
यदि तू बिसर जाये, मैं भूल जाऊँगा, भटक जाऊँगा, मर ही न जाऊँगा।

अपनी सूर्यकिरणों को बिखेर, अपने पँखों को बंद कर, और ठहर जा
(देख! मैं कितना अंधा हूँ, और मरा हुआ, और भटका हुआ)
हे, तू, जो मेरी ज्योति है, मेरा जीवन है, मेरा पथ है।

– फ़्रान्सिस क्वार्ल्स

प्रथम अध्याय

गुरु क्या है?

मनुष्य को पहले प्रभु की तरह बनाया गया, यह बड़ी बात है।
परन्तु प्रभु, मनुष्य की तरह का बन आये,
तो यह उससे भी बड़ी बात है...
प्रभु ने स्वयं को मानव की तरह हाड़-माँस का बना लिया,
ताकि वह इतना कमज़ोर हो जाये कि कष्टों से पीड़ित हो सके।

– जॉन डॉन (एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि) [John Donne- 'Holy Sonnet-11']

सत्गुरु को सचमुच में समझना और उसकी महानता को जानना असंभव है। हम वह दृष्टि नहीं रखते, जिससे हम उस सत्य को देख सकें। एक पैग़म्बर ही दूसरे पैग़म्बर को पहचान सकता है। हम मन–इंद्रियों के घाट पर बैठी देह–धारी आत्माएँ उसे कदापि नहीं जान सकतीं।

आप क्या हैं, हम नहीं जानते,
आप जैसा दूसरा है क्या?

– शैली [Percy Bysshe Shelley- 'Ode to a Skylark']

छोटा बड़े को भला कैसे जान सकता है?
सीमित तर्क से भला असीम तक कैसे पहुँचा जा सकता है?
क्योंकि जो कोई उस प्रभु की गहराई को माप सके,
वह उससे बड़ा ही होना चाहिये।

– ड्राइडेन [John Dryden- 'Religio Laici'- A Layman's Faith]

सिक्खों की दैनिक प्रभातकालीन प्रार्थना, जप जी में कहा गया है :

एवडु ऊचा होवै कोइ।। तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ।।

– आदि ग्रंथ (जप जी पौड़ी 24, पृ॰5)

सत्गुरु आकाश की ऊँचाइयों में उड़ने वाली कूँज की भाँति होता है, जिसे 'पारलौकिक चारण (भाट)– आसमान का तीर्थयात्री' कहकर पुकारा गया है। जो कोई कूँज (भरल) की ही जैसी ऊँची उड़ान भर सके और उसके

मार्ग का अनुसरण कर सके, वही उसके बारे में कुछ जान सकता है, पर कौवे और फ़ाख़्ता उसके बारे में नहीं जान सकते। लेकिन सत्गुरु आकाश में उड़ने वाला नहीं, अपितु सर्वोच्च आत्मिक मंडल का मालिक होता है। वह वहाँ से नीचे उतर कर हमारे पास आता है, ताकि 'पारलौकिक संगीत' को हमें सुना सके तथा अपने स्वार्गिक मंडलों में हमें साथ ले जा सके। जब तक वह धरती पर निवास करता है, वह "ऐसा विवेकशील महापुरुष होता है, जो बुलन्द होकर उड़ता तो है, परन्तु भटकता नहीं। वह आकाश की दिशाओं का जानकार होता है और निज–धाम तक उसकी पहुँच होती है।"

वह तीनों शरीरों– स्थूल, सूक्ष्म और कारण; तीनों गुणों– सत्व, रज और तम; पाँच तत्त्वों– पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश; 25 प्रकृतियों (विभिन्न अनुपातों में तत्वों के सम्मिश्रण से बने सूक्ष्म पदार्थ) और मन और माया, इन सभी से बहुत ऊपर होता है।

इसीलिये, शम्स तबरेज़ उसका वर्णन इस प्रकार करते हैं :

> ईनक आँ मुर्गां किह् ईशां बैज़ाहा ज़र्री कुनन्द,
> कुर्रा-ए-तंदे-फ़लक रा हर सहर गह ज़ींन कुनन्द।
> चूं ब-ताज़न्द आफ़ताबे-हफ़्तमीं मैदां शवद,
> चूं ब-ख़ुसपन्द आफ़ताबों माह रा बाली कुनन्द।
>
> – कुल्लीयाते–शम्स तबरेज़ (पृ.405)

(वह ऐसा पक्षी होता है, जो कि सोने के अंडे देता है, अर्थात, वह बेशक़ीमत 'नाम' या 'शब्द' की भेंट देता है। प्रतिदिन प्रातः काल वह ऊँचे दिव्य मंडलों में उड़ता है। जब वह दौड़ता है, तो संपूर्ण सौर मंडल को पार कर लेता है और जब वह सोता है, तो सूरज और चाँद के सिराहने बनाता है," अर्थात, वह उच्चतर ज्योति में विश्राम करता और रमण करता है।)

दूसरे शब्दों में, जब वह किसी सांसारिक कार्य में नहीं लगा होता, तो वह आराम करने के लिए ऊँचे दिव्य मंडलों में पहुँच जाता है।

> शम्स तबरेज़ी हज़ाराँ कोरे-मादिर ज़ाद रा,
> यक नज़र अज़ रहमते-ख़ुद जुमला रा रह बीं कुनन्द।
>
> – कुल्लीयाते–शम्स तबरेज़ (पृ.405)

(अर्थात, ऐ शम्स तबरेज़! एक दया–मेहर भरी दृष्टि से वह हज़ारों जन्मान्धों को ज्योति का दर्शन करा सकता है यानी वह उन्हें संत या पीर–पैग़ंबर बना सकता है।)

वास्तव में ऐसे संत–सत्गुरु परमात्मा से एकमेक होते हैं, लेकिन उसकी आज्ञा से भौतिक संसार में उसके दिव्य उद्देश्यों की पूर्ति करने आते हैं। संसार से दुखी आत्माएँ, जो कि परम पिता परमात्मा के साथ दुबारा जुड़ने के लिये तड़प रही होती हैं, उन पर परमात्मा दया करता है और उनकी निजधाम वापसी का इंतज़ाम करता है।

क्योंकि इंसान का अध्यापक इंसान ही हो सकता है, इसलिए प्रभु चुनी हुई आत्मा को कमीशन (परवाना) देकर इस दुनिया में भेज देता है, ताकि जो रूहें प्रभु का संदेश सुनें उन्हें वापिस निजधाम ले जा सके। वह इस उद्देश्य की पूर्ति में एक माध्यम का काम करता है।

पहाड़ी की चोटी पर खड़े एक व्यक्ति के जैसे, वह यह देख सकता है कि किस हृदय में प्रभु–प्रेम की चिन्गारी सुलग रही है और एक बड़े भारी मिकनातीसी पत्थर (चुंबक) के जैसे, वह ऐसे सभी इंसानों को अपने प्रभाव के दायरे में ले लेता है और अपने व्यक्तिगत मार्गदर्शन और निर्देशन द्वारा उन्हें रूहानी मार्ग पर प्रशस्त कर देता है।

अपनी–अपनी पात्रता के अनुसार, प्रत्येक आत्मा को रूहानी फैज़ मिलता है। जैसे जैसे इंसान की ग्रहणशीलता (पात्रता) बढ़ती जाती है, वैसे वैसे उसे मिलने वाले दया–मेहर और आध्यात्मिक लाभ भी बढ़ते चले जाते हैं। असीम आध्यात्मिक निधि का मालिक होने के कारण, वह (सत्गुरु) उसे खुले दिल से उन सभी जिज्ञासुओं को बाँट देता है, जो उसे पाने की चाह रखते हैं। प्रत्येक को अपनी आवश्यकता और योग्यता के अनुसार यह निधि प्राप्त होती है और शनैः शनैः वह उसमें बोये गये आत्मतत्त्व के बीज को अपने अंदर विकसित कर लेता है।

शेख़ मुईनुद्दीन चिश्ती कहते हैं :

तन मयाने-ख़ल्क़ ओ जां नज़्दे-ख़ुदावँदे जहाँ,
तन गरिफ़्तारे-ज़मीन ओ रूह बर हफ़्त आसमां।

– दीवाने–ग़रीब नवाज़ (पृ.175)

(अर्थात, वे [संत–सत्गुरु] संसार में रहते हैं, लेकिन उनकी आत्मा हमेशा उच्चतम आत्मिक मंडलों में निवास करती है। शरीर के तंत्र में क़ैद रहते हुए भी, उनकी आत्माएँ ऊपर के मंडलों में उड़ान भरती हैं।)

मौलाना रूमी भी फ़र्माते हैं :

औलिया रा बर क़यासे-ख़ुद मगीर।
गरचिह् मानद दर नविश्तन शेर ओ शीर।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.58)

(अर्थात, किसी वली–औलिया को अपनी बुद्धि के स्तर पर मत परखो, क्योंकि वह जैसा दिखाई देता है, उससे वह बहुत अधिक ऊँचा होता है।)

सामान्यतः, प्रत्यक्ष रूप से सभी मानव एक ही जैसे दिखाई देते हैं, यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति का आंतरिक विकास अलग–अलग होता है। यह पृष्ठभूमि प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक पथ पर चलने में सहायता करती है तथा व्यक्ति द्वारा उठाए गए प्रत्येक क़दम का मापदंड निर्धारित करती है। इसी कारण प्रत्येक (लक्ष्य तक पहुँचने के लिए) अपना अपना समय लेता है।

मनुष्य के रूप में एक संत–सत्गुरु को पूरी तरह से नहीं परखा जा सकता। वह 'सत्' या सच्चाई का अथाह समुद्र है, जो कि सृष्टि के आदि से, युगों युगों तक, एक रस रहता है। जैसे कि परमात्मा की महानता के साथ हम पूरा न्याय नहीं कर सकते, वैसे ही हम परमात्मा के चुने हुए प्रतिनिधि के साथ भी पूरा न्याय नहीं कर पाते।

एक फ़ारसी कवि हमें बतलाता है :

ऐ बरतर अज़ क़यास ओ ख़यालओ गुमानओ वहम,
वज़ हरचिह् दीदा एम शुनीदेमओ ख़्वान्दा एम।
दफ़्तर तमाम गश्त ब-पायाँ रसीद उमर,
मा हमचुनाँ दर अव्वले-हर्फ़े तु मान्दा एम।

– नुकाते–दीवाने–शम्स तबरेज़ी (पृ.30)

(अर्थात, वह परमात्मा तर्क–वितर्क, बुद्धि, संकल्प, विचार, मनन और अनुमान के भी परे है। वह देखने, सुनने, समझने की इंद्रियों की पहुँच से बहुत परे है। ज़िंदगी भर कोई उसकी महिमा की गाथा गाता रहे, तो भी उसके कुछ अंश का भी वर्णन नहीं हो सकता।)

कबीर साहिब फ़र्माते हैं :

सब धरती कागद करूँ, लेखनि सब बनराय।
सात समुँद की मसि करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय।।

– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 14, पृ.2)

वह (सत्गुरु) रूहानियत का बादशाह होता है। हम, संसार की गंदगी में विचरने वाले कीड़े, उसको और उसकी बढ़ाई को नहीं जान सकते।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

गर बिगोयम ता क़यामत नअते-ऊ,
हेच आँ रा गायतो-मक़तअ व मज़ू।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.311)

(अर्थात, अगर मैं अनंत काल तक, परमात्मा के गुणानुवाद गाता रहूँ, फिर भी मैं मुश्किल से ही उनके बारे में कुछ कह पाऊँगा।)

जो कुछ भी हम उसके बारे में कहते हैं, वह बौद्धिक स्तर पर ही कहते हैं और बुद्धि का क्षेत्र बहुत तंग और सीमित है। इस स्तर पर हमारे सभी प्रयास उसे कोई श्रेय देने की बजाय, उसका निरादर ही करेंगे (क्योंकि वे उसे छोटा करके बतलायेंगे)।

गुरु नानक इसीलिये फ़र्माते हैं :

तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवन वडाई।
जो तू देहि सु कहा सुआमी मै मूरख्र कहणु न जाई।

– आदि ग्रंथ (बिलावल म॰1, पृ॰795)

उसको वर्णित करने के सर्वोच्च और सूक्ष्मतर बौद्धिक प्रयत्न भी ऐसे ही हैं, जैसे कि एक नन्हा बच्चा माता के आगे खड़ा होकर कहे, "ओ माँ! मैं तुम्हें जानता हूँ।" वह बच्चा जब अपने बारे में ही कुछ नहीं जानता, तो वह अपने माँ–बाप के बारे में भला क्या जान सकता है! माता के हृदय में जो बच्चे के प्रति गहरा प्रेम और स्नेह छुपा रहता है, बच्चे के मधुर तोतले शब्दों से उनका वर्णन नहीं हो सकता। हम भी सत्गुरु की शान को शब्दों में नहीं गा सकते, क्योंकि जो सभी बंधनों और सीमाओं से परे है, उसे हम सीमित बुद्धि द्वारा नहीं जान सकते।

वास्तव में हम अति भाग्यशाली हैं कि जब जब ऐसी महान आत्माएँ तथा संत–सत्गुरु संसार में प्रकट होते हैं, वे समय–समय पर, अपने बारे में स्वयं हमें बतला देते हैं। उनके दुर्लभ वचनों से हम उनकी महानता और उन शक्तियों के बारे में कुछ जान सकते हैं, जो उनके द्वारा कार्य करती हैं।

अनगिनत तरीक़ों– दृष्टांतों, क़िस्से कहानियों या और दूसरे तरीक़ों से, वे अपने बारे में हमें बतलाते हैं कि वे क्या हैं, उनका लक्ष्य (मिशन)

क्या है, वे कहाँ से आए हैं और प्रभु की सुयोजना को कैसे कार्यान्वित करते हैं।

हमें चाहिए कि हम उनके पास जायें और जो कुछ वे अपने बारे में हमें बतायें, उसे ध्यानपूर्वक सुनें।

दूसरा अध्याय

गुरु 'शब्द' है

(सत्गुरु 'शब्द-सदेह' है)

बाइबिल में जॉन के सुसमाचार इन स्मरणीय शब्दों से प्रारंभ होते हैं :

> आदि में शब्द था, शब्द प्रभु के साथ था, और शब्द ही प्रभु था। आरंभ में भी वही प्रभु के साथ था।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:1-2)

गुरु 'शब्द' है या 'शब्द'–सदेह है।

सुसमाचारों में कहा है :

> शब्द सदेह हुआ और हमारे बीच रहा।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

शब्द' या 'Word' केवल एक धारा है, परमात्मा या चेतनता के महान समुद्र की और इसी एक धारा से सृष्टि के सारे खंड–मंडल बने और यही इन सब का आधार है। जॉन के सुसमाचारों में हम आगे पढ़ते हैं :

> सभी चीज़ें उससे बनीं (अर्थात शब्द से बनीं) और उसके बिना कोई ऐसी चीज़ नहीं बनी, जो कि रची गई हो। उसमें जीवन था, और जीवन इंसानों की रोशनी था। और ज्योति अंधकार में चमकती है और अंधकार इसे जानता तक नहीं।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:2-5)

प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि ड्राइडेन अपनी कवितामयी कल्पना में इसे 'Harmony' (संगीत धारा) कह कर संबोधित करते हैं :

> संगीत, दिव्य संगीत से यह ब्रह्मांडीय ढाँचा निर्मित हुआ। सभी स्वरों में यह गुंजारित हुआ और इसकी स्वर लहरी मनुष्य में अपने शिखर पर पहुँची।
>
> – ड्राइडेन [John Dryden-- 'A Song for St. Cecilia's Day']

गुरुवाणी में हमें निम्न उल्लेख मिलता है :

सबदु गुरू सुरति धुनि चेला।।

– आदि ग्रंथ (रामकली म॰1, पृ॰943)

सबदु गुर पीरा गहिर गंभीरा बिनु सबदै जगु बउरानं।।

– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰1, पृ॰635)

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे।।
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे।

– आदि ग्रंथ (नट म॰4, पृ॰982)

तुलसी साहिब कहते हैं :

सुरति सिष्य सब्दै गुरू, मिलि मारग जाना हो।
लख आकास औंधा कूआँ, ता मैं सुरति समाना हो।

— घट रामायण, भाग 2 (पृ.176)

भाई गुरदास आत्मा के बारे में कहते हैं :

सबद गुरु गुरु जाणीऐ गुरमुखि होइ सुरति धुनि चेला।।

– वारां गिआन रतनावली (7:20)

इसी प्रकार संत कबीर भी कहते हैं :

गुरु तुम्हारा कहां है, चेला कहां रहाय।।
क्यों करके मिलना भया, क्यों बिछड़े आवे जाय।।

वे स्वयं ही उत्तर देते हैं :

गुरु हमारा गगन महं, चेला है घट माहे।।
सुरत शबद मिलना भया, बिछुड़त कबहूं नाहे।।

— कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 58, पृ.5)

सबद गुरू को कीजीऐ, बहुतक गुरू लबार।।
अपने अपने लोभ को, ठौर ठौर बटमार।।

— कबीर साखी संग्रह, भाग 2 (शब्द का अंग 11, पृ.93)

इसीलिए 'शब्द' समय के आदि से ही जगत्गुरु है।

जिनके हृदय पवित्र हैं, वे धन्य हैं, क्योंकि उनके अंदर ही सत्गुरु का 'शब्द' स्वयं को प्रकट करता है। यह 'शब्द' ही असली संत है और जीवित

मार्ग–दर्शक के रूप में काम कर सकता है। यह प्रभु की 'सक्रिय सत्ता' है और उन संत–सत्गुरुओं में, जो प्रभु से एकमेक होते हैं, भरपूर मात्रा में प्रकट होता है।

समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰4, पृ॰442)

जो शब्द की कमाई करता है, उसे संत या सत्गुरु कहा जाता है। जब तक कोई 'गुरु' लफ़्ज की महत्ता का अध्ययन नहीं कर लेता है, तब तक उसके सामने यह सत्य प्रकट नहीं होता है। यह लफ़्ज़ संस्कृत की धातु 'गृ' से बना है, जिसका अर्थ है– पुकारना या आवाज़ देना। अतः जो कोई अपने भीतर की आवाज़ को सदैव सुनता रहता है और श्रद्धापूर्वक उस आवाज़ से जुड़ा रहता है, और दूसरों को भी उसका अनुभव दे सकता है, उसे गुरुवाणी में 'गुरु' कहा गया है।

सो गुरु करउ जि साचु दृड़ावै।।
अकथु कथावै सबदि मिलावै।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰1, पृ॰686)

आगे,

नानक साचे कउ सचु जाणु।।
– आदि ग्रंथ (सिरी म॰1, पृ॰15)

कबीर साहिब फ़रमाते हैं :

साधु साधु सबही बड़े, अपनी अपनी ठौर।
सबद बिबेकी पारखी, ते माथे के मौर।।
– कबीर साखी संग्रह, भाग 2 (साध का अंग 29, पृ.119)

आगे,

गुरू गुरु में भेद है, गुरू गुरु में भाव।
सोई गुरु नित बंदीऐ, जो सबद बतावै दाव।।
– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (झूठे गुरु का अंग 6, पृ.12)

तुलसी साहिब भी फ़रमाते हैं :

सबद भेद साखी लखे, सोइ संत सुजाना हो।
अगम निगम को चीन्ह कै, बानी पहिचाना हो।

— घट रामायण, भाग 2 (पृ.176)

कबीर साहिब ने कहा है कि जो कोई अपने आप को संत–सत्गुरु कहलाते हैं, वे इतनी योग्यता रखने वाले हों कि हमें भी गुप्त 'शब्द' का अनुभव करा सकें, उसे हमारे अंदर प्रकट कर सकें।

भाई रे सोई सतिगुर संत कहावे।
नैनन अलख लखावै।।

— कबीर साहिब की शब्दावली, भाग 1 (सतगुर और संत महिमा 5, पृ.3)

सार बचन (बचन 13, शब्द 1) में कहा गया है :

गुरु सोई जो शब्द सनेही। शब्द बिना दूसर नहिं सेई।।
शब्द कमावे सो गुरु पूरा। उन चरनन की हो जा धूरा।।

सत्गुरु एक सच्चा 'वेद' है। वह सच्चे नाम (सतनाम),'शब्द' ध्वनि से अभिभूत है, उसका मूर्तरूप है और इस तरह से 'जीवन के अमृत रस' को अपने अंदर संजोये रहता है। वह 'शब्द' को बाँटता है, जो कि दिव्य मंडलों में जाने के लिए ('खुल जा सिमसिम' जैसी) कुंजी का काम करता है और उनमें सत्गुरु के पथ के तीर्थयात्रियों को प्रवेश प्राप्त कराता है।

ब्रह्मविद्या या थियोसोफ़िकल सोसायटी वाले इसे 'ख़ामोशी की आवाज़' ('Voice of the Silence') कहते हैं, जिसकी गुंजार एक मंडल से दूसरे मंडल तक लगातार सुनाई देती रहती है।

संतों की परिभाषा में, एक सच्चा संत वही है, जो 'शब्द' का अनुभव व शिक्षा–दीक्षा दे सके। बिना अनुभवी महापुरुष की सहायता के, किसी को भी 'शब्द' या 'नाम' की दात नहीं प्राप्त हो सकती। इसकी तुलना हम एक रस्सी की सीढ़ी से कर सकते हैं, जो सीधी परमात्मा तक पहुँचती है और सुरत इसे पकड़कर आसानी से प्रभु की ओर चढ़ लेती है।

सबदि मिलहि ता हरि मिलै सेवा पवै सभ थाइ।।

– आदि ग्रंथ (सिरी म॰3, पृ॰27)

आगे,

गुर महि आपु समोइ सबदु वरताइआ।।

सचे ही पतीआइ सचि समाइआ।

– आदि ग्रंथ (मलार वार म॰1, पृ॰1279)

और,

नानक आदि अंगद अमर सतिगुर सबदि समाइअउ।।
धनु धन्नु गुरु रामदास गुरु जिनि पारसु परसि मिलाइअउ।।

– आदि ग्रंथ (सवैये म॰5, पृ॰1407)

पवित्र बाइबिल में कहा गया है :

शब्द सदेह हुआ और हमारे बीच आकर रहा।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

हमें 'शब्द' के अनुभवी महापुरुष से ही सच्चे जीवन की प्रेरणा मिलती है। वह स्वयं 'सत् जीवन की धारा' के साथ जुड़ा होता है, जिससे कि सभी जीव जीवन पाते हैं। वह अहंकार रहित मंडल का निवासी होता है, 'शब्द–सदेह' होता है। काल या समय की सीमा से बहुत ऊपर उठकर, वह 'शब्द' के अंदर निवास करता है और 'शब्द' ही उसका अस्तित्व होता है। वह अमर जीवन प्राप्त होता है और जो कोई उससे संपर्क करे और उसकी शिक्षाओं और आदेशों पर चले, वह भी इसका अनुभव पा सकता है।

वर्तमान अवस्था में, मनुष्य की आत्मा माया के भारी बोझ से दबी हुई है। उसे यह भी ज्ञात नहीं कि वह एक 'आत्मा' है। 'शब्द' के अभ्यास से ही उसे अपनी महानता का अनुभव होता है और परम सत्य का पता चलता है। यह 'शब्द रूपी जीवन–सिद्धांत' हम सभी के अंदर पहले से मौजूद है, परन्तु प्रसुप्त अवस्था में है।

आत्मा ने इसको सुनना है, ताकि वह इसके ('शब्द') स्पर्श से अपनी बहुमूल्य आध्यात्मिक विरासत के प्रति चैतन्य हो जाए और उसे अपने अधिकारस्वरूप अपना ले।

आत्मा का 'शब्द' के साथ यह संबंध सत्गुरु के द्वारा ही जोड़ा जा सकता है, क्योंकि वह 'शब्द' सदेह होता है; कोई अन्य ऐसा नहीं कर सकता।

पराई अमाण किउ रखीऐ दिती ही सुखु होइ।।
गुर का सबदु गुर थै टिकै होर थै परगटु न होइ।।

– आदि ग्रंथ (सारंग वार म॰4, पृ॰1249)

(अर्थात, 'शब्द' सत्गुरु के नियंत्रण में होता है। केवल वही आत्मा को इंद्रियों से ऊपर खींचकर 'शब्द' को प्रकट कर सकता है।)

'शब्द' का यह सम्पर्क सत्गुरु की दयालुता भरी भेंट है। 'शब्द' जैसी असीम, महान तथा अनमोल दात की बराबरी चाहे कितने ही महान कार्य, जो देश–काल–निमित्त की सीमा के अंदर किए गये हों, नहीं कर सकते :

हमारे सभी शुभ कर्म फटे पुराने चिथड़ों के समान हैं।

– पवित्र बाइबिल (यशायाह 64:6)

और,

कर्मों के क़ानून के अनुसार कोई भी देहधारी अधिकारी नहीं है।

– पवित्र बाइबिल (रोमियों 3:20)

सत्गुरु यदि चाहे, तो अपनी असीम करुणा और दया से 'शब्द' की दात प्रदान कर सकता है।

जिस क्षण कोई असहाय बच्चा अपनी माता की तरफ़ जाने की कोशिश करता है, वह प्यार से उसकी तरफ़ दौड़ती है, कोमलता से उसे उठा लेती है और प्यार से अपने सीने से लगा लेती है।

घाल न मिलिओ सेव न मिलिओ मिलिओ आइ अचिंता।।
जा कउ दइआ करी मेरै ठाकुरि तिनि गुरहि कमानो मंता।।

– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰672)

इसका यह अभिप्राय नहीं कि कोई व्यक्ति प्रयत्न करने ही छोड़ दे। इसके विपरीत, उसे सत्गुरु के आदेशों के अनुसार पूरे प्रयत्न करते रहना चाहिए। फिर भी, सफलता केवल सत्गुरु की दया पर निर्भर करती है, क्योंकि प्रभु की कृपा किस पर कितनी और कैसे हो, इसका निर्णय केवल सत्गुरु करता है।

क्राइस्ट कहता है :

यदि तुम मुझे प्यार करते हो, तो मेरा कहना मानो।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 14:15)

इस मार्ग पर चलने के लिए सत्गुरु के कहे अनुसार जीवन बनाना अत्यंत आवश्यक है।

जिन कंउ सतिगुरु भेटिआ से हरि कीरति सदा कमाहि।।
अचिंतु हरि नामु तिन कै मनि वसिआ सचै सबदि समाहि।।
– आदि ग्रंथ (वडहंस वार म॰4, पृ॰592)

यद्यपि अनहद बानी या 'नाम' ('शब्द') हमारा जीवन है, फिर भी हम अपने आप उसे प्रकट नहीं कर या सुन नहीं सकते। उस तक पहुँचना मुर्शिदे–क़ामिल या पूर्ण सत्गुरु के द्वारा ही संभव होता है।

अनहद बाणी पूंजी।। संतन हथि राखी कूंजी।।
– आदि ग्रंथ (रामकली म॰5, पृ॰893)

बिनु गुर नामु न पाइआ जाइ।।
सिध साधिक रहे बिललाइ।।
– आदि ग्रंथ (माझ म॰3, पृ॰115)

'शब्द' संतों का भी जीवन आधार है और अन्य प्राणियों का भी। अंतर यह है कि संतों को 'शब्द' का चेतन अनुभव होता है, जबकि अन्य जीव बेख़बरी के अज्ञान की हालत में रहते हुए, इसके अनुभव से ख़ाली रहते हैं। संतों के अंदर केवल प्रभु–पुत्र होने का अनुभव ही नहीं होता, बल्कि वे असलियत में भी ऐसा ही जीवन जीते हैं, पर बाक़ियों में इस प्रकार का कोई विचार तक नहीं उठता।

क्राइस्ट कहता है :

मैं परमात्मा का पुत्र हूँ। मैं और मेरे पिता एक हैं। जो कुछ मैं कहता हूँ, उसे मेरे पिता कहलवाता है।
– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 10:30-37)

गुरुवाणी में भी हमें इसी तरह के संदर्भ मिलते हैं :

हरि सो किछु करे जि हरि किआ संता भावै।।
कीता लोड़नि सोई कराइनि दरि फेरु न कोई पाइदा।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰5, पृ॰1076)

पिता पूत एकै रंगि लीने।
– आदि ग्रंथ (भैरउ म॰5, पृ॰1141)

मौलाना रूमी हमें बतलाते हैं :

औलिया रा हस्त क़ुदरत अज़ इलाह,
तीर जस्ता बाज़ आरन्दश ज़ राह।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.189)

(अर्थात, औलिया अल्लाह का चलाया हुआ तीर भी लौटा सकता है।)

इसका यह अभिप्राय नहीं कि संत परमात्मा के अधिकार पर किसी प्रकार का प्रश्नचिन्ह लगाते हैं या अपनी एक समानांतर सरकार चलाते हैं, बल्कि, वे उसके प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं और उसके द्वारा नियुक्त किये गये होते हैं। संसार में परमात्मा उनके द्वारा ही अपना कार्य करता है।

वे अहम्भाव से उपराम होते हैं, इसलिए वे प्रभु सत्ता के उपयुक्त माध्यम बन जाते हैं। 'शब्द' के साथ गहराई से जुड़े होने के कारण, वे प्रभु से सीधे संदेश प्राप्त करते और उस तक संदेश पहुँचाते हैं।

पलटू घर में राम के, और ना करता कोय।
नाम समीपी संत हैं, वे जो करें सो होय।।
– पलटू साहिब की बानी, भाग 1 (पृ.14)

मौलाना रूमी इसके बारे में इस तरह से फ़रमाते हैं :

औलिया अतफ़ाले-हक़ अन्द ऐ पिसर,
ग़ायबी ओ हाज़िरी बस बा ख़बर।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 3, पृ.22)

(अर्थात, औलिया प्रभु का चुना हुआ होता है। उसे गुप्त या प्रत्यक्ष, प्रत्येक वस्तु की जानकारी होती है।)

फिर, परमात्मा संतों के द्वारा बोलता है :

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो।।
– आदि ग्रंथ (तिलंग म॰1, पृ॰722)

मनुष्य की शक्ल में प्रभु इस संसार में दुखी मानवता के लिये आता है और उस पर दया करते हुए, उस की कमियों और पापों की भारी ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले लेता है।

देखो, प्रभु तुम्हारे मानवीय रूप में उतर रहा है; दुष्कर्मियों के नाम पर जो दुष्कर्म व कष्ट किये जाते हैं, उन्हें और तुम्हारे सारे बुरे कामों को वह अपने पर ले लेता है और अपने सभी सदकर्मों

को वह तुम्हारे ऊपर डाल देता है, तुम्हारे अंदर भर देता है।

– ड्राइडेन [John Dryden- 'Religio Laici' - A Layman's Faith]

भूल के पुतले, इंसान के लिए एक जीवित सत्गुरु ही आशा है; उनके भटकते क़दमों के लिये वह मार्गदर्शक रोशनी है और पापियों को वह बचाने वाला है। असीम 'नाम' या 'शब्द' की सहायता से, जिसका वह विस्तृत भंडार है, वह जीवों को संसार सागर से सुरक्षित पार करा देता है तथा उन्हें शाश्वत जीवन प्रदान करता है।

अंतर में वह 'शब्द' से जुड़ा होता है और बाहरी रूप से वह एक अध्यापक या गुरु का काम करता है। वह जिज्ञासुओं को इस भौतिक मंडल में आध्यात्मिक निर्देश देता है, और उसके बाद उन्हें वह सूक्ष्म व कारण मंडलों में और उनके परे ले जाता है। जैसे–जैसे जीव आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होता है, वह हर कदम पर उसका मार्ग–निर्देशन करता है। वह तब तक विश्राम नहीं करता, जब तक साधक को उसके निजघर, जहाँ से 'शब्द' (जो वह स्वयं है) का निकास हुआ, नहीं पहुँचा देता।

जिसने सतपुरुष को जान लिया, वही सत्गुरु होता है। वह काल और महाकाल, प्रलय और महाप्रलय, दोनों के प्रभाव से परे होता है और जिज्ञासु को भी इस अवस्था तक पहुँचाने में समर्थ है। इस स्तर की योग्यता का गुरु ही जीवों को बचा सकता है, अन्य कोई नहीं।

सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ।।
तिस कै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰286)

यह कहना अधिक उचित और शालीन होगा कि प्रभु मानवता को बिना रास्ता दिखाये, नहीं छोड़ता।

तीसरा अध्याय

गुरुओं के स्तर

गुरु चार प्रकार के होते हैं : पिता, माता, आचार्य या शिक्षक और अंत में सत्गुरु (मुर्शिदे–क़ामिल)।

इन सब में से, 'सत्गुरु' महानतम है, क्योंकि केवल वह आध्यात्मिक शिक्षा देता है। जो सांसारिक बुद्धिमता में निपुण हैं, उसे 'आचार्य' या प्राध्यापक कहा जाता है, क्योंकि वह हमें सामाजिक व्यवहार व सदाचारी जीवन के नियम सिखाता है।

सत्गुरु को 'संत–सत्गुरु' भी कहा जाता है। अपने शिष्यों से उसका संबंध केवल आध्यात्मिक है, क्योंकि वह उनकी आध्यात्मिक उन्नति के लिये चिंतित रहता है और उसे सांसारिक मसलों से कोई मतलब नहीं होता।

आध्यात्म के दृष्टिकोण से, गुरुओं की श्रेणियाँ इस प्रकार है :

– साध–गुरु
– संत–सत्गुरु, और
– परम संत–सत्गुरु

साध वह है जो कि त्रिकुटी (ओंकार) के मंडल से आगे जाता है, जो सूफ़ियों के अनुसार 'लाहूत' और इस्लामी दर्शन में 'हू' होता है। उसने आत्मा को उसके पवित्र नैसर्गिक शान में देखा है, जो कि सभी आवरणों से मुक्त होकर अब त्रिगुणातीत हो चुकी है (सत्, राजस और तामस, तीनों गुणों से परे– जिनमें कि सभी मानव अपने प्राकृतिक और जन्मजात गुणों के अनुसार काम करते हैं), पंच तत्त्वों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश, जिनसे भौतिक संसार बना है), 25 प्रकृतियों (तत्त्वों की विभिन्न मात्रा में सूक्ष्मावस्था) से परे, मन और पदार्थ से भी परे हो चुकी है।

संक्षेप में, वह आत्मज्ञान या आत्मा की कला व विज्ञान में निपुण है, और जब चाहे, अपनी आत्मा को विभिन्न कोशों से आज़ाद करा सकता है, जिनमें कि यह अनमोल रत्न के जैसी बंद रहती है।

साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰272)

'साधु' आत्म–निरीक्षण द्वारा अपने आपका, अर्थात 'आत्मा' के असली रूप का अनुभव करते हैं। वे जान चुके होते हैं कि आत्मा परमात्मा की अंश है और फिर वे प्रभु–ज्ञान के लिये प्रयत्न करते हैं।

'संत' वह है, जो न केवल आत्म–ज्ञान में, बल्कि प्रभु–ज्ञान में भी निपुण होता है। वह स्थूल, सूक्षण और कारण मंडलों से बहुत आगे तक जाता है। क्योंकि वह 'सत्' का गुरु है, उसका निवास विशुद्ध आध्यात्मिक मंडल में है, जो तकनीकी रूप से 'सचखंड' या 'मुक़ामे–हक़' कहा जाता है।

एक 'परम संत', ऐसे 'सत्' का महान गुरु होता है, जो सभी वर्णन और कथन से परे है। वह प्रभु की विशुद्ध अवस्था से एकमेक हो चुका होता है, जिसे कबीर ने 'अनामी' तथा औरों ने 'निराला', 'महादयाल' या 'स्वामी' कहकर पुकारा है ।

एक संत या परम संत के बीच कोई ख़ास अंतर न होकर, सिर्फ़ नाममात्र का ही अंतर होता है।

लेकिन एक साध, संत या परमसंत तब तक गुरुपद पर कार्य नहीं कर सकता, जब तक उसे प्रभु की तरफ़ से ऐसा काम करने की आज्ञा न हो। जो आध्यात्मिक कार्य करने का अधिकार रखता है, वह साध–गुरु, संत–गुरु या परम संत–गुरु बन जाता है।

एक समय पर अनेक साध, संत या परम–संत हो सकते हैं, परन्तु जब तक आध्यात्मिक कार्य करने का अधिकार परमात्मा की ओर से न मिले, उनमें से कोई भी अपनी ओर से गुरुपद या आध्यात्मिक नेतृत्व का काम नहीं कर सकता।

इसलिये साध, संत और परम संत शब्दों का अर्थ 'गुरु' शब्द से काफ़ी अधिक विस्तृत है; गुरु शब्द सिर्फ़ आध्यात्मिक शिक्षक के लिए प्रयुक्त होता है, जबकि बाक़ी विभिन्न स्तरों के आध्यात्मिक अनुभवी होते हैं।

गुरु को प्रभु की तरफ़ से अधिकार प्राप्त होता है और वह प्रभु के निर्देशों पर काम करता है, जैसे कोई वाइसरॉय अपने सम्राट के आदेशों पर कार्य करता है।

फिर, गुरु दो तरह के होते हैं :

1. स्वतः संत–सत्गुरु : वे जन्म से ही संत होते हैं और संसार में सीधे प्रभु से परवाना लेकर आते हैं– उदाहरण के लिये कबीर साहिब और गुरु नानक। वे आत्म–ज्ञान का काम छोटी आयु से ही आरम्भ कर देते हैं। उन्हें किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वे सर्वोच्च मंडलों से इसी लिये आते हैं। जब ऐसी हस्तियाँ आती हैं, तो संसार में आध्यात्मिक ज्योति की बाढ़ आ जाती है और इस काम को आगे बढ़ाने के लिये वे गुरुमुख गुरुओं की परम्परा स्थापित कर देते हैं। समय बीतने के साथ–साथ, आडंबर तत्त्वज्ञान पर हावी हो जाता है और धीरे–धीरे आध्यात्मिकता का पूर्णतयाः लोप हो जाता है।

फिर कोई अन्य महापुरुष आता है और इस पुरातन से पुरातन विज्ञान को, युग की ज़रूरतों के अनुसार, ताज़ा करता है। इस तरह से आत्मज्ञान की प्यासी आत्माओं के लिये पुरानी शराब फिर से बँटने लग जाती है। ऐसे महापुरुष समय–समय पर, विभिन्न देशों और लोगों के बीच में प्रकट होते रहते हैं।

2. स्वतः संतों के अतिरिक्त ऐसे संत हैं, जो किसी संत–सत्गुरु के नेतृत्व में पूरी श्रद्धा और आध्यात्मिक अनुशासन में रह कर आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त करते हैं और उन्हें गुरु पद पर काम करने का अधिकार मिल जाता है।

उनकी आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पहले से ही भरपूर और फल देने लायक होती है, और केवल नाममात्र के लिए वे मौजूदा जन्म में पूर्ण होते दिखाई देते हैं। गुरुमुख कई जन्मों से पूर्णता की ओर अग्रसर होते हुए हैं, और मौजूदा जीवन में पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।

कह कबीर हम धुर के भेदी लाए हुकम हज़ूरी।।

गुरु नानक के बारे में बतलाते हुए भाई गुरुदास कहते हैं :

पहिलां बाबे पाया बख़्शश दर पिच्छों दे फिरि घाल कमाई।।
– वारां गिआन रतनावली (1:24)

संक्षेप में, पहली प्रकार के संत तो अधिकार लेकर आते हैं और दूसरों ने यहाँ पर रहकर अधिकार प्राप्त करते हैं। लेकिन उन दोनों की महानता में, उनके कार्य की प्रकृति और क्षेत्र में, काम करने की विधि में कोई अंतर नहीं है। इनमें से हर एक को समान अधिकार प्राप्त हैं और वह प्रभु की योजना को समय और लोगों की आवश्यकता के अनुसार, कार्यान्वित करता है। लेकिन शेष, जो इस अवस्था का दम भरते हैं और दंभ से गुरु बनते हैं, वे न केवल अपने आप को ठगते हैं, बल्कि जनता को भी ग़लत दिशा दिखाते हैं। इस श्रेणी के लोगों में वे आते हैं, जो या तो स्वार्थी और लालची हैं या फिर नाम और प्रसिद्धि के पीछे। अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये वे सीधे–साधे सत् के जिज्ञासु लोगों को विभिन्न उपायों से ठगते हैं।

इसी छल–कपट के कारण गुरुपद को लोग घृणा की दृष्टि से देखने लगे हैं। और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि लोग आध्यात्मिक विज्ञान को 'मृग–तृष्णा' या 'मूर्खों का स्वर्ग' कह कर निंदा करते हैं।

चौथा अध्याय

गुरु : एक या अनेक

'शब्द' (आदि शब्द धारा) सारे संसार का अकेला गुरु है और सुरत (व्यक्तिगत चेतना) अकेली शिष्या है, क्योंकि दूसरी पहले के बिना नहीं रह सकती। वास्तव में, यहाँ एकता का सिद्धांत है, क्योंकि प्रभु एक है, यद्यपि उसने स्वयं को अनेक रूपों में प्रकट किया है।

लेकिन, ज्यों ही हम उलटी तरफ़ देखते हैं और विभिन्न रूपों से भरे संसार की तरफ मुड़ते हैं, तो हमें एक ध्रुव तारा दिखाई देता है जो स्वर्ग की ज्योति को परावर्तित कर रहा होता है।

ऐसा पवित्र इंसान (शब्द–देहधारी, प्रभु–मानव), जिसे जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक निर्देश देने का अधिकार होता है, वह भी 'शब्द' के जैसे ही गुरु होता है, क्योंकि वह स्वयं 'शब्द–सदेह' होता है और 'शब्द' का व्यापारी होने के नाते, वह खुले दिल से, जिसे चाहे उसे यह निधि बाँटता है।

कबीर अपने बारे में कहते हैं :

कह कबीर हम धुर के भेदी लाए हुकम हजूरी।।

जब गुरु नानक वेणी नाड़ी (अंतर में अमृत की धारा) पर गहन ध्यान में थे, तो उन्हें भी आध्यात्मिक निर्देश देने के ऐसे ही अधिकार प्राप्त हुए थे।

वे दोनों ही परम संत–सत्गुरु थे।

कबीर साहिब बनारस के पास लहरताला तालाब के किनारे सन् 1398 ईस्वी में प्रकट हुए और सन् 1518 ई॰ में मगहर में ज्योति–ज्योत समाये। गुरु नानक तलवंडी में सन् 1469 ई॰ में प्रकट हुए और 1539 ई॰ में करतारपुर में उन्होंने अंतिम समाधि ली। इस तरह वे दोनों 49 वर्ष के लगभग सन 1469 ई॰ से 1518 ई॰ तक समकालीन रहे। इसी तरह से शम्स तबरेज़ और

मौलाना रूमी कुछ समय के लिये समकालीन रहे। फिर गुरु अगंददेव जी व दादू साहब 1504 ई॰ से 1552 ई॰ तक समकालीन रहे। इसी तरह गुरु अर्जन देव और धर्मदास जी सन् 1561 ई॰ से 1606 ई॰ तक समकालीन रहे।

इन उदाहरणों से प्रतीत होता है कि एक समय में एक से अधिक गुरु हो सकते हैं, लेकिन आध्यात्मिक पूर्णता के लिये एक व्यक्ति एक से अधिक गुरु नहीं रख सकता। यदि दीक्षा देने के पश्चात् गुरु के ज्योति–ज्योत समा जाए, तो भी इससे कोई अंतर नहीं पड़ता।

एक बार जब वह दीक्षा दे देता है, तो सत्गुरु का सूक्ष्म (नूरी) स्वरूप शिष्य के अंदर बस जाता है और तभी से वह शिष्य का आदर्श हो जाता है और उसके निर्देश धीरे–धीरे फलने–फूलने लगते हैं।

पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति नहीं जो संत–सत्गुरु द्वारा बोए गए 'नाम' के बीज को निष्फल कर सके। सत्गुरु कभी नहीं मरता। वह अन्य लोगों की तरह शरीर तो छोड़ सकता है, लेकिन वह शरीर के अतिरिक्त और कुछ भी है। वह एक आदर्श है, एक जीवित नाद–ध्वनि है या जीवन–तत्त्व है, जिससे सम्पूर्ण ससांर को जीवन और प्रकाश मिलता है।

उस के ज्योति–ज्योत समाने के बाद जो गुरुमुख गुरु पद का कार्य देख रहा होता है, उसके सत्संग से लाभ उठाया जा सकता है और किसी कठिनाई के होते उस की सलाह ली जा सकती है। फिर भी, यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि किसी भी कारण से सत्गुरु को बदलना नहीं चाहिए।

सत्गुरु, जिसने आत्मा को नामदान की दीक्षा प्रदान की है और जिसकी उसने भक्ति करने की प्रतिज्ञा की है, उसके प्रति निष्ठा की यही माँग है कि वह सत्गुरु की आगे भी आध्यात्मिक मार्गदर्शन व निर्देश देने की समर्था को पहचानें, चाहे वह अब भौतिक जगत को छोड़कर, आध्यात्मिक मंडलों में ही क्यों न कार्य कर रहा हो।

पाँचवाँ अध्याय

वक़्त का गुरु

समय का गुरु वह जीवित महापुरुष है, जो अपने अनुयायियों को आध्यात्मिक निर्देश दे रहा है। लेकिन बीते समय के सभी गुरु, गुज़रे हुए या पुरातन गुरु हैं। उनमें से प्रत्येक को अपनी भूमिका पूरी करनी थी। पुरातन गुरुओं की शिक्षाएँ, ज़मीन में हल जोतने के समान हमारे अंदर परा–विद्या सम्बंधी विषयों के प्रति रुचि उत्पन्न करती हैं। उन में से प्रत्येक जीवित गुरु की आवश्यकता पर ज़ोर देते हैं और अपने आध्यात्मिक अनुभवों का लेखा–जोखा प्रस्तुत करते हैं। उनके उपदेशों से फिर हमें इस तलाश में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। हमारी आंतरिक इच्छा बलवती हो जाती है और हम मजबूर हो जाते हैं कि किसी ऐसे महापुरुष की तलाश करें, जो हमें उस प्रभु की ओर ले जा सके।

लेकिन, आध्यात्मिक निर्देश देने का और मार्गदर्शन करने का कार्य वास्तव में जीवित सत्गुरु द्वारा ही किया जाता है। वह उच्चतर चेतना से जुड़ा रहता है, और जीवों को अपने जीवन का अंशदान (जीयादान) करता है। आध्यात्मिकता न तो ख़रीदी जा सकती है और न ही सिखाई जा सकती है– उसे तो किसी संत–सत्गुरु की 'आँखों' से, जिनमें कि वह प्रभु–सत्ता प्रकट रहती है, छूत की बीमारी की तरह से पकड़ा ही जा सकता है। जैसे कि ज्योति से ज्योति मिलती है, इसी प्रकार जीवन से ही जीवन मिलता है और एक आत्मा, जो शरीर के बंधनों में क़ैद है, वह किसी ऐसी महान आत्मा द्वारा ही मुक्त कराई जा सकती है, जो स्वयं मन–माया की क़ैद से आज़ाद हो। आध्यात्मिक प्रशिक्षण का केवल यही एक मार्ग है, अन्य कोई नहीं।

किसी जीवित संत–सत्गुरु के बिना, बंधन से आत्मा की मुक्ति का कोई अन्य मार्ग नहीं है।

मौलाना रूमी इसलिये ज़ोर देकर यह उद्घोषित करते हैं :

मगिसल अज़ पैग़म्बरे-अय्यामे-ख़्वेश,
तकिया कम कुन बर फ़नो ओ बर गामे-ख़्वेश।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 4, पृ.63)

(अर्थात, अपनी पढ़ाई–लिखाई या चतुराई का विश्वास मत करो। जीवित संत–सत्गुरु के भरोसेमंद सहारे को कभी मत छोड़ना।)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद साहिब भी फ़रमाते हैं :

जो व्यक्ति वक़्त के इमाम (जीवित सत्गुरु), अल्लाह के प्रतिनिधि (पैग़ंबर), संपूर्ण मार्गदर्शक के पास पूरी ईमानदारी के साथ नहीं पहुँचता, उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता।

हज़रत मौलाना रूम फ़रमाते हैं :

दर ख़ुदाए मूसा ओ मूसा गरेज़,
आबे-ईमां रा ज़ फ़िरऔनी मरेज़।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.107)

(अर्थात, मूसा या सत्गुरु की कृपा द्वारा परमात्मा से सम्बंध स्थापित करो और मात्र अहंकार के पानी में व्यर्थ ही बहते न जाओ।)

एक जीवित सत्गुरु की अनुपस्थिति में व्यक्ति भक्तिभाव का विकास नहीं कर सकता, जो कि आध्यात्मिक मार्ग के लिए अत्यंत आवश्यक है। जिस व्यक्ति या चीज़ को हमने कभी देखा नहीं, जिसके बारे में हमें कोई अंदाज़ा भी नहीं है, उसके प्रति कोई भक्तिमय मोह हो ही नहीं सकता। स्वयं 'मोह' शब्द दर्शाता है कि कोई वस्तु है, जिससे 'मोह' हो सकता है।

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि जीवित सत्गुरु के पास जाने की ज़रूरत, जिसपर कि गुरुवाणी में बहुत जोर दिया गया है, वह सिक्खों के दस गुरुओं तक ही सीमित थी, परन्तु ऐसी कोई बात नहीं है। सत्गुरुओं की शिक्षाएँ सारी मानव जाति के लिए थीं और सारे ज़मानों के लिये थी। उनका संबोधन सार्वभौमिक होकर, किसी वर्ग विशेष या समय विशेष के लिए नहीं था।

परथाइ साखी महा पुरख बोलदे साझी सगल जहानै।

– आदि ग्रंथ (सोरठ वार म॰4, पृ॰647)

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे।।
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे।।

– आदि ग्रंथ (नट म॰4, पृ॰982)

इस संदर्भ में भाई गुरुदास जी फ़र्माते हैं :

बेद ग्रंथ गुरु हट है, जिस लग भवजल पार उतारा।।
सतिगुर बाझ न बुझीऐ जिच्चर धरे न प्रभु अवतारा।।

– वारां गिआन रतनावली (1:17)

आध्यात्मिक रहस्यों का पूरा वर्णन लिखने में आ नहीं सकता, क्योंकि आतंरिक रास्ते की अपनी रुकावटें और कठिनाइयाँ हैं। सत्गुरु कई तरीक़ों से अपने सूक्ष्म ज्योतिस्वरूप में, मंडल से मंडल तक बढ़ने में आत्मा की सहायता करते हैं। पुरातन सत्गुरुओं द्वारा आंतरिक व बाहरी सहायता तथा मार्गदर्शन का यह काम नहीं किया जा सकता।

'गुरुवाणी' और 'वाणी' में बहुत अंतर है। पहले शब्द से तात्पर्य उन गुरुओं के कथनों से है, जो पवित्र धर्मग्रंथों (विशेष करके गुरु ग्रंथ साहिब में) में निहित हैं, जबकि दूसरे से तात्पर्य उस अमर 'शब्द–धारा' से है, जिसे कभी–कभी 'गुरु की वाणी' कहा जाता है और जो कि सारी सृष्टि में गुंजायमान है। यह परमात्मा से उत्पन्न होती है और वही उसका अनुभव भी दे सकता है। वाणी ('नाम' या 'शब्द') चारों युगों में बजती रही है और 'सत्' का संदेश देती आई है।

अनाम और अरूप शब्द, नाम और रूप धारण करता है और हमारे बीच निवास करता है। पवित्र सुसमाचारो में हमें निम्न कथन मिलता है :

'शब्द' सदेह हुआ और हमारे बीच आकर रहा।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

जब तक प्रभु किसी इंसानी चोले में आकर हमारे बीच न रहे, हम उसे जान नहीं सकते। धर्मग्रंथों के उपदेश, पुरातन व कलात्मक लफ़्ज़ों के भारी बोझे से दब कर, तब तक सीलबंद रह जाते हैं, जब तक कोई अनुभवी महापुरुष, अपने आध्यात्मिक अनुभवों तथा आत्म–विज्ञान के आधार पर, इन धर्मग्रंथों का वास्तविक अर्थ हमें न समझाए।

पूर्ववर्ती महापुरुषों की साधारण प्रतीत होने वाली शिक्षाएँ भी हमें सही संदेश नहीं दे पातीं, जब तक कि कोई अनुभवी महापुरुष आकर हमें उनकी असली महत्ता न बतलाये और हमें वही अनुभव प्रदान न करे, जोकि धर्मग्रंथों में वर्णित हैं।

अपना जीयादान देकर, वे आत्मा को जीवन प्रदान करते हैं, जो कि शरीर में मन और माया के बोझ के नीचे दबी रहती है। चतुर मार्गदर्शक की भाँति, वे अपने अनोखे तरीक़ों से, आत्मा को नई दिशा प्रदान करते हैं।

उसके पश्चात, वे उस आत्मा को आश्चर्यजनक दिव्य मंडलों में ले जाते हैं, उसके लिये 'शब्द–रूपी' जहाज़ का प्रबंध करते हैं और उस आत्मा को उस जहाज़ में बिठा कर स्वयं उसका प्रभु की ओर चालन करते हैं। प्रतिदिन वे आत्मा को दुर्गम घाटियों से बचाते हैं, उसे नए–नए क्षेत्रों में ले जाते हैं, और उसे अद्‌भुत आनन्द का अनुभव प्रदान करते हैं, जिनका वर्णन भी किया नहीं जा सकता।

एक जीवित सत्गुरु यह सब कुछ, बल्कि इससे भी बहुत अधिक, कार्य करता है।

सिक्ख मत के इतिहास में हम पाते हैं कि पावन ग्रंथ साहिब का संग्रह पहली बार पंचम गुरु, गुरु अर्जनदेव जी महाराज ने किया। बहुचर्चित व प्रसिद्ध कहावत 'बाणी गुरु, गुरु है बाणी' - आदि ग्रंथ (नट म॰5, पृ॰982) (जिसका अर्थ माना जाता है कि आगे गुरुओं की ज़रूरत नहीं), के बावजूद आगे आए सिक्ख गुरुओं ने लोगों को 'सत्' के साथ जोड़ने का काम जारी रखा, और आज भी ख़ालसा (पवित्र आत्मा), जिनके अंदर पूर्ण ज्योति जगी है, सत् के जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक निर्देश देने का और आंतरिक अनुभव प्रदान करने का कार्य कर रहे हैं।

गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि हम सभी जागृत ज्योति के उपासक हैं। ख़ालसा के बारे में वे फ़र्माते हैं :

पूरन जोत जगै घट मै तब ख़ालस ताहि नख़ालस जानै।।

– दसम ग्रंथ (33 सवैये, पृ॰712)

आगे वे फ़र्माते हैं :

ख़ालसा मेरौ रूप है ख़ास। ख़ालसा में हौं करो निवास।।...
ख़ालसा मेरा पिंड पुरान। ख़ालसा मेरी जान की जान।।...
ख़ालसा मेरो सत्गुरु पूरा। ख़ालसा मैरो साजन सूरा।।...
मैं रंच न मिथ्या भाखी। पारब्रह्म गुरु नानक साखी।।...

– सरबलोह ग्रंथ (ख़ालसा महिमा)

छठा अध्याय

गुरु की आवश्यकता

निराकार परमात्मा, 'शब्द' या 'नाम' के रूप में समस्त विश्व में व्याप्त हैं। परन्तु हम तब तक अपने को धन्य नहीं महसूस कर सकते, जब तक अपने अंतर में उसका अनुभव न पा लें।

जैसे बिजली सारे वातावरण में व्याप्त है, लेकिन जब तक व्यक्ति बिजली के स्विच के पास न आये, जो कि बिजलीघर से जुड़ा हो, तब तक वह उसका लाभ नहीं उठा सकता।

जब एक बार यह संबंध स्थापित हो जाता है, तो बिजली हमें प्रकाश देती है, गर्म या ठंडी हवा– जैसी हम चाहें, देती है, और अनंत तरीक़ों से हमारे घर की सफ़ाई में, खाना पकाने में और इसी तरह से अन्य कामों में हमारी सहायता करती है। यह बड़े बड़े औद्योगिक सामानों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है और ऐसे ऐसे काम करती है, जो हज़ारों व्यक्ति मिलकर भी नहीं कर सकते।

ठीक इसी तरह से, जब आदमी किसी ऐसे मानवीय केन्द्र या स्तंभ तक पहुँच जाये, जहाँ परमात्मा की ऊर्जा 'शब्द' के रूप में प्रकट है, तभी व्यक्ति वास्तव में धन्य हो सकता है और रूहानियत की भरपूर फ़सल प्राप्त कर सकता है। संत, अवतार, पैग़म्बर तथा सत्गुरु ऐसे ही मानवीय स्तंभ हैं, जिनसे प्रभु की ज्योति, जीवन तथा प्रेम प्रसारित होते रहते हैं।

वे परमात्मा के ज्योति पुत्र होते हैं और अंधकार में भटकते संसार को ज्योति देने के लिये आते हैं। वे शब्द सदेह होते हैं या दूसरे शब्दों में, वे संसार में चलते–फिरते प्रभु होते हैं।

> प्रभु के प्यारे पवित्र व्यक्ति, वही कुछ बोलते हैं जो कुछ प्रभु का शब्द उन्हें कहने को प्रेरित करता है।
>
> – पवित्र बाइबिल (II पतरस 1:21)

प्रभु की आत्मा मेरे द्वारा बोली और उसका शब्द मेरी जिह्वा पर था।

– पवित्र बाइबिल (II शमुएल 23:2)

आपका वचन मेरे पैरों के लिये दीया और मेरे रास्ते के लिये उजियारा है।

– पवित्र बाइबिल (भजन–संहिता 119:105)

अतः सत्गुरु या सत् का गुरु वह स्तंभ है, जिसके द्वारा प्रभु की सत्ता, उसकी इच्छा के अनुसार, संसार में कार्य करती है। उस महान अज्ञेय, अगोचर प्रभु का सबसे सूक्ष्म स्वरूप 'शब्द' ही है। किसी सत्स्वरूप महापुरुष के द्वारा ही 'शब्द' के साथ सम्पर्क स्थापित करना सम्भव है।

स्थूल से हम सूक्ष्म की ओर जाते हैं। 'सत्गुरु' और उसका 'शब्द' लक्ष्य तक पहुँचने के साधन हैं। वे ही आत्मा को प्रभु की तरफ़ ले जा सकते हैं। हमारे लिये सत्गुरु प्रभु के रहस्य को हल कर देते हैं और हमें मन और माया के बंधनों से मुक्त कर देते हैं।

उसके लंबे मज़बूत हाथ आत्मा को शरीर और मन की जकड़नों से बाहर निकालते हैं और उसे 'शब्द' से जोड़ कर चेतन कर देते हैं।

वह 'ज्योतिर्मय संगीत'(शब्द) आत्मा को उस स्रोत या मंडल की ओर ले जाता है, जहाँ से कि उसका निकास होता है। 'सत्गुरु' और 'शब्द' अलग–अलग नहीं हैं, बल्कि एक ही वस्तु के दो पक्ष हैं।

क्योंकि गुरु को स्थूल मंडल में कार्य करना होता है, उसे एक स्थूल शरीर ग्रहण करना पड़ता है, जिसके बिना आध्यात्मिक निर्देश नहीं दिए जा सकते। लेकिन ज्यों ही वह मानवीय आत्मा को विभिन्न आवरणों में से बाहर निकालता है, वह स्वयं भी सूक्ष्म रूप धारण कर लेता है– जो कि ज्योतिर्मय और देदीप्यमान है।

जब तक मानवीय आत्मा सत्गुरु से एकमेक न हो जाये, यह काम चलता रहता है। यही वह महान उद्देश्य है, जिसे पूरा करने के लिये संत–सत्गुरु इस निम्नतम मंडल में आते हैं, जो कि अनगिनत कष्ट और दुखों से भरा हुआ है। सत्गुरु 'प्रभु की मुक्तिदायिनी कृपा' यानी 'शब्द' से लैस होता है, जिसे 'Word', 'नाद', 'वाणी' या 'कलमा' आदि अनेक नामों से संबोधित

किया जाता है। इसलिए सत्गुरु उन आत्माओं को बचा लेता है, जो मुक्ति के लिए तैयार होती हैं और वे आत्माएँ उसकी बात मान कर, उसके आदेशों का पालन करके, अपनी मुक्ति का पथ प्रशस्त कर लेती हैं।

यद्यपि प्रभु की सत्ता प्रत्येक स्थान पर विद्यमान है, फिर भी हम उसके विषय में कुछ नहीं जान सकते, जब तक कि वह परमात्मा स्वयं किसी इंसानी चोला धारण करके हमारे बीच न रहे।

दूध को मथ कर मक्खन निकाल लेने से और पत्थरों को रगड़ कर आग उत्पन्न कर लेने से ही हम जान सकते हैं कि दूध में मक्खन और पत्थरों में आग छिपी रहती है। इसी कारण 'शब्द' सदेह होकर हमारे बीच निवास करता है, जैसा कि पवित्र सुसमाचार हमें बताते हैं।

जब आत्माएँ इस भौतिक जगत में अपने लंबे बनवास से दुखी हो उठती हैं और उसे काल द्वारा बनाए गए देश–काल–निमित्त के बंधनों से मुक्त होने का कोई रास्ता नहीं सूझता, तो वह दीन होकर वापिस घर जाने के लिए पुकार करती हैं। उनकी दिली पुकार से दीन–दयाल प्रभु में एक हिलोर उठती है और प्रभु संत–सत्गुरु की शक्ल में दुखी आत्माओं को उबारने के लिए इस संसार में आ जाता है।

एक जीवित सत्गुरु ही यह काम कर सकता है, अन्य कोई नहीं। 'मौन की ध्वनि' ('शब्द') के द्वारा ही वह परमात्मा बोलता है। उसका यह बिना लिखा क़ानून और अनबोली भाषा है।

धर्मग्रंथ, कितने ही पवित्र और प्रामाणिक क्यों न हों, उनमें केवल आत्मिक मंडलों के उद्धरण और लेखक के अनुभव ही लिखे गए हैं। पर वे हमें न तो आध्यात्मिक विद्या का निजी अनुभव दे सकते हैं और न ही आत्म–पथ पर हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं।

सत्गुरु का 'शब्द' आध्यात्मिक मंडलों के लिये 'खुल जा सिमसिम' के समान एक कुंजी का कार्य करता है। उसके पास वह चाबी है, जो प्रभु की बादशाहत का ताला खोलती है, जो अभी हमारे लिये एक खोए हुए प्रदेश के समान है। क्योंकि उसे अपनी आत्माओं से प्रेम है, इसलिए वह एक गडरिये के रूप में आकर इस संसार के दुख उठाता है और जहाँ–तहाँ खोई भेड़ रूपी आत्माओं को ढूँढता फिरता है।

मैं संसार की ज्योति हूँ। जो मेरा अनुसरण करेगा, उसे अंधकार में चलना नहीं पड़ेगा, बल्कि उसे जीवनदाता ज्योति की प्राप्ति होगी।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 8:12)

सातवाँ अध्याय

पुरातन संत

आज, यदि कोई अस्वस्थ है तो वह आयुर्वेद के प्रणेता, धन्वंतरी जी से स्वास्थ्य संबंधी सलाह नहीं ले सकता; न ही कोई राजा सोलोमन से अपने मुकद्दमे का निर्णय करा सकता है तथा न ही कोई स्त्री ख़ूबसूरत एडोनिस से विवाह करके संतान उत्पन्न कर सकती है।

इसी प्रकार, जो संत भूतकाल में समय समय पर अवतरित हुए और अपने संपर्क में आने वालों को आध्यात्मिक दौलत से लाभान्वित कर गए, वे वर्तमान पीढ़ी के लिये कुछ नहीं कर सकते। प्रत्येक का अपना अपना कार्यकाल रहा, जिसकी पूर्ति के पश्चात उन्होंने अपने उत्तराधिकारी को अध्यात्म के प्रसार–प्रचार का कार्य सौंप दिया। मनुष्य को मनुष्य ही सिखा सकता है और प्रभु, जीवित संतों के द्वारा ही अपना कार्य पूरा करता है।

> निश्चय ही प्रभु कुछ नहीं करेगा, परन्तु वह अपने गुप्त भेदों को अपने सेवादारों- पैग़म्बरों के समक्ष प्रकट कर देता है।
>
> – पवित्र बाइबिल (ओमोस 3:7)

कुछ लोग सोचते हैं कि पिछले महात्मा आध्यात्मिक मंडलों में निवास करते हैं और वे अब भी जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक लाभ दे सकते हैं। आइये, हम देखें कि तर्क के सामने यह बात कहाँ तक ठीक उतरती है :

1. प्रत्येक संत का उसके जीवन का अपना अपना मिशन होता है और वह शिक्षा देने के लिए निश्चित शासन लेकर आता है। ज्यों ही उसका कार्य संपूर्ण होता है, वह इस भौतिक संसार से वापिस आध्यात्मिक समुद्र में लौट जाता है, जहाँ से उसका उद्‌गम हुआ और आगे का कार्यभार जीवों के कल्याण के लिये अपने उत्तराधिकारी पर छोड़ जाता है।

2. फिर, प्रकृति के नियमानुसार, यदि गुज़रे हुए गुरु को अपने अनुयायियों के लिये कुछ करना होता है, तो वह भी वे अपने उत्तराधिकारी, जिसे वे अपना कार्यभार सौंप गए हों, के द्वारा ही करवाते हैं। इस तरह से उत्तराधिकारी, गुरुभाई होने के नाते, इस भौतिक मंडल पर अपने साथी भाइयों की सहायता और मार्गदर्शन करता है।

3. यदि हम अपनी इच्छा से या मौत के समय इस स्थूल मंडल को छोड़ सकते हों, तभी हम उस सत्गुरु से सम्पर्क कर सकते हैं, जिसने हमें दीक्षित करने के बाद स्थूल शरीर को त्याग दिया हो। इस धरती पर जीवित रहते हुए भी, उसका नूरी स्वरूप कभी गगन (सूक्ष्म स्वर्ग) से नीचे नहीं उतरता, क्योंकि वह हमेशा स्थूल और सूक्ष्म मंडलों के बीच की दहलीज़ पर मानवीय आत्माओं की प्रतीक्षा करता रहता है।

4. इस आशा और विश्वास से कि पुरातन संत–महात्मा अब भी हमारी सहायता कर सकते हैं, हम अपनी विकृत–विरूप विचारधाराओं, कल्पनाओं और मन की भावनाओं को बहुत अधिक महत्त्व देना आरम्भ कर देते हैं और अपने ही अर्ध चेतन मन के सुझावों पर काम करने लगते हैं; हम इनके असली महत्त्व को समझ नहीं पाते और ऐसा दृढ़ निश्चय कर लेते हैं कि ये विचार और भावनाएँ एक या दूसरे पूर्ववर्ती महापुरुष की ओर से हैं।

ये विचार व भावनाएँ हमारे अपने इष्टदेव या अपने पसंद के पूर्ववर्ती सत्गुरु के न होकर, किसी अन्य माध्यम से भी उपज सकते हैं। इस फ़र्क को भी उचित प्रकार से तब तक नहीं आँका जा सकता, जब तक कि व्यक्ति को दिव्यदृष्टि प्राप्त न हो, जिसके द्वारा सफलतापूर्वक मन और माया (प्रकृति) के आवरण को पार किया जा सके और स्पष्टतया देखा और निर्णय किया जा सके कि किस प्रकार आंतरिक इच्छाओं की तरंगें मानसिक पटल पर उठकर उसे प्रभावित करती हैं।

5. इसके अलावा, हम संभवतः किसी ऐसे संत के कार्यकलाप को उचित प्रकार से नहीं समझ सकते, जिसे हम पहले कभी नहीं मिले हों और न ही जिसे देखा हो, और हमारे पास कोई ऐसा साधन भी नहीं है, जिससे हम उसकी कार्यप्रणाली की जाँच भी कर सकें। इन परिस्थितियों में, हम

किसी भटकती हुई आत्मा के छलावे के अथवा काल की ताक़त के आसानी से शिकार हो सकते हैं, क्योंकि अनुभवहीन आत्माओं को काल अनेकों प्रकार से फँसा सकता है।

6. उदाहरण के लिये, यदि क्षणभर के लिये यह मान भी लिया जाये कि अब भी पुरातन संत हमें आध्यात्मिक रास्ते पर ले जा सकते हैं और आध्यात्मिक निर्देशों के लिये ज़िंदा सत्गुरु की आवश्यकता नहीं है, तो किसी भी समय, भूतकाल या वर्तमान काल में, गुरु धारण करने की ज़रूरत ही नहीं रहती, क्योंकि तब परमात्मा सीधे ही बिना किसी मसीहा, पैग़म्बर के लोगों को सिखा सकता था।

7. यह तथ्य कि किसी भी समय में एक संत या महात्मा प्रकट हुआ और उसने लोगों को प्रभु की ओर जाने में सहायता की, स्वयं इस बात का पक्का स्पष्ट प्रमाण है कि इस युग में भी, ऐसे ही एक प्रभु रूप महापुरुष की आवश्यकता है, क्योंकि उसके बिना व्यक्ति प्रभु को नहीं जान सकता और न ही उसकी ओर चल ही सकता।

8. प्रभु स्वयं ही इंसानों को इंसान बन कर ही शिक्षित कर सकता है, क्योंकि मनुष्य ही मनुष्य को पढ़ा सकता है। उसे बरबस ही मानव–तन का चोला धारण करना होता है– आप उसे जो चाहे कह लो : एक साधु, संत, पैग़म्बर, मसीहा या रसूल। जैसे को तैसा आकर्षित करता है ('like attracts like')— यह, एक अखंडनीय नियम है।

साध रूप अपना तनु धारिआ।।

– आदि ग्रंथ (मारू म॰5, पृ॰1005)

हमरो भरता बड़ो बिबेकी आपे संतु कहावै।।

– आदि ग्रंथ (आसा भगत कबीर, पृ॰476)

इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि पुरातन संत–सत्गुरु मर गए तथा समाप्त हो गए, बल्कि सही तथ्य यह है कि उन्होंने अमरत्व प्राप्त कर लिया है। स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों को पार करने के पश्चात वे पार–ब्रह्मांडीय चेतनता के साथ मिलकर उसका रूप बन गये हैं। अपनी सारी आत्मिक उन्नति और भक्ति के बावजूद, यदि अब भी उन्हें इस भौतिक मंडल में भटकना होता, तो उनके सभी प्रयत्न व्यर्थ हो गये होते।

सैद्धांतिक वाद–विवाद में पड़ने से कोई लाभ नहीं होता। यदि एक वास्तविक गुरु की तलाश की जाये, जो कि आध्यात्मिक कला एवं विद्या में निपुण हो और उससे प्रभु को पाने का प्राकृतिक और सरल मार्ग सीखा जाये, तो सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा।

मौत के समय तक परिणाम की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं। यदि बीज ठीक तरह से बोया जाये और सही पानी दिया जाये, तो अवश्य ही अपने जीवनकाल में, पर्याप्त मात्रा में फल मिल जायेगा।

एक जीवित सत्गुरु पूर्ण शाश्वत आनंद प्रदान कर सकता है। उसके अंदर की उच्चतर चेतनता का मात्र साधारण सा दिव्य स्पर्श, व्यक्ति के अंदर अध्यात्म की चैतन्य लहरें उठाने के लिये पर्याप्त है। आत्मा अंतर में चढ़ाई करने लगती है और चुम्बक जैसी ज्योतिर्मय शब्द–धुनों पर सवार होकर, मंडल दर मंडल पार करती हुई बढ़ती चली जाती है। ऐसे सत्गुरु के संपर्क में आने वाली आत्मा वास्तव में धन्य है, क्योंकि वह सत्गुरु के मंडल की सुरक्षा में आ जाती है।

यह आम अनुभव का विषय है कि किसी विदेश यात्रा को जाने वाला व्यक्ति अनेक पुस्तकें, डायरेक्टरी आदि देखता है तथा अन्य सूत्रों से सूचनाएँ एकत्र करता है, जलपोतों, नौकाओं की सुविधा आदि के बारे में, चढ़ने और उतरने के बंदरगाहों के बारे में, प्रत्येक नौका और जहाज़ के रास्ते और समय के बारे में तथा रास्ते में महत्व के स्थानों के बारे में जानकारी एकत्र करता है और अंत में गंतव्य स्थान पर ठहरने की सुविधाओं के विषय में जानकारी प्राप्त करता है।

अपनी योजना बनाने के बाद, उसे अपनी सरकार से, पासपोर्ट लेना पड़ता है, जिसके बिना वह अपना देश नहीं छोड़ सकता और जिस देश में उसे जाना है, उस देश की सरकार से भी वहाँ उतरने की अनुमति (Visa) लेता है।

ठीक उसी प्रकार, एक व्यक्ति जो स्थूल मंडल को छोड़कर किसी आध्यात्मिक मंडल में जाना चाहता है, उसे भी किसी समर्थ अधिकारी से, परमात्मा के प्रतिनिधि संत से, जो कि सभी मंडलों में कार्य करता है, पासपोर्ट और वहाँ उतरने की आज्ञा लेनी होती है।

दीक्षा के समय उसे यह मिल जाता है, जब उसे रास्ते में पड़ने वाले विभिन्न देशों से परिचित कराया जाता है, विभिन्न चिन्हों और संकेतों के विषय में बताया जाता है, जिनसे प्रत्येक स्थान की पहचान और कैसे उसे ज्ञात किया जा सके और रास्ते में आ सकने वाली विभिन्न कठिनाइयों के बारे में बतलाया जाता है। इस प्रकार, वह परलोक के यात्री को आवश्यक पासपोर्ट और वहाँ पहुँचने पर उतरने की अनुमति देता है। जीव के अंदर एक बार 'नाम' का बीज डाल दिया जाए, तो उसे फलीभूत होना ही होगा और एक दिन उसे प्रभु की बादशाहत या 'अदन के बाग़' में पहुँचना ही होगा, जिससे कि वह अनंत काल से बिछुड़ा हुआ है। इस प्रकार निजधाम लौटने वाले जीव के रास्ते में इस लोक या परलोक की कोई भी ताक़त रुकावट नहीं बन सकती।

इसके बाद सत्गुरु उसे वह रास्ता बताते हैं, जो प्रभु की ओर जाता है। एक पुराने समुद्री नाविक की तरह, वे शिष्य की आंतरिक यात्रा की पूरी योजना बनाते हैं, क्योंकि उसके बिना शिष्य, अपनी सारी भावभक्ति तथा अविरल प्रयत्नों के बावजूद अपने गंतव्य पर नहीं पहुँच सकता।

प्रभु की तरफ़ सही क़दम उठाना, तैयारी की दूसरी अवस्था है, जो कि अज्ञात समुद्र में यात्रा करने के समान है। सत्गुरु स्वयं ही नौका का प्रबन्ध करता है और रास्ते में शिष्य की सुरक्षा का बन्दोबस्त करता है। रास्ते के समुद्र में आने वाली बाधाओं, डूबी हुई चट्टानों, भँवरों तथा अन्य ख़तरों से कैसे बचा जा सकता है, उन सभी के बारे में वह शिष्य को सचेत करता है।

वह यहीं पर नहीं रुकता। दिव्य मंडलों और धरती, दोनों का स्वामी होकर, वह प्रतिदिन अपनी इच्छा से विभिन्न आत्मिक मंडलों को पार करता है। सचखंड या मुक़ामे–हक़ उसका सदा का निवास है, जहाँ से वह प्रतिदिन पृथ्वीमंडल पर आता है, ताकि निम्नतम मंडल की जो सेवाएँ उसे सौंपी गई हैं, उन्हें वह पूरा कर सके।

> वे ऐसे बुद्धिमान हैं, जो गगन में उड़ते हैं, परन्तु व्यर्थ नहीं भटकते। स्वर्ग की दिशाओं व निजगृह से वे सच्चे तौर से परिचित हैं।
>
> – विलियम वर्ड्स्वर्थ [William Wordsworth- 'Poetical Works']

क्योंकि उसे परलोक की यात्रा का व्यक्तिगत ज्ञान और अनुभव है, वह सब से ऊँचे मंडल का निवासी है और उस यात्रा को वह प्रतिदिन कई–कई बार करता है, अतः संसार से थके–हारे लोगों को वह सांत्वना भरी बांग देता है :

मेरे अप्रसन्न भाइयों और बहनों! आप सभी दिव्य मंडलों की बादशाहत में और प्रभु की कृपा-भरी उपस्थिति में आओ।

वह न केवल हमारी यात्रा का विवरण तैयार करता है, घर वापिस जाने की हमारी यात्रा का आरक्षण करता है और हमें प्रभु की बादशाहत का निजी अनुभव देता है, बल्कि इस यात्रा में हमारे साथ रहता है, हमारा पथ प्रदर्शक बनता है। वह हमारे जहाज़ को चला भी सकता है, और तब तक चैन से नहीं बैठता जब तक कि वह हमें प्रभु की गोद में नहीं पहुँचा देता।

उसकी कही गई मोटी–मोटी बातों की जाँच हम डायरेक्ट्रियों से कर सकते हैं। अगर डायरेक्ट्रियों के संदर्भ उसकी बातों से मेल खाते हों, तो हम साहस बटोरकर उस पर तथा उसकी योग्यता पर विश्वास कर सकते हैं।

धर्मग्रंथ कुछ और नहीं, बल्कि ऐसी डायरेक्ट्रियाँ हैं, जिनमें उन संतों–महात्माओं के व्यक्तिगत अनुभव दर्ज हैं, जिन्होंने भूतकाल में इस मार्ग की यात्रा की। एक जीवित सत्गुरु अपने प्रवचनों और सत्संगों में उनके संदर्भ इसीलिए देता है, क्योंकि हम मतांधता से उनमें विश्वास रखते हैं, और वह चाहता है कि हमें सबसे सरलता से ऊपर ले जाए।

धर्मग्रंथों के ध्यानपूर्ण अध्ययन से हम कठिन धरातल को पार कर सकते हैं, परन्तु सिर्फ़ इनके द्वारा हम आत्मा को मन–तन के बंधनों से स्वतंत्र नहीं कर सकते और आगे आध्यात्मिक मंडलों में नहीं पहुँच सकते। सत्गुरु की लंबी और शक्तिशाली भुजाएँ ही इस कठिन कार्य को संपन्न कर सकती हैं, जिसमें तन–मन के अस्तबल की सफ़ाई, आत्मा को सभी सीमाओं और विचारों से परे ले जाना, उसे दिव्य मार्ग पर सुरक्षित आगे बढ़ाना और उसे खोये हुए साम्राज्य को पुनः प्राप्त कराना सम्मिलित हैं।

धुरि खसमै का हुकमु पाइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ॥

– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰556)

भाई गुरुदास जी फ़र्माते हैं :

पूछत पथकि तिह मारग न धारै पगु।।
प्रीतम कै देस कैसे बातन कै जाईऐ।।
– कबित्त–सवैये (439)

बुद्धि चाहे कितनी भी पैनी और तीक्ष्ण क्यों न हो, सिर्फ़ उसी के सहारे प्रभु को नहीं समझा जा सकता। कोई सीमित यंत्र उस असीम परमात्मा को भला कैसे माप सकता है? कोई उच्चतर चेतनता ही छोटी चेतनता को महा चेतनता से जोड़ सकती है, क्योंकि वह दोनों के बीच की कड़ी है।

आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि।
साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि।।
– आदि ग्रंथ (मांझ बारहमाहा म॰5, पृ॰134)

बस्तु कहीं ढूंढै कहीं, केहि बिधि आवै हाथ।
कहै कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजै साथ।।
भेदी लीन्हा साथ कर, दीनी बस्तु लखाय।
कोटि जनम का पंथ था, पल में पहुँचा जाय।।
– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 59-60, पृ.5)

हमें क़दम–क़दम पर किसी मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिये, पाकविद्या के शिक्षार्थी को यह कला किसी पाकविद्या के अनुभवी से ही सीखनी होती है। आयुर्विज्ञान के विद्यार्थी को किसी आयुर्विज्ञान के प्राध्यापक की सहायता की आवश्यकता होती है। चीड़–फाड़ के शिक्षार्थी को यह कला किसी प्रसिद्ध सर्जन से सीखनी पड़ती है, और इसी तरह से इंजीनियरिंग, चित्रकला आदि के क्षेत्र में भी ज़िंदा शिक्षक की ज़रूरत होती है। केवल इन विषयों की पुस्तकें और ग्रंथ किसी विद्यार्थी को इन विषयों में निपुण नहीं बना सकते। इन सभी क्षेत्रों में, किसी निपुण अध्यापक की देख रेख में पाया गया व्यावहारिक अनुभव अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

इन सभी विज्ञानों में, जो अपरा–विद्या के क्षेत्र में आते हैं और जो इंद्रियों के स्तर पर सीखे जाते हैं, जब हमें एक अध्यापक की ज़रूरत होती है, तो फिर आध्यात्मिक विज्ञान या परा–विद्या के क्षेत्र में एक अध्यापक की आवश्यकता और भी अधिक है, क्योंकि यह इंद्रियों के घाट से बहुत ऊपर,

अंतर का ज्ञान है, जिसका अध्ययन मन की गहराइयों में और आत्मा की प्रयोगशाला में किया जाता है।

इस विज्ञान को युगों–युगों से ताले में बंद करके रखा गया है और यह गहरे अंधकार में लिपटा हुआ है और इस तक कोई पहुँच दिखाई नहीं पड़ती। तथ्य यह है कि जो व्यक्ति एक सत्गुरु की आवश्यकता को नहीं समझता और फिर 'सत्' को स्वयं ही पाना चाहता है, वह वास्तव में उसे पाना ही नहीं चाहता। उसका मामला उस आदमी के समान है, जो अपने लिये कुँआ खोदना पसंद करता है, परन्तु निकट बहते, ठंडे और तरोताज़ा पानी के झरने पर प्यास बुझाना पसंद नहीं करता, जहाँ एक पानी पिलाने वाला भी उसकी सेवा के लिये नियुक्त है।

इस संदर्भ में भाई नंदलाल फ़र्माते हैं :

क़दरे लाले ऊ बजुज़ आशिक़ न दानद हेच कस।
क़ीमते याक़ूत दानद चश्मे गौहर बारे मा।

— दीवाने–गोया (ग़ज़ल 2, पृ.11)

(अर्थात, हीरे जवाहरात की क़ीमत को उस का कोई आशिक़ ही जान सकता है। किसी जौहरी की आँख ही उसकी क़ीमत आँक सकती है।)

इस मार्ग पर चलने के लिए सत्गुरु शत प्रतिशत ज़रूरी है और इस नियम का कोई अपवाद नहीं हो सकता। उदाहरण के लिये, कल्पना करो कि कोई व्यक्ति आसमान की सैर का लुत्फ़ उठाना चाहता है। पहले तो कोई भी उसे अपने आप हवाई–जहाज़ में प्रवेश करने की अनुमति कोई नहीं देगा। यदि वह चोरी–छिपे अंदर प्रवेश कर भी लेता है, तो उसे उस जहाज़ के इंजन की मशीनरी तालाबंद मिलेगी। अगर किसी तरह से वह इस बाधा को भी पार कर जाता है, तो उसे यह पता नहीं होगा कि मशीनरी के विभिन्न भागों को वह कैसे चलाए। यदि वह ऐसी दुस्साहसपूर्ण कार्यवाही कर बैठे और जहाज़ चल पड़े, तो प्रशिक्षण के अभाव में वह उसे ऊपर नहीं ले जा सकता और न ही उसे नीचे उतार सकता है और न ही ठीक तरह से उड़ा सकता है। परिणामस्वरूप, जल्दी या देरी से, दुर्घटना होगी और जीवन की हानि तो होगी। मानव तन की मशीनरी किसी अन्य मशीन से कहीं अधिक जटिल एवं कोमल है; इसीलिये आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता और भी

अधिक है, आत्म–विश्लेषण की विधि में सफलता के लिये भी तथा प्रभु तक पहुँचने और दिव्य इच्छा को समझने के लिये भी।

शरीर में क़ैद आत्मा स्वयं को इससे अलग नहीं कर सकती। दो आँखों के बीच और ऊपर आत्मा का ठिकाना है, जहाँ से यह पूरे शरीर में फैली रहती है और दोनों (शरीर और आत्मा) इस प्रकार, एक दूसरे में पमरी तरह घुल–मिल गए हैं। यदि कुछ क्षण के लिये यह अपने आप को आज़ाद कर सके और अपने केन्द्र पर इकट्ठी हो जाए, तो भी यह 'शब्द' के जहाज़ में प्रवेश नहीं कर सकती। यदि यह उस 'शब्द' रूपी हवाई जहाज़ में प्रवेश भी कर जाये, तो इसे यह पता नहीं कि कहाँ जाना है, कैसे जाना है और कैसे वापिस लौटना है।

परन्तु यदि सत्गुरु–रूपी जहाज़–चालक (पाइलट) आत्मा को अपने साथ ले जाने आ जाये, दोनों जहाज़ में प्रवेश करें और आत्मिक मंडलों में एक साथ उड़ान भरें, तो आत्मा भी सीख सकती है कि दिव्य जहाज़ को कैसे चलाया जाता है और आत्मिक प्रयोग दोबारा कर उठा सकती है।

मानव तन की मशीनरी (इंसान तीन शरीर रखता हैः स्थूल, सूक्ष्म और कारण, तथा उनके अंदर जीवात्मा छुपी है) का ज्ञाता, जो कि दिव्य मंडलों का प्रतिदिन का यात्री है, जो रोज़ाना दिन–रात वहाँ यात्रा करता है, वह किसी भी जीवात्मा को आसानी से आत्मिक ज्ञान के रहस्यों की दीक्षा दे सकता है और उसे व्यावहारिक अनुभव देकर, शरीर की क़ैद से बाहर निकलने का रास्ता बता सकता है।

सत्गुरु व्यावहारिक मार्गदर्शन और सहायता द्वारा, आत्मा को मंडल दर मंडल सुरक्षित ले चलता है और उसे रास्ते के ख़तरनाक चिन्हों और निशानों, तेज़ मोड़ों और अज्ञात आत्मिक ख़तरों से भी चौकन्ना करता जाता है। आत्म विज्ञान और कला के ज्ञाता, सत्गुरु की छत्रछाया में आने वाली आत्मा वास्तव में भाग्यशाली और धन्य है।

इसे इंसान का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा, यदि वह गुरु की भेंट को त्याग कर अपने आप ही, बिना गुरु के मार्गदर्शन के, रूहानी यात्रा करने की कोशिश करने लग जाए।

इसीलिये मौलाना रूमी बड़े स्पष्ट शब्दों में ऐसी यात्रा के बारे में चेतावनी देते हैं :

पीर रा बगुज़ीं किह् बे पीर ईं सफ़र,
हस्त बस पुर आफ़तो-ख़ौफ़ो-ख़तर।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.308)

(अर्थात, किसी मुर्शिदे–क़ामिल, संत–सत्गुरु की तलाश करो क्योंकि उसकी सह. ायता और मार्गदर्शन के बिना, यह यात्रा अनकहे ख़तरों और कष्टों से भरपूर है।)

सार में, 'नाम' या 'धुनात्मक शब्द' एक अनलिखा क़ानून है, एक अनबोली भाषा है, और इसलिये यह धर्मग्रंथों या अन्य पावन पुस्तकों से प्राप्त नहीं हो सकता। यह निधि 'नाम' के किसी निपुण ज्ञाता से ही प्राप्त की जा सकती है, क्योंकि वह 'शब्द'–सदेह होता है। केवल वही किसी आत्मा को 'नाम' से जोड़ सकता है, अन्य कोई नहीं।

बिनु सतिगुरु को नाउ न पाए प्रभि ऐसी बणत बणाई हे।।

– आदि ग्रंथ (मारू म॰3, पृ॰1046)

गुर का सबदु गुर थै टिकै होर थै परगटु न होइ।।

– आदि ग्रंथ (सारंग वार म॰4, पृ॰1249)

एक सत्गुरु परमार्थ के सभी रहस्यों से परिचित होता है। इसलिये उसकी गवाही पक्की होती है और उसके अभिषिक्त शब्द दिल पर मार करते हैं और प्रभावकारी होते हैं।

संतन की सुणि साची साखी।। सो बोलहि जो पेखहि आखी।।

– आदि ग्रंथ (रामकली म॰5, पृ॰894)

गुरुवाणी में संत–सत्गुरु की आवश्यकता पर बहुत ज़ोर दिया गया है। जीवात्माएँ युगों–युगों से इंद्रियों के घाट की ज़िंदगी जी रही हैं और उन्हें यह पता ही नहीं लगता कि तस्वीर का दूसरा पहलू भी है। 'सत्' का अनुभव किसी संत–सत्गुरु की कृपा के बिना कभी मिल नहीं सकता।

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ।। बिनु सतिगुर किनै न पाइआ।।
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰466)

नदरि करहि जे आपणी ता नदरी सतिगुरु पाइआ।।
एहु जीउ बहुते जनम भरंमिआ ता सतिगुरि सबदु सुणाइआ।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰465)

सतिगुर जेवडु दाता को नही सभि सुणिअहु लोक सबाइआ।।
सतिगुरि मिलिऐ सचु पाइऐ सचु पाइआ जिन्ही विचहु आपु गवाइआ।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰465)

सभी संत एक स्वर से कहते हैं कि बिना सत्गुरु के कोई भी प्रभु तक नहीं पहुँच सकता, उसे पा नहीं सकता। प्रभु ने स्वयं स्पष्ट कहा है :

धुरि खसमै का हुकमु पइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।
– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰556)

कहु नानक प्रभि इहै जनाई।।
बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई।।
– आदि ग्रंथ (गोंड म॰5, पृ॰864)

सत्गुरु आँख बख़्शने वाला डॉक्टर व निपुण सर्जन होता है। हम सभी बिल्कुल अंधे हैं। प्रभु हमारे अंदर है और हम उसके लिए बाहर भटकते फिरते हैं। परन्तु सत्गुरु से भेंट होने के बाद हमें खोई हुई अंतर्दृष्टि वापिस मिल जाती है और हम प्रभु का अनुभव अपने शरीर की प्रयोगशाला में करने लगते हैं।

इहु जगु अंधा सभु अंधु कमावै बिनु गुर मगु न पाए।।
नानक सतिगुरु मिलै त अखी वेखै घरै अंदरि सचु पाए।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰3, पृ॰603)

हम असल में अंधे हैं, क्योंकि हम शारीरिक नेत्रों के होते हुए भी उस प्रभु को नहीं देख पाते। इन शारीरिक आँखों का खोना कोई अंधापन नहीं है, परन्तु अंधा वास्तव में वह व्यक्ति है, जो अंदर छिपे प्रभु का अनुभव नहीं करता है।

अंधे एहि न आखीअनि जिन मुखि लोइण नाहि।।
अंधे सेई नानका खसमहु घुथे जाहि।।
– आदि ग्रंथ (रामकली वार म॰3, पृ॰954)

गुरु अर्जन देव जी महाराज हमें बतलाते हैं कि आँखें रखनेवाला व्यक्ति भी कदाचित अंधा हो सकता है, यदि वह प्रभु को, जो उसकी आत्मा की आत्मा है, देख नहीं पाता, और इस प्रकार वह पापों का भागीदार बन जाता है:

पेखत चाखत कहीअत अंधा सुनीअत सुनीऐ नाही।।
निकटि वसतु कउ जाणै दूरे पापी पाप कमाही।।
– आदि ग्रंथ (सूही म॰5, पृ॰741)

शारीरिक आँखों से हम अपने आस–पास के स्थूल जगत को देखते हैं। लेकिन हममें से प्रत्येक के अंदर जो शिव–नेत्र या तीसरी आँख है, वह बंद है। जब यह तीसरी आँख खुल जाती है, तो हम सूक्ष्म और कारण जगत को देख सकते हैं और इन से भी परे जो निरोल आत्मिक मंडल हैं, उनका अनुभव कर सकते हैं।

अंधा सोइ जि अंधु कमावै तिसु रिदै सि लोचन नाही।।
– आदि ग्रंथ (मलार वार म॰1, पृ॰1289)

हम सभी इस स्थूल जगत से जुड़े हुए हैं और यह नहीं जानते कि इससे परे भी कोई अन्य वस्तु भी है।

माइआ मोहि हरि चेतै नाही।। जमपुरि बधा दुख सहाही।।
अन्ना बोला किछु नदरि न आवै मनमुख पापि पचावणिआ।।
– आदि ग्रंथ (माझ म॰1, पृ॰111)

अपने व्यक्तिगत प्रयत्नों से, किसी के लिये भी उच्चतर दिव्य मंडलों में प्रवेश करना असंभव है। किसी भी जिज्ञासु के लिये एक ऐसे सिद्ध पुरुष का साथ ज़रूरी है, जो प्रतिदिन अपनी आध्यात्मिक यात्रा में सूर्य और चंद्र मंडलों को पार करता हो।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

मर्दे-हज्जी हमरही हाजी तलब,
ख़्वाह हिन्दू ख़्वाह तुर्क ओ या अरब।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.304)

(अर्थात, जो व्यक्ति हज (रूहानी यात्रा) पर जाने का इच्छुक हो, वह इस उद्देश्य के लिये एक अनुभवी हाजी को साथ ले ले, चाहे वह हिंदू हो, तुर्की हो या अरबी हो।)

सत्गुरु एक निपुण शल्य–चिकित्सक की भाँति, हमारी तीसरी आँख की दृष्टि लौटा सकता है।

शम्स तबरेज़ फ़र्माते हैं :

गर अयाँ ख़्वाही ज़ ख़ाके-पाए-ईशाँ सुरमा साज़,
किह् ज़-आं ईशाँ कोरे-मादर ज़ाद रा रह बीं कुनंद।

— कुल्लीयाते—शम्स तबरेज़ (पृ.262)

(अर्थात, अगर आप प्रभु को देखना चाहते हो, तो किसी महापुरुष के चरणों की धूलि अपने नेत्रों में लगाओ, क्योंकि वे जन्म से अंधे लोगों को भी आँख बख़्श सकते हैं।)

'नाम' या 'शब्द' वह सुरमा है, जिसके द्वारा व्यक्ति दिव्य दृश्यों को देखने लग जाता है। इसके बिना व्यक्ति हमेशा के लिये अंधा रह जाता है और उसका मानव जन्म व्यर्थ चला जाता है।

सबदु न जाणहि से अन्ने बोले से कितु आए संसारा।।

— आदि ग्रंथ (सोरठ म॰3, पृ॰601)

गुण नानकु बोलै भली बाणि।। तुम होहु सुजाखे लेहु पछाणि।।

— आदि ग्रंथ (बसंत म॰1, पृ॰1190)

परमात्मा कण–कण में व्याप्त है, लेकिन हम उसे नहीं देख पाते, क्योंकि हमारी दृष्टि में दोष है।

है घट मैं सूझत नहीं, लानत ऐसी जिंद।
तुलसी या संसार को, भया मोतिया बिंद।।

— संत तुलसी साहब

आँखें हज़ार नियामत हैं। उनके बिना व्यक्ति अंधकार में भटकता है। अंधे व्यक्ति के लिये सारा स्थूल संसार मात्र अंधकार की चादर होता है। लेकिन वह कितना कृतज्ञ होगा, यदि कोई अनुभवी डॉक्टर उसकी आँखों का ऑपरेशन करके उसकी दृष्टि को ठीक कर दे।

आंतरिक आँख बाहरी आँखों की अपेक्षा हज़ारों गुणा अधिक लाभदायक है, क्योंकि उसके बिना इस भौतिक दुनिया से परे कुछ नहीं देखा जा सकता और इंसान सृष्टि के आदि से, युगों–युगों से अंतर्दृष्टि के बिना अंधा होकर भटकता रहा है। सत्गुरु आ कर इस तीसरे नेत्र को, जो कि बिना प्रयोग के लगातार सीलबंद पड़ी है, खोलकर ज्योति प्रदान करते हैं। क्या यह दुख की बात नहीं कि इतना लाभदायक अंग बिना इस्तेमाल हुए पड़ा रह जाये और हमने यह सोचने का भी समय नहीं निकाला कि

हमारी इस वर्तमान दयनीय हालत के लिये कौन ज़िम्मेवार है? देहधारी आत्माओं के ऊपर वास्तव में मन और माया का इतना ज़बरदस्त प्रभाव है।

केवल इंसान को नहीं, बल्कि देवताओं को भी तीसरे नेत्र की दिव्य ज्योति की ज़रूरत होती है, क्योंकि वे, उल्टे क्रम में एक के नीचे एक स्थित हैं, अपने आप व अपने वातावरण के परे कुछ नहीं देख सकते– अपनी माता, शक्ति को भी नहीं।

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु।।

– आदि ग्रंथ (जप जी, पौड़ी 30, पृ॰7)

गुसाईं तुलसीदास भी बतलाते हैं कि सत्गुरु की कृपा के बिना कोई भी भवसागर को सुरक्षित पार नहीं कर सकता।

गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई। जौ बिरंचि संकर सम होई।।

– रामचरितमानस (उत्तरकांड 93:5)

(अर्थात, जीवन रूपी भयंकर समुद्र को सत्गुरु की सहायता के बिना कोई भी पार नहीं कर सकता, चाहे वह भगवान शंकर के समान बुद्धिमान ही क्यों न हो।)

जब उन जैसे महान व्यक्तियों को भी गुरु की आवश्यकता होती है, तो मिट्टी का पुतला (इंसान) बिना संत–सत्गुरु की सहायता के, नहीं रह सकता।

बिनु गुरु दाते कोइ न पाए।। लख कोटी जे करम कमाए।।

– आदि ग्रंथ (मारू म॰3, पृ॰1057)

तुलसी साहिब कहते हैं कि बिना सत्गुरु की सहायता के, कोई भी भवसागर सुरक्षित पार नहीं कर सकता :

तुलसी बिना करम किसी मुर्शिद रसीदा के,
राहे-निजात दूर है उस पार देखना।

गुरुवाणी में सत्गुरु की आवश्यकता पर बहुत अधिक ज़ोर दिया गया है :

मत को भरमि भुलै संसारि।। गुरु बिनु कोइ न उतरसि पारि।।

– आदि ग्रंथ (गोंड म॰5, पृ॰864)

संसार एक भयंकर सागर है। गुरु का 'शब्द' नौका है और वही उसका मल्लाह भी है। उस की कृपा से ही कोई जीव प्रभु तक पहुँच सकता है; इसके अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता नहीं है।

गुरु जहाजु खेवटु गुरू गुर बिनु तरिआ न कोइ।।
गुर प्रसादि प्रभु पाईऐ गुर बिनु मुकति न होइ।।
– आदि ग्रंथ (सवैये म॰4, पृ॰1401)

हिंदू धर्मग्रंथों में भी हमें ऐसे अनेक संदर्भ मिलते हैं। कठोपनिषद् में आता है :

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यं न विद्यु।
आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाश्चर्योज्ञाता कुशलानुशिष्टः।
– कठोपनिषद् (1:2:7)

(अर्थात, प्रभु के बारे में सुनने का शुभ अवसर भी बहुत कम लोगों को मिल पाता है, उनसे भी कम लोग उसे जान पाते हैं। वे महात्मा धन्य हैं जो उसके बारे में चर्चा करते हैं तथा वे लोग धन्य हैं जिनकी ऐसे लोगों तक पहुँच है। वास्तव में वे धन्य हैं जो ऐसे महापुरुषों की सहायता और मार्गदर्शन से अपने अंदर प्रभु का साक्षात्कार करते हैं।)

न नरेणावरेण प्रोक्त एष सुविज्ञेयो बहुधा चिन्त्यमानः।
अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीयान्ह्यतर्क्यमणुप्रमाणात्।
– कठोपनिषद् (1:2:8)

(अर्थात, मात्र सोचना और विचारना किसी काम का नहीं। बिना दीक्षा के, परमात्मा को कोई नहीं जान सकता। जब तक तुम किसी संत–सत्गुरु से परमात्मा का ज्ञान प्राप्त न करो, तुम्हें उसका अनुभव नहीं हो सकता। वह इतना सूक्ष्म है कि विचारों द्वारा वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता और बुद्धि भी उसको जान नहीं सकती है।)

छांदोग्य उपनिषद् (IV:9-3) में हमें निम्न कथन मिलता है :

श्रुतं ह्योव मे भगवद्दृशेभ्य आचार्याद्धैव
विद्या विदिता साधिष्ठं प्रापतीति...।

(अर्थात, पवित्र पावन महापुरुषों से, जो कि गुरुओं के समान हैं, हमने यह सुना है कि बिना संत–सत्गुरु के, हम न तो आत्मा को जान सकते हैं और न ही उसका अनुभव कर सकते हैं।)

मुंडकोपनिषद् (I:2:12) में हम पढ़ते हैं :

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।

(अर्थात, ब्राह्मण (ब्रह्मज्ञानी) का यह कर्तव्य है कि कर्मों के फलों की इच्छा से अपने चित्त को हटा कर रखे और वैराग्य की अवस्था धारण करे, क्योंकि प्रभु स्वयंभू है और श्रेष्ठ गुणों द्वारा उसे आकर्षित नहीं किया जा सकता। उसको पाने के लिये, वह एक सच्चे जिज्ञासु और शिष्य के समान, एक ऐसे गुरु के पास जाये, जो कि ब्रह्मज्ञान में निपुण हो और पूरी तरह से ब्रह्मनिष्ठ हो, ब्रह्म में अभेद्य हो।)

गुरु के बिना तो व्यक्ति धर्मग्रंथों का सच्चा ज्ञान भी प्राप्त नहीं कर सकता।

श्वेताश्वतरोपनिषद् (6:23) में यह कहा गया है :

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्था प्रकाशन्ते नहात्मनः।।

(अर्थात, जो प्रभु में परम भक्ति रखता है, और वैसी ही भक्ति भावना अपने गुरु में रखता है, ऐसे व्यक्ति ही को इस उपनिषद् के कथन समझ में आएँगे।)

आओ, अब मनुस्मृति (अध्याय–2) की ओर ध्यान दें :

शरीरं च-एव वाचं च बुद्धीन्द्रिय-मनांसि च।
नियम्य प्राञ्जलिस् तिष्ठेद् वीक्षमाणो गुरोर् मुखम्।।
— श्लोक II:192

(अर्थात, एक शिष्य को चाहिये कि अपने सत्गुरु के सामने सीधा, स्थिर खड़ा रहे और अपने तन और इंद्रियों पर पूरा क़ाबू रखे।)

ब्रह्मारम्भे अवसाने च पादौ ग्राह्यौ गुरोः सदा।
संहत्य हस्ताव् अध्येयं स हि ब्रह्माञ्जलिः स्मृतः।।
— श्लोक II:71

(अर्थात, एक शिष्य को चाहिये कि प्रतिदिन पाठ आरंभ करने से पहले और उसके पूर्ण होने के पश्चात्, गुरु के चरणों में प्रणाम करे और उसकी आज्ञानुसार कार्य करे।)

ब्रह्म यस् त्व् अननुज्ञातम् अधीयानाद् अवाप्नुयात्।
स ब्रह्मस्तेयसंयुक्तो नरकं प्रतिपद्यते।।
— श्लोक II:116

(अर्थात, लोग गुरु के बिना, वेदों को सुन सुनाकर ही सीखना चाहते हैं, वे वेद–ज्ञान का निरादर करते हैं और गुरु के बिना वेदों को वास्तव में कोई नहीं समझ सकता और जो ऐसा करने की कोशिश करते हैं, वे नरक [दुख] को जाते हैं।)

लौकिकं वैदिकं वा-अपि तथा-अध्यात्मिकम् एव वा।
आददीत यतो ज्ञानं तं पूर्वम् अभिवादयेत्।।

— श्लोक II:117

(अर्थात, जो लोग आपको सांसारिक [अपरा विद्या] ज्ञान या आध्यात्मिक [परा–विद्या] ज्ञान देते हैं, वे आपकी श्रद्धा और आदर के पात्र हैं।)

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता (4:34) में हमें निम्न कथन मिलता है :

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञान क्षानिनस्तत्त्वदर्शिनः।

(अर्थात, अध्यात्म–विद्या का अभ्यास किसी ऐसे गुरु के चरणों में रह कर ही किया जा सकता है जो 'सत्' का पूर्ण अनुभवी हो क्योंकि केवल वही ठीक तरह से मार्गदर्शन कर सकता है।)

किसी सत्गुरु की सहायता के बिना, हम आध्यात्मिक मार्ग को नहीं जान सकते और इसीलिये हमारी आध्यात्मिक खोज, सत्गुरु की खोज के साथ शुरू होनी चाहिये। पवित्र बाइबिल में कहा गया है :

मेरी मदद के बिना, पिता के पास कोई नहीं जा सकता।

— पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 14:6)

कोई इंसान नहीं जानता.....कि पिता कौन है, पुत्र को छोड़कर तथा वे लोग, जिन्हें पुत्र पिता को प्रकट कर दे।

— पवित्र बाइबिल (लूका 10:22)

मेरा पिता जिन्हें खींच कर मेरे पास लाता है, उनके अतिरिक्त मेरे पास कोई इंसान नहीं आ सकता।

— पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:44)

जो तुम्हारा स्वागत करता है, वह मेरा स्वागत करता है और जो मेरा स्वागत करता है, वह उस प्रभु का स्वागत करता है, जिसने मुझे भेजा है।

— पवित्र बाइबिल (मत्ती 10:40)

संक्षेप में, सभी धर्मग्रंथ इसी बात को दोहराते हैं कि इंसान बिना किसी संत–सत्गुरु की कृपा के मुक्ति को नहीं पा सकता।

सभी शास्त्र, वेद, स्मृति आदि इस एक पक्ष पर सहमत हैं कि कोई भी कृपा के बिना मुक्ति नहीं पा सकता। सही विचार करने से इस सार्वभौमिक सत्य को समझा जा सकता है।

सासत बेद सिमृति सभि सोधे सभ एका बात पुकारी।।
बिन गुर मुकति न कोऊ पावै मनि वेखहु करि बीचारी।।
– आदि ग्रंथ (गूजरी म॰5, पृ॰495)

प्रभु को पाने का सबसे सरल और सबसे तेज़ रास्ता किसी संत–सत्गुरु की भक्ति है। हज़रत मोहम्मद साहिब ने हज़रत अली को संबोधित करते हुए कहा :

गुफ़्त पैग़म्बर अली रा क-ऐ अली, शेरे-हक़्क़ी पहलवाने-पुर दिली,
लेक बर शेरी मकुन तू इअतिमीद, अन्दर आ दर साया-ए-नख़ले-उम्मीद।
या अली अज़ जुमला-ए ताआते, राह-बर गुज़ीं तू साया-ए-ख़ासे-इलाह,
दस्तगीर बन्दा-ए-ख़ासे-इलाह, तालिबाँ रा मी बरद ता पेशगाह।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.310)

(अर्थात, हे अली! तुम सत्य के शेर हो, बहादुर और लगातार कार्यरत रहने वाले हो, परन्तु अपने बल और ताकत पर निर्भर मत रहना। तुम्हारे लिये यह बेहतर होगा कि किसी फल–फूलों से लदे पेड़ के नीचे सहारा ले लेना। हे अली! उन सभी रास्तों में से, जो प्रभु की तरफ जाते हैं, उसी को चुनना जो प्रभु के प्यारे का हो, क्योंकि उसकी भुजा (बाजू) लंबी और ताक़तवर है और वह आसानी से सत् के खोजियों को अपने पास ला सकता है।)

इसी तरह से मौलाना रूमी साहिब भी फ़र्माते हैं :

हेच न-कुशद नफ़्स रा जुज़ ज़िल्ले-पीर,
दामने आँ नफ़्स कुश रा सख़्त गीर।
रौ बख़ुस्प अन्दर पनाहे-मक़बिले,
बू-किह् आज़ादत कुनद साहिब दिले।
फ़ाख़्ता साँ रोज़ो-शब कुन कू व कू-
गंजे-पिनहाँ रा ज़ दरवेशे बजू।

ता तवानी ज़ औलिया रु बर मताब,
ज़हद कुन व अल्लाहु आअलम बस्सवाब।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 2, पृ.242, 214, 54, 214)

(अर्थात, बिना गुरु की छत्रछाया के यह मन क़ाबू में नहीं आ सकता। अगर तुम्हें कोई ऐसा संत–सत्गुरु मिल जाये, तो उसे कस कर पकड़े रहना। जो ख़ुदा की दरगाह में मंज़ूरे–नज़र हो चुका हो, उसकी छत्रछाया में विश्राम करना, क्योंकि मुक्त आत्मा की नज़दीकी तुम्हें भी मुक्त कर देगी। किसी दरवेश (ख़ुदा के बन्दे, सत्गुरु) से मिलकर गुप्त ख़ज़ाने की तलाश करना और फ़ाख्ता की तरह दिन–रात तुम उसकी जुदाई में आहें भरना। सत्गुरु से बड़ा मित्र नहीं। वह इस लोक व परलोक में, सर्वत्र ही रक्षक है। हमेशा ऐसे सत्गुरु की हर तरफ़ तलाश करो और जब तक वह मिल न जाये, तब तक चैन से न बैठो। फ़कीरों से कभी भी दूर मत जाओ परन्तु दिल लगा के उन को समझने की कोशिश करो और उनकी असली महानता को पहचानो।)

परमार्थ का मार्ग कठिनाइयों और ख़तरों से भरपूर है और सत्गुरु के मार्गदर्शन और सहायता के बिना, इस पर चला नहीं जा सकता।

प्रत्येक आत्मा पर तीन शरीरों के गिलाफ़ चढ़े हैं– स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इनके द्वारा आत्मा स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों में काम कर सकती है, लेकिन उसका अपना घर इन तीनों मंडलों से परे है।

स्वयं स्थूल देश में भी जीव को फँसाने के लिए अनेकों रुकावटें और मुश्किलें हैं। फिर सूक्ष्म मंडल में मन को लुभाने वाले ऐसे ऐसे सामान हैं, जिन में से किसी जीव के लिये बचकर निकलना असंभव है।

इसी तरह से, कारण मंडल में जीव के लिये और भी अधिक ललचाने वाले सामान मौजूद हैं। फिर, आध्यात्मिक मंडलों में अपने आप प्रवेश करना कोई आसान कार्य नहीं। यह रास्ता काँटों भरा है और उस्तरे की धार जैसा तेज़ व ख़तरनाक है।

दरवाज़ा सीधा है और रास्ता तंग है, जो कि जीवन की तरफ़ ले जाता है, और ऐसे बहुत कम लोग हैं, जो उसे पाते हैं।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 7:7)

इसलिये, यह और भी अधिक आवश्यक है कि 'सत्' के अभिलाषी पहले किसी अनुभवी पूर्ण पुरुष की तलाश करें, जो आध्यात्मिक मार्ग का

पूरा ज्ञाता हो और उससे ज्ञान प्राप्त करें और उसकी निगरानी, निर्देशन व नियन्त्रण में रहकर साधन अभ्यास करें। परमार्थ में सफल होने का कोई और तरीक़ा नहीं। कठोपनिषद् (3:14) का कथन है :

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधतः।

(अर्थात, उठो, जागो और उद्देश्य प्राप्त होने तक रुको नहीं।)

प्रभु का ज्ञान किसी प्रभु रूप महापुरुष से मिल सकता है। हर क़दम पर, जिज्ञासु को सत्गुरु के लंबे और ताक़तवर हाथों की आवश्यकता होती है, क्योंकि सिर्फ़ वे उस तक पहुँच सकते हैं, उसे बचा सकते हैं, उसे रास्ते पर लगाये रह सकते हैं और उसका सही रूप से मार्ग निर्देशन कर सकते हैं। मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

पीर रा बगुज़ीं किह् बे पीर ईं सफ़र,
हस्त बस पुर आफ़तो-ख़ौफ़ो-ख़तर।
हर किह् ऊ बे मुर्शिदे दर राह शुद,
ऊ ज़-गूलाँ गुमरह ओ दर चाह शुद।
गर न बाशद साया-ए पीर ऐ फ़ुज़ूल,
पस तुरा सरगशता दारद बांगे-गूल।
ग़ूलत अज़ रह अफ़गनद अन्दर गज़ंद,
अज़ तू दाही तर दरीं रह बस बुदंद।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.308-09)

बांगे गूलां हस्त बाँगे आशना,
आशनाए कू कशद सुए फ़ना।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.81)

(अर्थात, पहले किसी पीर (सत् के अनुभवी गुरु) की तलाश करो, क्योंकि पीर के बिना रास्ता ख़तरों से भरा है । जो इस रास्ते पर अपने–आप अकेले चलने की कोशिश करता है, उसे यक़ीनन शैतान आध्यात्मिक रास्ते से हटा कर नीचे गिरा देगा। एक पीर के बिना, तुम यक़ीनन इधर उधर की भटकाने वाली शैतान की आवाज़ों के कारण ठगे जाओगे। पहले भी बहुत सारे अक़्लमंदों ने अकेले इस रास्ते को पार करने की कोशिश की, मगर शैतान की ताक़त ने उन्हें गुमराह कर दिया। कई दफ़ा शैतान, सत्गुरु की आवाज़ की नक़ल कर लेता है और तुम्हें नरक में खींचकर ले जा सकता है।)

सत्गुरु की प्यार भरी दृष्टि से आत्मा इस शरीर के जेलख़ाने से बाहर आ सकती है। यहाँ से आगे सत्गुरु का दिव्य स्वरूप, आत्मा को सीधे अपने नियंत्रण में ले लेता है और अपनी दया से हर क़दम पर उसकी रक्षा करता है।

बिखड़े दाउ लंघावै मेरा सतिगुरु सुख सहज सेती घरि जाते।।

– आदि ग्रंथ (बसंत हिंडोल म॰5, पृ॰1185)

सूक्ष्म और कारण मंडल आत्मा के लिये बड़े भारी जंगल की भाँति हैं और अकेले उन्हें पार करना ख़तरनाक है।

इस संबंध में मौलाना रूमी हमें बतलाते हैं :

यार बायद राह रा तनहा मरौ,
अज़ सरे-ख़ुद अंदरीं सहरा मशौ।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.312)

(अर्थात, इस रास्ते में किसी सहयात्री को साथ ले लो और अकेले यात्रा मत करो। अपने आप रूहानी मंज़िलों के इस जंगल को पार करने की कोशिश मत करना।)

हाफ़िज़ साहिब भी यही सलाह देते हैं :

क़तअ ईं मरहला बे हमरही-ए-ख़िज़र मकुन,
ज़ुल्मात अस्त ब-तर्स अज़ ख़तरे-गुमराही।

– दीवाने–हाफ़िज़ (पृ.408)

(अर्थात, इन मंज़िलों को स्वयं पार करने की कोशिश मत करना। इस रास्ते पर अँधेरा है और तुम अपना रास्ता भटक जाओगे।)

आठवाँ अध्याय

गुरु बिन घोर अंधियार

सत्गुरु के बिना हम अंधेरे में रह जाते हैं और हक़ीक़त मात्र एक विषाक्त वाष्प व मृग–मरीचिका बन कर रह जाती है। 'सत्' या हक़ीक़त एक अनलिखा क़ानून और अनबोली भाषा है और संत–सत्गुरु की व्यक्तिगत तवज्जोह के बिना इसे बिल्कुल नहीं समझा जा सकता है। संसार का मायाजाल और इसके आकर्षण इतने भारी हैं कि अस्थिर वस्तु स्थिर लगती है, असत्य सत्य जैसा प्रतीत होता है और हम संभवतः इस झूठे आकर्षण, जिसमें हम जकड़े हुए हैं, के मायाजाल के इस पर्दे को फाड़कर बाहर नहीं निकल सकते। यह सत्गुरु की कृपा से ही सम्भव है कि जीवात्मा मन–इंद्रियों के घाट से ऊपर आ सके, उच्चतर दिव्य मंडलों में प्रवेश पा सके तथा अपना निज घर प्राप्त कर सके।

सतिगुर बाझहु घोर अंधारा डूबि मुए बिनु पाणी।।

– आदि ग्रंथ (मलार म॰1, पृ॰1275)

जब तक किसी जीवित सत्गुरु की कृपा से देहधारी आत्मा अपने आप को जान नहीं लेती, यह परमानंद का अनुभव नहीं कर सकती। वह सत्गुरु इस जीव को परा–विद्या की दीक्षा देता है, जिसका अनुभव मानव शरीर रूपी प्रयोगशाला में ही हो सकता है।

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै।।
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरू बिनु मुकति न पावै।।
गुरु करु सचु बीचारु गुरू करु रे मन मेरे।।
गुरु करु सबद सपुन्न अघन कटहि सभ तेरे।।
गुरु नयणि बयणि गुरु गुरु करहु गुरू सति कवि नल्य कहि।।
जिनि गुरू न देखिअउ नहु कीअउ ते अकयथ संसार महि।।

– आदि ग्रंथ (सवैये म॰4, पृ॰1399)

जीव सदा ही घोर अंधकार में रहता है। अगर वह आँखें बंद करता है, तो अंतर में अंधकार नज़र आता है। फिर, वह अज्ञान के अंधकार से घिरा रहता है। जो जीव को इस अंधकार से छुड़ा सके, उसे 'गुरु' कहा जाता है। 'गुरु' शब्द दो अक्षरों से बना है— 'गु' का अर्थ है, अंधकार और 'रु' का अर्थ है, ज्योति। अतः जो हमें अंधकार से प्रकाश, असत् से सत् और मृत्यु से अमरत्व की तरफ़ ले जा सके, उसे 'गुरु' कहा जाता है। प्रख्यात कवि, कालिदास गुरु के बारे कहते हैं :

प्रवर्तितो दीप इव प्रदीपात्

– कालिदास, रघुवंशम् (5:37)

गुरु सो जो घोर में करे चानण बाहों पकड़ के रब दिखा देवे।।

क्योंकि जीव अज्ञान के अंधकार में लिपटा हुआ है, उसके सभी कार्य अज्ञान से उत्पन्न होते हैं, और वे ही उसे बंधन में डाले रखते हैं।

संत बतलाते हैं कि बिना संत–सत्गुरु के मार्ग–दर्शन के, हमारे सभी नेक कर्म और नेक कार्य, जैसे कि धर्मग्रंथों का पढ़ना, व्रत या जागरण रखना, तीर्थयात्रा, सामाजिक कर्मकांड, रीति–रिवाज़, पुराने धार्मिक अनुष्ठानों व नियमों का पालन, ये सभी काम जीवात्मा को मुक्त कराने में कोई सहायता नहीं कर पाते। इसीलिए कबीर साहिब बड़े कड़े शब्दों में हमें चेतावनी देते हैं :

गुरु बिनु माला फेरता, गुरु बिनु करता दान।
गुरु बिनु सब निस्फल गया, बूझौ बेद पुरान।।

– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (निगुरा का अंग 1, पृ.15)

बुल्लेशाह हमें बतलाते हैं :

बिन मुर्शिद क़ामिल बुल्लिआ तेरी ऐवें गई इबादत कीती।

(अर्थात, ऐ बुल्ले! बिन मुर्शिद के, तेरी सारी भक्ति निष्फल रह जायेगी।)

आंतरिक नेत्र खुले बिना तथा आंतरिक सत्ता से संबंध स्थापित हुए बिना, सारे कर्म–धर्म बेकार हैं। हमें सत्गुरु को खोजने की आवश्यकता है, जो हमें बाहर से हटाकर अंतर्मुख करे, आत्मा को इंद्रियों के घाट से ऊपर खींचे और एक–एक करके ऊपर आध्यात्मिक मंड़लों में ले चले, जब तक

कि आत्मा अपने निजघर, सचखंड या मुक़ामे–हक़ में वापिस न पहुँच जाये। वह हमारा अचूक और विश्वसनीय मार्गदर्शक है, जो दिव्य ज्योति प्रदान कर, अज्ञान रूपी अंधकार के सभी भ्रमों को नष्ट कर देता है।

सतिगुरु मिलै अंधेरा जाइ।। जह देखा तह रहिआ समाइ।।
– आदि ग्रंथ (रामकली म॰1, पृ॰876)

यदि हमारी आँखों में देखने की शक्ति नहीं है, तो सैकड़ों चंद्रमाओं व हज़ारों सूर्यों की ज्योति से हमारा कुछ भला होने वाला नहीं है। इतना ज्योतिर्मय प्रकाश भी हमारा अंधकार दूर नहीं कर सकेगा। ठीक इसी प्रकार से, जब अंतरीय नेत्रों में देखने की शक्ति नहीं हो, तो हम आत्मा की अचरज भरी ज्योति का अनुभव नहीं कर सकते और हम घने अंधकार में अटके रह जाते हैं।

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार।।
एते चानण होदिआँ गुर बिनु घोर अंधार।।
– आदि ग्रंथ (आसा की वार म॰1, पृ॰463)

नौवाँ अध्याय

ऐतिहासिक प्रमाण

हमारे पास ऐतिहासिक प्रमाण मौजूद हैं, जो यह दर्शाते हैं कि आत्मिक मंडलों में कोई अपने आप नहीं पहुँच सकता। शास्त्रों में वर्णन आता है कि देवर्षि नारद जी को विष्णुपुरी में नहीं प्रवेश करने दिया गया, क्योंकि उन्होंने कोई गुरु धारण नहीं किया था।

फिर, महर्षि वेदव्यास के पुत्र, मुनि शुकदेव स्वामी, जिन्हें गर्भ से ही ज्ञान प्राप्त था, वे भी तब तक विष्णुलोक में प्रवेश नहीं पा सके, जब तक उन्होंने राजर्षि जनक को अपने आध्यात्मिक गुरु के रूप में स्वीकार नहीं कर लिया।

कहीं भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता जबकि, कोई बिना गुरु धारण किए, अपने आप रूहानी मंडलों में कोई चढ़ाई कर पाया हो।

सभी जन्मजात संत, जो जन्म से परा–विद्या का ज्ञान लेकर संसार में आये, यद्यपि वे गिनती के ही हैं, पर उन्हें भी मर्यादा बनाए रखने के लिए गुरु धारण करना होता है।

उदाहरण के लिये, कबीर साहिब ने स्वामी रामानंद जी को गुरु के रूप में स्वीकार किया। आत्मिक पृष्ठभूमि संपूर्ण होने के बाद भी ऐसी हस्तियाँ साधु–संतों की संगति में रहती हैं और उसे फिर से ताज़े किए जाने वाले पाठ्यक्रम की भाँति ग्रहण करती हैं।

गुरु अमरदास हमें बतलाते हैं कि प्रभु का यह नियम है कि जीव उस प्रभु के बारे में सोच भी नहीं सकता, जब तक कि किसी संत–सत्गुरु के द्वारा वह चेताया ना जाये।

धुरि खसमै का हुकमु पाइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।

– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰556)

आगे,

> कोई व्यक्ति मेरे पास नहीं आ सकता जब कि मेरा पिता, जिसने मुझे भेजा है, उसे न बुलाए और अंतिम दिन मैं उसे ऊपर ले जाऊँगा।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:44)

साधारण मनुष्य एक संत–सत्गुरु के बिना निर्वाह नहीं कर सकते। भगवान राम और भगवान कृष्ण को भी, जो कि भगवान विष्णु के अवतार माने जाते हैं, क्रमशः महर्षि वशिष्ठ और अंगिरस ऋषि को गुरु रूप में धारण करके उनकी आज्ञा में रहना पड़ा। तुलसी साहिब कहते हैं :

> राम कृष्ण ते को बड़ा, तिनहूं भी गुरु कीन।
> तीन लोक के नायका, गुरु आगे आधीन।।

जब इतने पहुँचे व्यक्तित्वों को भी, जिनका प्रभाव कारण मंडल तक माना जाता है, आध्यात्मिक मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ी, तो हम साधारण मनुष्य, इस मूलभूत आवश्यकता के बिना नहीं रह सकते हैं।

गुरु नानक बड़े ज़ोरदार शब्दों में कहते हैं कि गुरु की महत्ता ब्रह्मा, नारद और वेद व्यास से जानी जा सकती है :

> भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ।।
> पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ।।
>
> – आदि ग्रंथ (सिरी म॰1, पृ॰59)

जिस किसी को भी परमार्थ में सफलता मिली, वह किसी संत–सत्गुरु की कृपा से ही प्राप्त हुई। राजर्षि जनक को महर्षि अष्टावक्र द्वारा आध्यात्मिक विद्या का अनुभव प्राप्त हुआ। गोरखनाथ को मत्स्येन्द्रनाथ से दीक्षा प्राप्त हुई। पांडवों के योद्धा राजकुमार अर्जुन को अध्यात्म–विद्या का अनुभव भगवान श्री कृष्ण से मिला। स्वामी विवेकानंद भी दक्षिणेश्वर के संत, रामकृष्ण परमहंस के चरणों में बैठे।

सिक्खों में गुरु नानक ने लहना को ढ़ाला और उस में अंगद (अपना अंग) को प्रकट किया, जिन्होंने बाद में अमरदास जी को गुरु पद के लिए तैयार किया, और आगे भी इसी तरह से क्रम चलता रहा।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं कि उन्हें अपनी आत्मिक उपलब्धि शम्स तबरेज़ से प्राप्त हुई।

मौलवी हरगिज़ न ख़ुद मौलाए-रूम,
ता ग़ुलामे-शम्स तबरेज़ी न शुद।

— किताब–उल–बैअत (पृ.8)

(अर्थात, एक मौलवी (स्कूल का अध्यापक) मौलाना (धर्मगुरु) तब तक नहीं बन सका, जब तक कि शम्स तबरेज़ की उस पर कृपा नहीं हुई।)

आगे,

बया साक़ी इनायत कुन तू मौलानाए-रूमी रा,
ग़ुलामे-शम्स तबरेज़म क़लन्दर वार मी गरदम।

— नुकाते–दीवाने–शम्स तबरेज़ी (पृ.8)

(अर्थात, ऐ सत्गुरु साक़ी! अपने मौलाना पर दया–दृष्टि रखना; मैं कलन्दर की तरह कहता हूँ कि मैं शम्स तबरेज़ का गुलाम हूँ।)

अनेक महात्माओं ने अपनी वाणियों में अपने अपने गुरु का ज़िक्र किया है, पर कुछ महात्माओं ने ऐसा नहीं भी किया; लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि ज्योति से ही ज्योति जगती है, जीवन से ही जीवन की प्राप्ति होती है और मन और माया में लंपट जीव ब्रह्मांडीय चेतनता में नहीं जाग सकते, जब तक कि कोई संत–सत्गुरु अपनी मदद से उन्हें ऊपर न खींचे।

दसवाँ अध्याय

गुरु नानक जी से पहले और बाद में

हमेशा ही भूखे के लिये रोटी और प्यासे के लिये पानी रहता है। जो बच्चा पाँच सौ वर्ष पहले जन्मा, माँ प्रकृति ने उसके लिये माता की छाती में दूध उपलब्ध कराया, जो बच्चा हज़ार वर्ष पहले जन्मा उसके लिये भी ऐसा ही प्रबंध था और जो बच्चे आजकल जन्मते हैं, उनके लिये भी आहार का यही प्रबंध है।

प्रकृति में 'माँग और आपूर्ति' ('demand and supply') का नियम अटल है। ठीक इसी प्रकार, यह नियम आध्यात्मिक मामलों में भी अटल रूप से लागू होता है।

जिनको परमार्थ का शौक़ गुरु नानक साहिब के आने पहले हुआ या आज हुआ या आगे होगा, उनके लिए प्रकृति सामान (प्रबंध) किए बग़ैर नहीं रह सकती।

किसी एक या दो शताब्दियों के विशेष समय को गुरुओं का युग कहना और यह कहना कि उस विशेष समय से पहले या बाद में कोई संत–सत्गुरु नहीं हुए, न ही होंगे, 'माँग और आपूर्ति' के मूलभूत सिद्धांत के विरुद्ध है और इसीलिये यह ग़लत है।

महापुरुषों की शिक्षाएँ किसी समय विशेष के लिये न होकर, सभी समयों के लिये हैं। वे अमर सत्य के सिद्धांतों की बात करते हैं, जो हमेशा के लिये सही होते हैं और सारी मनुष्य जाति का उनपर अधिकार होता है। उनका मूल संदेश यह होता है कि परमात्मा एक है और किसी सत्गुरु की कृपा द्वारा प्राप्त होता है। यह एक स्वयं सिद्ध सैद्धान्तिक सत्य है और शायद ही इस विषय में किसी टिप्पणी की आवश्यकता हो।

'अनुराग सागर' में संत कबीर साहिब फ़रमाते हैं कि वे संसार में चारों युगों में अवतरित हुए।

गुरुवाणी से बहुत समय पहले से भगत–वाणी अस्तित्व में थी। गुरु ग्रंथ साहिब और भाई गुरुदास की कविताओं (वारों) से हमें पता चलता है कि प्रत्येक युग में लोगों ने 'शब्द' या 'वाणी' से लाभ उठाया।

कृसनु बलभद्रु गुर पग लगि धिआवै।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी गुआरेरी म॰4, पृ॰165)

नामा छीबा कबीरु जोलाहा पूरे गुर ते गति पाई।।
– आदि ग्रंथ (सिरी म॰3, पृ॰67)

बाणी वजी चहु जुगी सचो सचु सुणाइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी म॰3, पृ॰35)

सचा सबदु सची है बाणी।। गुरमुखि जुगि जुगि आखि वखाणी।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰3, पृ॰424)

भाई बाला द्वारा लिखित गुरु नानक की जनम साखी में बताया गया है कि गुरु नानक ने कहा है कि इस कलियुग में लोगों को परमात्मा के पथ पर ले जाने के लिये अनेक संतों का आगमन होगा।

सत्तर जामे भगत जन चौदस सतिगुर राए।।
भर बेड़े लै जाएगे संत जनां के पूर।।
बेमुख तुट्टे तुट्टे मूए मनमुख न भए कबूल।।
– जन्म साखी, भाई बाला (पृ॰545)

(अर्थात, इस समय में सत्तर भक्तों और चौदह संतों का आगमन होगा। वे संत लोगों के जहाज़ भर कर प्रभु के घर ले जायेंगे। वे, जो उन पर विश्वास नहीं करेंगे, भटकते रहेंगे और वे जो मनमुख हैं, क़बूल नहीं किये जायेंगे।)

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि दोनों– गुरु और गुरुवाणी, हमेशा साथ–साथ रहे हैं। यह गुरु ही है, जो हमेशा 'सत्' के जिज्ञासुओं के लिये मददगार बनता रहा है।

जुगि जुगि संत भले प्रभ तेरे।।
– आदि ग्रंथ (मारू सोलहे म॰1, पृ॰1025)

हरि जुगह जुगो जुग जुगह जुगो सद पीड़ी गुरु चलंदी।।
जुगि जुगि पीड़ी चलै सतिगुर की जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰4, पृ॰79)

ग्यारहवाँ अध्याय

धर्मग्रंथ और उनका मोल

गुरु एक आध्यात्मिक महापुरुष होता है, जिसका साम्राज्य सचखंड तक फैला है। उसे सृष्टि के विशाल खंडों– अंड, ब्रह्मांड, पार–ब्रह्म और सचखंड का ज़ाती (निजी) अनुभव होता है।

वह मन–इंद्रियों के बंधनों से मुक्त होता है और शुद्ध रूहानियत से सराबोर होता है। जब तक जीव किसी ऐसी हस्ती के संपर्क में न आये, तब तक उसकी सुप्त आध्यात्मिक आकांक्षाएँ जागृत नहीं होती। गुरु वास्तव में एक जलती मशाल है, जो अनेकों बुझे हुए दीपों को जलाती है। वह अपनी तवज्जोह से दूसरों को जीवनदान दे सकता है। कुछ लोग मानते हैं कि धर्मग्रंथों के अध्ययन मात्र से वे आत्म ज्योति को पा लेंगे और इस के लिये गुरु की आवश्यकता नहीं। हम यहाँ रुक कर पवित्र धर्मग्रंथों व शास्त्रों का मूल्यांकन करना चाहेंगे।

आख़िर ये धर्मग्रंथ कुछ और नहीं, बल्कि पुरातन संतों, महात्माओं, फ़कीरों और पवित्र पुरुषों के आध्यात्मिक प्रयोगों और निजी अनुभवों के संग्रह ही हैं। प्रेमाभक्ति के साथ उन्हें पढ़ना अच्छा है। हमारे हृदयों में उनके प्रति श्रद्धा होनी चाहिये, क्योंकि वे अध्यात्म–विद्या के महान ख़ज़ाने हैं, जिन्हें हमारे पूर्वजों ने हमारे लाभ के लिये संजो कर रखा है।

आध्यात्मिक महापुरुषों की जीवनगाथाएँ और पवित्र पुस्तकें, हमारे अंदर आध्यात्मिक खोज की जागृति और ललक पैदा करती हैं और आशा व उत्साह के साथ हमें इस पथ पर आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित करती हैं। धर्मग्रंथों से हम कुछ हद तक परमार्थ के सिद्धांतों से परिचित हो सकते हैं, पर हम उनका सही अभिप्राय नहीं समझ सकते और न ही ज़िंदगी का उभार पा सकते हैं; ये दोनों चीज़ें सिर्फ़ एक ज़िंदा महापुरुष से ही मिल सकती हैं।

आख़िरकार, पुस्तकें जड़ हैं और जड़ पदार्थ से जिंदगी नहीं मिल सकती।

जैसे ज्योति से ज्योति जलती है, ऐसे ही, जीवन से ही जीवन प्राप्त होता है। कोई जागृत आत्मा ही हमें गहरी नींद से जगा सकती है। हम चाहे युगों–युगों तक धर्मग्रंथ पढ़ते रहें और अनगिनत बलिदान व पवित्र कर्म करते रहें, लेकिन आत्मिक जागृति और आत्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं कर सकते।

रूहानियत न तो ख़रीदी जा सकती है और न ही किसी को पढ़ाई जा सकती है, परन्तु इसे किसी रूहानी इन्सान से, जिससे रूहानी किरणें प्रवाहित हो रही हों, इस तरह से पकड़ा जा सकता है, जैसे कोई छूत का रोग पकड़ लेता है।

संतों की शिक्षाओं को केवल जानना नहीं होता, बल्कि उनको अनुभव में लाना होता है। अध्यात्म पथ के सैद्धांतिक ज्ञान के अतिरिक्त, हमें इसका व्यक्तिगत अनुभव करके इसका सत्यापन करना होता है। यह एक विज्ञान भी है तथा कला भी, जिसकी रहस्यमयी गहराइयों में से कोई निपुण आत्म–ज्ञानी महापुरुष ही हमारा मार्गदर्शन करके, हमें सुरक्षित निकाल कर आगे ले जाता है।

हरि की सेवा सतिगुरु पूजहु करि किरपा आपि तरावै।।

– आदि ग्रंथ (मलार म॰4, पृ॰1264)

धर्मग्रंथ और पुरातन महापुरुष भी ज़ोर देकर हमें जीवित सत्गुरु की खोज करने को कहते हैं।

चरन साध के धोइ धोइ पीउ।। अरपि साध कउ अपना जीउ।।
साध की धूरि करहु इसनानु।। साध ऊपरि जाइऐ कुरबानु।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰283)

संता की होइ दासरी एहु अचारा सिखु री।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰400)

भाई गुरुदास भी बतलाते हैं :

बेद ग्रंथ गुर हटि है जिस लगि भवजल पार उतारा।।
सतिगुर बाझ न बुझीऐ जिचर धरे न प्रभु अवतारा।।
– वारां गिआन रतनावली (1:17)

ऐसे लोग भी हैं, जो कड़ी मेहनत और एकाग्रता से सारा जीवन धर्मग्रंथों का अध्ययन करते हैं। वे बहुत किताबी ज्ञान रखते हैं, बड़े–बड़े भाषण कर सकते हैं और आध्यात्मिक मामलों पर लंबे चौड़े पांडित्यपूर्ण व्याख्यान दे सकते हैं, परन्तु दुर्भाग्य से वे आत्मानुभव और आध्यात्मिक ज्ञान से ख़ाली होते हैं। उनका जीवन और आचरण उतना ही खोखला होता है, जितना कि दूसरे सांसारिक लोगों का। उन्होंने आत्मिक ज्ञान नहीं पाया होता, न ही किसी जीवन–स्रोत, ज़िंदा सत्गुरु के चरणों में बैठकर जीवन का अमृत पिया होता है। श्री आसा की वार में हमें निम्न उल्लेख मिलता है :

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ।।
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात।।
पड़िअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास।।
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास।।
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰467)

नानक कागद लख मणा पड़ि पड़ि कीचै भाउ।।
मसू तोटि न आवई लेखणि पउणु चलाउ।।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰1, पृ॰15)

आख़िरकार धर्मग्रंथों में हमें उस प्रभु के ज्ञान का केवल वर्णन मिलता है, पर वे वास्तविक ज्ञान का अनुभव नहीं दे सकते।

गिआनु धिआनु धुनि जाणीऐ अकथु कहावै सोइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰1, पृ॰59)

यह सार तत्त्व हमारे अंदर है, लेकिन हम इस सार ('शब्द') को तब तक नहीं पा सकते, जब तक कि हम महात्मा एमर्सन के शब्दों में 'अंतर में खटखटाना (tap inside)' न सीख जाएँ।

डॉक्टर जे. डी. रिने, मनोवैज्ञानिक और शोधकर्ता, अपनी पुस्तक 'माइंड एंड दि न्यू वर्ल्ड – मन और नया संसार' में बतलाते हैं कि मनुष्य के अंदर कोई ऐसी चीज़ है, जो सारे जड़ पदार्थों से ऊपर है। यदि आध्यात्मिक ज्ञान पुस्तकों से मिल सकता, तो अब तक सभी पढ़े–लिखे लोग संत बन गये होते।

परन्तु वास्तव में हमें अनुभव है कि सभी किताबों का ज्ञान होते हुए भी, वे लोग उतने ही जड़ हैं जितने कि वे सभी पुस्तकालय, जिनमें ये किताबें भरी पड़ी हैं।

किताबी ज्ञान के बोझ से लदे हुए व्यक्ति की तुलना उस गधे से की जा सकती है, जो चंदन की लकड़ी के भारी बोझ से लड़खड़ा रहा हो, पर उस चंदन की सुगंधि से बेख़बर हो।

जैसे हलवे में पड़ी कढ़छी हलवे के स्वाद से बेख़बर रहती है, वैसे ही वे ज्ञानी लोग असली ज्ञान के अनुभव से बेख़बर हैं। ज्ञान के इस युग में, जब संसार में वस्तुतः पुस्तकों की बाढ़ सी आई हुई है, बदक़िस्मती से परमार्थ की कोई बाढ़ नहीं है और परमार्थी ख़्याल रखने वाले लोगों का तो छिड़काव भी नहीं है।

सत्गुरुओं के आगमन से ही रूहानियत की रोशनी आती है और ऐसे बहुत से लोग हैं जो उनके रूहानी रंग में रंगे जाते हैं। कोई महाचेतन महापुरुष ही, चेतन आत्मा को जगाकर, उसे जिंदगी बख़्श सकता है। इस काम को न तो पुस्तकें कर सकती हैं और न ही बौद्धिक ज्ञान। कोई व्यक्ति कितना भी बुद्धिमान क्यों न हो, जब तक स्वयं उसके अंदर जीवन न हो, वह दूसरों के अंदर जीवन नहीं डाल सकता।

आध्यात्मिक जीवन की बातें करना बड़ा सरल कार्य है, लेकिन उसे जीवन में ढ़ालना मुश्किल है। ऐसे लोग अध्यात्म का ढोंग भरते हैं, उसका दिखावा करते हैं और उनसे कोई लाभ नहीं उठाया जा सकता।

मौलाना रूमी फ़रमाते हैं :

अन्दर आ दर साया-ए-आँ आक़िले,
किश नतानद बुर्द अज़ रह नाक़िले।

– मसनवी मौलाना रूमी, निकलसन (दफ़्तर 1, 2961, पृ.182)

(अर्थात, किसी संत के दायरे में आओ, तुम किसी नक़लची से रास्ते को नहीं पा सकते।)

बाइबिल में ईसा मसीह कहते हैं :

> नक़ली अवतारों से सावधान रहो, जो तुम्हारे पास भेड़ के वेश में (सीधे सादे बनकर) आते हैं, परन्तु अंदर से वे तुम्हारे माँस के भूखे भेड़िये होते हैं।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 7:15)

संत की संगति से जीव के अंदर परमार्थ की चाह पैदा होनी स्वाभाविक है। किसी संत को परखने के लिए, वास्तव में यह एक कसौटी है। ऐसा जीव हृदय तथा आत्मा से पूजा व आदर के योग्य है। जो कोई उसके संपर्क में आता है, आकर्षित हो जाता है, परमार्थ से भर जाता है और आध्यात्मिक मंडलों में ले जाया जाता है।

> तनु संतन का धनु संतन का मनु संतन का कीआ।।
> संत प्रसादि हरि नामु धिआइआ सरब कुसल तब थीआ।।
> संतन बिनु अवरु न दाता बीआ।।
> जो जो सरणि परै साधू की सो पारगरामी कीआ।।
>
> – आदि ग्रंथ (सोरठ म॰5, पृ॰610)

सत्गुरु का आदर्श आध्यात्मिक है, वह हमारी भाँति शरीर तक सीमित नहीं है। वह 'शब्द–सदेह' है।

> शब्द सदेह हुआ और हमारे बीच आकर रहा।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

स्थूल शरीर एक कपड़े की तरह से है, जिसे गुरु और शिष्य– दोनों को आध्यात्मिक यात्रा शुरू करने पर त्यागना होता है, क्योंकि केवल विशुद्ध आत्मा आध्यात्मिक मार्ग पर जाती है। लेकिन जब तक वह स्थूल मंडल मेंअपने बिछुड़े भाइयों के लिये एक गुरु के रूप में काम करता है, तो उसकी देह भी धन्य है। उस देह में प्रभु प्रकट होता है और हर एक इंसान उससे प्रसारित होने वाली रूहानी तरंगों से लाभान्वित होता है। इंसान का अध्यापक इंसान ही हो सकता है, और एक आदर्श मनुष्य ही सदा बाक़ी मनुष्यों का आदर्श रहता है।

जो इसे बुतपरस्ती मानते हैं, वे सत्गुरु की महानता नहीं जानते। यदि इसे 'मरदुम परस्ती' (मनुष्य की पूजा) भी कहा जाए, तो भी यह 'किताबी पूजा' और 'मूर्ति पूजा' से बहुत अच्छी है, क्योंकि यह निम्नतर चेतनता वाले व्यक्ति द्वारा उच्चतर चेतनता वाले महापुरुष की उपासना है। जीवन केवल जीवन से ही आ सकता है, जड़ पदार्थों से नहीं। महान सूफ़ी कवि, हज़रत अमीर ख़ुसरो अपने प्रसिद्ध दोहे में हमें बतलाते हैं :

ख़ल्क़ मी गोयद किह् ख़ुसरो बुत परस्ती मी कुनद,
आरे आरे मी कुनम बा ख़ल्क़ो-आलम कार नीस्त।

(अर्थात, लोग कहते हैं कि ख़ुसरो बुतपरस्त हो गया है। हाँ, हाँ, मैं हो गया हूँ; मुझे संसार के लोगों से क्या लेना–देना है।)

आगे, अमीर ख़ुसरो अपनी बीमारी की स्थिति में बिस्तर पर पड़े कहते हैं :

अज़ सरे-बालीने-मन बरख़ेज़ ऐ नादां तबीब,
दर्दमंदे-इश्क़ रा दारू बजुज़ दीदार नीस्त।

(अर्थात, ऐ अज्ञानी वैद्य! तुम अपनी छुट्टी करो। तुम्हें पता नहीं कि प्रेम–रोगी के लिये प्रियतम के दर्शन के अतिरिक्त अन्य कोई इलाज नहीं।)

इसी तरह, गुरु नानक ने अपने बचपन में, इसी प्रभु–प्रेम के दर्द के समय, इलाज करने आये वैद्य से चले जाने को कहा, क्योंकि वैद्य उनके हृदय का रोग नहीं पकड़ सका।

एक भक्त और सांसारिक विद्वान में कोई समानता नहीं होती। जिस किसी ने भक्तिभाव को जाना ही नहीं, वह किसी सत्गुरु के महत्व को नहीं समझेगा, जो कि सदेह–परमात्मा होता है और संसार में प्रभु की दया की ज्योति फैलाता है।

सच कहें, तो 'गुरु' लफ़्ज़ किसी व्यक्ति का सूचक नहीं है, यह एक कार्यशील सत्ता का द्योतक है, जो किसी विशेष व्यक्ति के माध्यम से कार्यरत है, और हम सभी का आदर्श है।

यह वह सत्ता है, जो आध्यात्मिक मंज़िलों पर आगे बढ़ाने में सहायक होती है। बड़ी भारी रोशनी की मीनार तरह से, वह (गुरु) संसार को दिव्य प्रकाश से भर देता है, और उस दिव्य प्रकाश के सामने कुछ अन्य दिखाई

नहीं देता है। अध्यात्म के चाहने वाले, पतंगों की भाँति, उसके इर्द–गिर्द इकट्ठे होकर, उस की प्रतापी व पवित्र ज्योति पर अपने को कुर्बान कर देते हैं।

कबीर साहिब फ़र्माते हैं :

गुरु को मानुष जानते, ते नर मूढ़ गँवार।
भव सागर के भंवर महि, डूबे बारंबार।।

गुरु को मानुष जानते, तन मन अधिक बिकार।
गुरु कीया है देह का, कैसे होय उधार।।

गुरु को मानस जानते, भगति भाव क्या होय।
तरे न तारे आपको, मूढ़ कहावै सोय।।

गुरु मानुष करि जानते, चरनामृत को पान।।
ते नर नरकै जाइंगे, जन्म जन्म ह्वै स्वान।।

– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 32, पृ.3)

बारहवाँ अध्याय

गुरु महापुरुष अथवा सतपुरुष है

इंसान के रूप में, गुरु एक आदर्श इंसान है, जिसके अंदर रूहानियत का सूर्य ही चमकता है। वह जीवन का स्रोत है। सतलोक से लेकर नीचे स्थूल मंडल तक के सभी लोकों का, समस्त दृश्य एवं अदृश्य सृष्टि का वह सार है। जैसे समुद्र को तैर कर पार करना असंभव है, ऐसे ही गुरु को पूरी तरह से जानना असंभव है। पानी में डुबकी लगाने के लिये कोई समुद्र के बीच में नहीं जाता, बल्कि नहाने का काम किसी घाट पर किया जाता है। ऐसे ही, पूर्ण पुरुष (गुरु) मालिक की सत्ता का घाट है, और उसके द्वारा हम प्रभु का प्रेम, ज्योति और जीवन पा सकते हैं।

यदि हम पूछें कि उसकी महानता कैसी है, वह कहाँ से आया है, कैसे आया है और जीवन में उसका उद्देश्य क्या है, तो यही कुछ कहा जा सकता है कि वह सतलोक से आया है, बीच के मंडलों (तपलोक, जनलोक, महर्लोक, सुवर्लोक, भुवर्लोक आदि) को पार करके इस भूलोक में आया है, ताकि अपनी प्रभुता को संसार के दुखी लोगों के समक्ष प्रकट कर सके।

> ऐ, संसारी-यातनाओं के भार से दबे सभी लोगों! मेरे पास आओ। मैं तुम्हें विश्राम प्रदान करूँगा।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 11:28)

> परमात्मा का पुत्र, जो खो गया था, उसे ढूँढ़ने और बचाने आया है।
>
> – पवित्र बाइबिल (लूका 19:10)

मुर्शिदे–क़ामिल (पूर्ण पुरुष–सत्गुरु) परमात्मा की विशेषताओं, गुणों और कलाओं का पूर्ण विकसित भंडार होता है। प्रभु की ज्योति उस में दमकती है और वह उसे मानवता के बीच प्रवाहित करता रहता है। जैसे

समुद्र के बीच में लहरें उठती रहती हैं, उसी तरह से प्रभु–प्रेम उसके अंदर ठाठें मार रहा होता है।

ठाठें मारता जल धरती के तटों को ऐसे घेरता है, जैसे वह पुजारी बनकर शुद्धिकरण कर रहा है।

– जॉन कीट्स [John Keats- 'Bright Star']

वह 'जीवन का जीवन' है और उसका सबसे बड़ा मिशन यही है कि उन सभी जीवों में जीवन–प्राण फूँके, जो अभी संसार के मायाजाल में बुरी तरह फँसे हुए हैं और प्रभु की ओर से बेख़बर हैं। परमात्मा को पूर्ण पुरुष के अंदर भली प्रकार देखा जा सकता है। यह कहा जाता है कि परमात्मा ने इंसान को अपनी ही शक्ल पर बनाया है और देवी–देवताओं को कहा कि उसे नमन करें।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

दर बशर रूपोश कर्द अस्त आफ़्ताब।

– मसनवी मौलाना रूमी, निकलसन (दफ़्तर 1:2964, पृ.182)

(अर्थात, उस परमात्मा ने रूहानी सूरज को इंसान में रख दिया है।)

जब एक व्यक्ति ब्रह्मांडीय चेतनता में ऊपर उठता है, तो उसे मालूम होता है कि सत्गुरु ही सारे ब्रह्मांड का केन्द्रबिंदु है। वह 'सत् देहधारी' होता है, ईश्वरीय गुणों से परिपूर्ण होता है और सभी के द्वारा वन्दनीय होता है।

वह मानवता का नेता और मार्गदर्शक होता है और उन सभी में महानतम, सर्वोच्च और परिपूर्ण होता है। वह श्रेष्ठता और अच्छाई का असली निवास स्थान है। वह परमात्मा का नमूना है, जो उसके वाइसरॉय के रूप में काम कर रहा होता है और उसके नियमों को सभी (स्थूल, सूक्ष्म व आत्मिक) मंडलों में लागू करा रहा होता है। वह तीव्र निर्णय शक्ति, आंतरिक दूरदृष्टि और विवेकशक्ति से संपन्न होता है। संभव है कि वह अनपढ़ हो, फिर भी वह सब से अधिक शिक्षित होता है। इंसान के रूप में वह सभी पवित्र लोगों से पवित्रतम होता है तथा सबसे अधिक प्रिय होता है। उसका प्रेम सभी समाजों, देशों, राष्ट्रों और क़ौमों से बहुत ऊपर होता है। उसका अपना आपा, पूरी मानवता तक फैला होता है। वह विश्व नागरिक होता है और वह सभी के भले की बात कहता है। संक्षेप में, वह

परमात्मा का नियुक्त किया हुआ, उसी का रूप होता है, जो उसके प्रेम, ज्योति और जीवन को भूली–भटकी मानव–जाति के साथ बाँटने के लिये आता है।

इस संसार में वह दूसरे व्यक्तियों की भांति ही रहता है, पर संसार में रहता हुआ भी वह संसार से निर्लेप रहता है। हर किसी के लिए उसका प्रेम, माता–पिता के प्रेम से बहुत अधिक होता है। वह हमारी कमियों को देखकर भी अनदेखा कर जाता है और मुस्कुराते हुए, उन कमियों से ऊपर उठने में हमारी सहायता करता है। मसीहे की भाँति कृपा से भरपूर वह मानव पुत्र, अपने कष्टों की परवाह किए बिना, रास्ता भूली आत्माओं को वापिस निजधाम ले जाने के लिए अनथक काम करता जाता है।

वह मनुष्य जैसा दिखाई देता है, पर वास्तव में वह मनुष्य ही नहीं, वह आदर्श मनुष्य से भी कहीं ऊपर होता है। वह शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक– हर पहलू से सम्पूर्ण होता है, क्योंकि वह परमात्मा का रूप होता है। वह पूर्ण समर्थ होते हुए भी क्षुद्र से क्षुद्र होकर, विनम्र से विनम्र होकर काम करता है। उसमें शक्ति के साथ दीनता, बुद्धि के साथ प्रेम और महानता के साथ विनम्रता का अद्‌भुत मेल दिखाई देता है।

वह 'सत्' का गुरु होता है और एक आदर्श मनुष्य से भी बहुत बढ़–चढ़कर होता है। उसका साम्राज्य समय और आकाश की सीमाओं से परे, शुद्ध आध्यात्मिक मंडलों तक फैला हुआ होता है। वह जब चाहे इच्छानुसार, अपने स्थूल शरीर को छोड़ कर, सूर्य और चाँद से आगे, सूक्ष्म और कारण मंडलों को पार करता हुआ, पार–ब्रह्म तथा उससे भी आगे की यात्रा करता है।

इतने आविष्कारों और भौतिक उन्नति को पाने के बाद भी विज्ञान आज अंधकार में भटक रहा है। सभी वैज्ञानिक खोजें अभी तक भौतिक जगत तक ही सीमित हैं। वैज्ञानिक अपनी पूरी मानसिक और नैतिक शक्ति के साथ निरन्तर कार्य करते जा रहे हैं, पर उन्हें उन मंडलों का कोई अंदाज़ा नहीं है, जिनमें कि एक सत्गुरु, अपनी मौज और ख़ुशी से आ जा सकता है।

जो सत्गुरु की शिक्षाओं पर भरोसा करते हैं और उसकी आज्ञानुसार जीवन व्यतीत करते हैं, वे स्वयं उन मंडलों को देख सकते हैं। सभी संत एक ही बात कहते हैं :

प्रभु का साम्राज्य हमारे अंदर है।

क्राइस्ट हमें बतलाते हैं :

प्रभु का साम्राज्य बाहर देखने से नहीं आता और ना ही लोग ऐसा कहेंगे कि वह यहाँ है या वह वहाँ है, क्योंकि देखो! परमात्मा का साम्राज्य तुम्हारे अंदर है।

– पवित्र बाइबिल (लूका 17:20-21)

और गुरुवाणी में हमें मिलता है :

घरै अंदरि सभु वथु है बाहरि किछु नाही।।...
बाहरु भाले सु किआ लहै वथु घरै अंदरि भाई।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰3, पृ॰425)

सभ किछु घर महि बाहरि नाही ॥ बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही।।

– आदि ग्रंथ (माझ म॰5, पृ॰102)

यह मानव–तन सच्चा हरि–मंदिर है। यही सच्चा गिरजा, मस्जिद या पूजागृह है, जो प्रभु के हाथों से बना है और कितने अफ़सोस की बात है कि हम प्रभु को इंसानी हाथों से बनाए गए ईंट–पत्थरों के पूजास्थलों में ढूँढते हैं। जो मन को क़ाबू करना तथा आत्मा की प्रयोगशाला में प्रयोग करना जानते हैं, वे अंतर में अद्‌भुत नूरी दृश्यों को देख सकते हैं तथा दिव्य संगीत के रागों को सुन सकते हैं।

काइआ अंदरि सभु किछु वसै खंड मंडल पाताला।।
काइआ अंदरि जगजीवन दाता वसै सभना करे प्रतिपाला।।...
काइआ अंदरि रतन पदारथ भगति भरे भंडारा।।
इसु काइआ अंदरि नउखंड पृथमी हाट पटण बाजारा।।
इसु काइआ अंदरि नामु नउ निधि पाईऐ गुर कै सबदि वीचारा।।

– आदि ग्रंथ (सूही म॰3, पृ॰754)

महान दार्शनिक, सनाई साहिब हमें बतलाते हैं :

आसमाँ हास्त दर विलायते जाँ,
कार फ़रमाए आसमाने जहाँ।
दर रहे रूह पस्त-ओ बाला हास्त,
कोहहाए बलंद व दरिया हास्त।

(अर्थात, मानव शरीर में अनगिनत लोक और शक्तियाँ हैं, जो कार्य करती जाती हैं। आत्मा को बहुत से ऊँचे और निचले मंडलों, पहाड़ों और नदियों एवं घाटियों को पार करना होता है। ऐसे बहुत से मैदान, समुद्र, जंगल, और पहाड़ हैं, जिनके बारे में कोई सोच भी नहीं सकता है। इस महान सृष्टि के आगे यह विश्व, एक छोटे से कण के समान लगता है।)

मानव शरीर (पिंड), परमात्मा का मंदिर होने के कारण, इस महान सृष्टि (ब्रह्मंड) का एक नमूना है और जो कोई इसके अंदर जाता है, वही वास्तव में सृष्टि के रहस्य को जान पाता है :

जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै।।

– आदि ग्रंथ (धनासरी पीपा, पृ॰695)

असल में इंसान बहुत महान है, क्योंकि उसके अंदर अनगिनत दातें रखी हुई हैं; पूरा ब्रह्मांड ही इंसानी शरीर में मौजूद है। लेकिन हम बाहरी आवरण (शरीर) को ही देखते रहते हैं और जो शक्ति इसके पीछे काम करती हैं, उस के बारे में अनजान रह जाते हैं। हम शरीर को रोटी–पानी देते हैं, इसका पालन–पोषण करते हैं, परन्तु इसकी जड़ (आत्मा) को सूखा छोड़ देते हैं। सृष्टि के वृक्ष की जड़ें सूक्ष्म मंडलों में हैं, जहाँ हम अंतर्मुख होने के बाद ही पहुँच सकते हैं।

निश्चय ही मैं तुमसे कहता हूँ कि जो कोई भी परमात्मा के साम्राज्य में एक छोटे बच्चे जैसा, सरल-स्वभाव होकर नहीं जाना चाहेगा, वह उसके अंदर प्रवेश नहीं पा सकेगा।

– पवित्र बाइबिल (मरकुस 10:15)

लेकिन दुर्भाग्य से हम कभी अंदर झांकते तक नहीं, क्योंकि हम छोटे बच्चे जैसा सरल–स्वभाव बनना नहीं चाहते। एक महान दार्शनिक, एमर्सन भी हमें 'अंतर में खटखटाने' को कहते हैं। बर्गसन भी कहते हैं कि हम अंतर में 'छलांग लगाएँ', ताकि समस्त ज्ञान के स्त्रोत तक हम पहुँच जाएँ।

हम अंदर किस प्रकार जा सकते हैं, अंदर कैसे खटखटा सकते हैं या ईसा के शब्दों में 'छोटे बच्चे' कैसे बन सकते हैं, इसकी विधि सत्गुरु हमें विस्तार से समझाते हैं, सिद्धांत रूप में भी (अपने वचनों द्वारा) तथा व्यावहारिक रूप में भी (हमें निजी अनुभव प्रदान करके)। इतना ही नहीं,

सत्गुरु विभिन्न रूहानी मंडलों पर भी रूह के अंग संग रहते हैं, उसका मार्गदर्शन करते हैं।

संत आध्यात्मिक जगत के वैज्ञानिक होते हैं और परा–विद्या के गुरु होते हैं, परे की विद्या, अर्थात जिसका कि ज्ञान तर्क और बुद्धि से बहुत परे हो तथा जिसे सीखने या जानने के लिये आंतरिक बोध की आवश्यकता हो।

यह इंद्रियों से परे का ज्ञान है, जिसे कि आधुनिक मनोवैज्ञानिक खोजकर्ता Extra-Sensory Perception (ESP) कहते हैं। डॉक्टर जे. डी. रिने हमें अपनी पुस्तक 'माइंड एंड दी न्यू वर्ल्ड – मन और नई दुनिया' में बतलाते हैं कि मनोवैज्ञानिकों ने अपनी खोजों के द्वारा पता लगाया है कि ऐसी 'कोई चीज़' मनुष्यों के अंदर काम कर रही है, जो भौतिक कानूनों से ऊपर होती है।

सत्गुरु उस 'कोई चीज़' की पूरी जानकारी रखते हैं और इंद्रियों से परे का पूरा ज्ञान प्रदान कर सकते हैं, जैसे आँखों का डॉक्टर ऑपरेशन करके आँखों की ज्योति प्रदान कर सकता है। बुद्ध की तरह से सत्गुरु हमें बतलाते हैं कि भौतिक जीवन कष्टों से भरा है, परन्तु इसके परे अनगिनत सूक्ष्म मंडल हैं, जहाँ हमें ज्योति ही ज्योति मिलती है, आनंद ही आनंद मिलता है। वह प्रतिदिन उन मंडलों में जाता है और वहाँ के अपने अनुभव के बारे में हमें बतलाता है। जो उसके आदेशों का पालन करते हैं और मन की प्रयोगशाला में प्रवेश कर उसके मार्ग दर्शन में सूक्ष्म मंडलों को देखते हैं, जैसे कि हम स्थूल जगत को देखते हैं, तो उनके अनुभव और नतीजे वैसे ही निश्चित और ठोस होते हैं, जैसे कि दो और दो चार होते हैं।

तेरहवाँ अध्याय

सत्गुरु और जीवों की निजघर वापिसी

संत-सत्गुरु अपने आध्यात्मिक निवास से निकल कर जीवों को अपने घर वापिस ले जाने के लिये आते हैं।

मेरे पास कोई नहीं आ सकता, जब तक कि मेरा पिता, जिसने मुझे भेजा है, उसे न बुलाये।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:44)

हमारी आत्मा की ज़ात वही है, जो परमात्मा की है। उस परमानंद के सागर से अलग होने के कारण यह मन और तन के कारागार में क़ैद हो गई है। संत अपने आत्मिक निवास, सतलोक से निकल कर ऐसी आत्माओं को, जो वापिस जाने के लिये तैयार हों, निज–घर वापिस ले जाने के लिए आते हैं।

वास्तव में, परमात्मा स्वयं इंसान का रूप धारण करके आता है, ताकि जीवों को, काल के पंजे से छुड़ा सके। यह उस महान समझौते या नियम के अंतर्गत है कि इंसान का अध्यापक इंसान ही होता है, जो उसे सच्ची मुक्ति का रास्ता दिखाता है और उसे ख़ुशी–ख़ुशी अपने निज–घर वापिस ले जाता है।

जब मुर्दे परमात्मा के पुत्र (सत्गुरु) की आवाज़ सुनेंगे ...जो सुनेंगे वे जीवन पायेंगे।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 5:25)

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ।।

– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰678)

परमात्मा से एकमेक होने के कारण वे संसार में उसकी आज्ञा से उसके प्रतिनिधि बनकर आते हैं और जीवों को निज–घर ले जाने वाले

नियमों का पालन करा के, उन्हें वहाँ ले जाते हैं। उनका यही मिशन (उद्देश्य) है और वे उसे पूरा करते हैं। शम्स तबरेज़ अपने बारे में हमें बतलाते हैं :

तु चिह् दानी किह् मा चिह् मूर्ग़ानेम,
हर नफ़स ज़ेरे लब चिह् मेख़्वानेम।
गर बसूरत गदाए ईं कुएम,
बसिफ़त बीं किह् मा चिह् सुलतानेम।
गरचिह मा मुफ़लिसेम दर ज़ाहिर,
तू ब-बातन निगर किह् मा कानेम।
चूँकिह् मा ख़ुद शहीम दर हमा मिसर,
चिह् ग़म इमरोज़ गर बज़िंदानेम।
कै बमानेम अन्दरीं ख्राना,
चूँ दरीं ख़ाना जुमला मिहमानेम।
क़ौल-हा करदा एम बा शह ख़्वेश,
हेच ज़-आं क़ौल रु न गरदानेम।
ता दरीं ख़िरक़ा एम अज़ कस मा,
हम नरंजेम ओ हम नरंजानेम।
हमचू फ़िरदौस पुर ज़ नूर ओ नईम,
ख़ुरम ओ ख़ुशदिलेम व ख़ंदानेम।

— कुल्लीयाते–शम्स तबरेज़ (पृ.876)

(अर्थात, तुम क्या जानो कि हम किस आकार के पक्षी हैं और हर समय क्या गाते रहते हैं! हम भिखारी बेशक़ लगते हों, परन्तु हमारे गुणों को देखो, हम कैसे बादशाह हैं। हम ग़रीब बेशक़ लगते हों, लेकिन हम सबसे बड़े दौलतमंदों से भी ज़्यादा दौलतमंद हैं। जब हम बादशाहों के भी बादशाह हैं, तो इस संसार के क़ैदख़ाने में अपने अल्पकालीन प्रवास की परवाह क्यों करें? हम तो यहाँ पर तीर्थयात्री जैसे हैं और बहुत ज़्यादा देर यहाँ हम रह भी नहीं सकते। हमारा परमात्मा के साथ एक इक़रार हुआ है और हमें उसे पूरा निभाना है। जब तक हम इस जिस्म में हैं, हम किसी से नाराज़ नहीं होते और न ही हम किसी को नाराज़ करते हैं। हम दिव्य लोकों के जैसे, पुरनूर [ज्योतिर्मय] हैं और सदा अपने होंठों पर मुस्कराहट लिये, प्रसन्न–हृदय से जीवित रहते हैं।)

इसी तरह से गुरु गोबिंद सिंह जी महाराज हमें बतलाते हैं :

इह बिधि करत तपिसआ भयो।। द्वै ते एक रूप है गयो।।
चित न भयो हमरो आवन कहि।। चुभी रही स्नुति प्रभु चरनन महि।।
जिउ तिउ प्रभ हम को समझायो।। इम किह कै लोकि पठायो।।

– दसम ग्रंथ (बचितर नाटक, पृ॰55)

कबीर साहिब भी फ़र्माते हैं :

कहे कबीर हम धुर के भेदी, लाये हुकम हज़ूरी।

पवित्र बाइबिल में भी आता है :

मैं अपने आप कुछ नहीं करता, लेकिन जैसा मेरे पिता ने मुझे सिखलाया है, मैं वैसी बातें कहता हूँ।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 8:28)

गुरुवाणी में भी हमें ऐसे ही उल्लेख मिलते हैं:

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो।।

– आदि ग्रंथ (तिलंग म॰1, पृ॰722)

जिउ बुलावहु तिउ नानक दास बोलै।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰292)

चौदहवाँ अध्याय

सत्गुरु और उसका मिशन

दुखी मानवता के प्रति दयाभाव के कारण ही, संत–सत्गुरु संसार में अवतरित होते हैं।

> संसार के दुखों से बहुत दबे मेहनतक़श लोगों! मेरे पास आओ! और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 11:28)

क्योंकि उन्हें इस दुनिया में मनुष्यों के बीच रहकर काम करना होता है, इसीलिये वे गंदगी से भरे इस तनरूपी चोले को धारण करते हैं।

> प्रभु गंदगी से भरा इंसानी जामा पहनकर आता है, ताकि वह इतना कमज़ोर हो जाए कि वह कष्ट झेले।
>
> – जॉन डॉन [John Donne- Holy Sonnets]

लेकिन उनका संसार से आने–जाने का तरीक़ा हम लोगों से अलग है। वे अपनी इच्छा से आते–जाते हैं, जबकि हम लोग असहनीय कर्मों के बोझ से आते–जाते हैं, जैसे कि एक क़ैदी कारागार में किसी कानूनी दंड को भुगतने के लिये आता है। वे मानवता के भले के लिये आते हैं– वे आत्माएँ जो कि अमर जीवन पाने को तरसती हैं, उन्हें वे अमर जीवन–ज्योति देने आते हैं। वे हमेशा जिस्म की क़ैद से आज़ाद होते हैं तथा हमारी आत्माओं के रक्षक बनकर आते हैं।

> जो स्वस्थ हैं, उन्हें वैद्य की आवश्यक नहीं, परन्तु जो बीमार हैं, उन्हें उसकी आवश्यकता है। जो शुद्ध आचरण रखते हैं, मैं उन्हें बुलाने नहीं, बल्कि जो पापी हैं उन्हें पश्चाताप कराने आया हूँ।
>
> – पवित्र बाइबिल (मरकुस 2:17)

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए॥
जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए॥
– आदि ग्रंथ (सूही म॰5, पृ॰749)

इस धरती पर एक संत–महापुरुष सबसे बड़ा दाता है, उसका कार्य सबसे महान है। वह आत्माओं को मन और माया के कारागार से छुड़ाने आता है, ताकि वह निज देश से निकाली हुई आत्माओं को वापिस अपने देश पहुँचा दे और उनकी खोई हुई शान पुनः दिला दे।

एक परोपकारी व्यक्ति किसी क़ैदख़ाने में क़ैदियों को स्वादिष्ट भोजन प्रदान करा सकता है। दूसरा व्यक्ति उन्हें मिठाइयाँ खिला सकता है। तीसरा परोपकारी व्यक्ति उन कैदियों को अच्छे कपड़े और रहने का बेहतर प्रबंध करा सकता है और इसी तरह दूसरों अन्य दयालु व्यक्ति उन कैदियों को और अन्य क़िस्म की सुविधाएँ दिला सकते हैं। निःसन्देह उन में से प्रत्येक, उन क़ैदियों के कष्टों को मिटाने में हाथ बँटाता है।

लेकिन अगर कोई आकर जेल के दरवाज़े खोल कर उन क़ैदियों को कहे कि तुम क़ैद की इस मुसीबत से निकल कर आज़ाद होकर भाग लो, तो स्वाभाविक है कि उसका परोपकार अन्य सभी के परोपकार से बड़ा होगा।

एक संत–सत्गुरु का मिशन ठीक ऐसा ही होता है। वह हमारे सामने खोए हुए साम्राज्य को प्रकट करता है और उस स्वर्ग में प्रवेश की अनुमति दिलाता है, जहाँ से आदम और उसकी संतानों को परमात्मा के आदेश का मूल उल्लंघन करने के कारण बाहर निकाल दिया गया था।

मनुष्य को स्वर्ग के बाग़ीचे से अपमानित करके निकाला गया और इंसान के बेटे (सत्गुरु) के अलावा कोई अन्य उसकी इज़्ज़त बहाल नहीं करा सकता और उसको पिता (प्रभु) के सामने नहीं ले जा सकता। मनुष्य के पापों की ज़िम्मेवारी वह अपने ऊपर ले लेता है, उसकी सभी कमियों को वह धो डालता है और अपना जीयादान देकर, वह उसे ब्रह्मांडीय चेतनता में जाग्रत करता है और अमर जीवन देता है।

जो परमात्मा के पुत्र (सत्गुरु) पर विश्वास करेगा, उसे अमर जीवन प्राप्त होगा।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 3:36)

पंद्रहवाँ अध्याय

गुरु और उसका काम

सत्गुरु कल्पवृक्ष (संकल्प करते ही फल देने वाला) के समान होता है। वह शिष्यों की इच्छाओं को, चाहे वे कैसी भी क्यों न हों, हमेशा पूरा करता है। अमीर व ग़रीब और ऊँचे व नीचे– सभी उसके दर पर कुछ न कुछ माँगने आते हैं। लेकिन उसकी सबसे बड़ी ख़ुशी इस बात में छुपी रहती है कि वे मन और शरीर के बंधनों से आज़ाद हो जाएँ। बाहर से किसी एक धर्मसमाज से जुड़ा होकर भी, वह सभी लोगों की आत्मिक ज़रूरतों पर ध्यान देता है और उन्हें पूरा करता है।

वह न तो किसी प्रचलित धर्मों व 'वादों' का खंडन करता है और न ही कोई नया 'वाद' बनाता है। वह परमात्मा के नियमों को तोड़ने नहीं, बल्कि उन्हें पूरा करने आता है। वास्तव में सभी (रूहानी) 'वाद' उससे शक्ति और सहारा प्राप्त करते हैं।

वह अपने अनूठे प्यार भरे तरीक़े से प्रत्येक को ऐसे रास्ते से लेकर जाता है, जिसमें सबसे कम मुश्किलें हों। वह किसी व्यक्ति के मत, विश्वास व विचारों में हस्तक्षेप नहीं करता, चाहे वे कैसे भी हों और न ही वह सामाजिक तौर–तरीक़ों में व्यवधान डालता है। वह केवल आत्मा की बात करता है: इसके क्या गुण हैं, शरीर में इसका ठिकाना कहाँ है, आत्मा कैसे कार्य करती है, इसमें क्या–क्या क्षमताएँ छुपी हैं, कैसे यह मन और शरीर के बंधनों से आज़ाद हो सकती है और कैसे बाहर से हटकर और अंतर्मुख होकर, परमात्मा की ओर जा सकती है।

वह सीधा आत्मा का आह्वान करता है और उसके शब्द आत्मा की गहराइयों में उतर जाते हैं। वह नक़द पूँजी का व्यापार करता है और लोगों को उधार धर्म का या मरने के बाद मुक्ति का भरोसा नहीं दिलाता।

वह सिखलाता है :

जब लग न देखूँ अपनी नैणी। तब लग न पतीजूँ गुरु की बैणी।।

– स्वामीजी महाराज, सार बचन

शुरू में तो हमें, एक प्रयोग के जैसे, गुरु की बातों को स्वीकार करना पड़ता है। लेकिन जब हम वास्तविक साधन–अभ्यास द्वारा उसके कथनों की सच्चाई को स्वयं अनुभव कर लेते हैं, तो हमारा विश्वास दृढ़ हो जाता है।

जब व्यक्ति एक बार सूर्य के प्रकाश को देख लेता है, तो वह सूर्य के अस्तित्व को नकार नहीं सकता, चाहे दुनिया भर के चमगादड़ एकजुट होकर सूर्य के अस्तित्व को नकारते रहें।

जब तक कि अंतर की आँख न खुले, सच्चाई प्रकट नहीं होती और देहधारी आत्माएँ गहनतम अंधकार और अज्ञान में भटकती रहती हैं।

जब–जब भी सत्गुरु संसार में आते हैं, रूहानियत के भूखे–प्यासे लोग उनके इर्द–गिर्द इकट्ठे हो जाते हैं और उस जीवन के अमृत और दिव्य अन्न से अपनी भूख–प्यास बुझाते हैं, जिसे सत्गुरु दोनों हाथों से निःशुल्क बाँटते हैं।

शनैः–शनैः उनकी प्यास एक सतत् भक्ति में बदल जाती है, जिससे सत्गुरु की दया उन्हें पहले से अधिक मिलने लगती है और यह जीवों को निजगृह जाने की यात्रा में सहायता प्रदान करती है।

सोलहवाँ अध्याय

गुरु और उसका कर्तव्य

सत्गुरु के कर्तव्य और उत्तरदायित्व अनगिनत हैं। उसका सबसे बड़ा कर्तव्य है, सृष्टिकर्ता के साथ जीवों को जोड़ना, उनके लिये परमात्मा की बादशाहत को प्राप्त कराना और युगों–युगों से भूली हुई उनकी पुरातन विरासत को उन्हें वापिस दिलाना। यह काम वह 'शब्द' या 'नाम' के द्वारा करता है, जिस पर सवार होकर आत्मा अपने निज–घर पहुँच जाती है।

विद्युत–चुंबकीय (Electro-magnetic) तरंगों की भाँति, 'शब्द' या 'नाम' हर जगह बज रहा है, लेकिन दुर्भाग्यवश, इस भूमंडल पर मन–माया के ज़बरदस्त प्रभाव की वजह से, हम इसे महसूस नहीं कर पाते और इसका फ़ायदा नहीं उठा पाते।

एक सत्गुरु अपने निजी मार्गदर्शन द्वारा, आत्मा को माया के बंधन से आज़ाद करता है, इसे इंद्रियों के घाट से हटाता है, इसकी बिखरी हुई तरंगों को सिमेटता है और इसके ठिकाने पर एकत्र करता है, जो कि दो भौंवों के बीच और पीछे है, जिससे इसे परमात्मा की ज्योति को देखने का और परमात्मा की आवाज़ को सुनने का कुछ अनुभव मिल जाता है; इन्हें लगातार अभ्यास द्वारा विकसित किया जा सकता है।

तब जीव अपने आप को 'शब्द–ध्वनि' की आकर्षक शक्ति से खिंचा हुआ पाता है, जो क़दम दर क़दम उसे उसकी आख़िरी मंज़िल की तरफ़ ले जाती है। सत्गुरुओं के इस आत्म–विज्ञान को सिर्फ़ बुद्धि के स्तर से समझ लेना काफ़ी नहीं और इंसान चाहे कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, मात्र बौद्धिक जानकारी से इस मार्ग पर कोई लाभ नहीं पहुँच सकता।

एक सदाचारी जीवन, अध्यात्म की मंज़िल के प्रति पहला क़दम है। प्रभु के बाद दूसरा दर्जा मन की सफ़ाई को दिया जाता है। इसलिये सत्गुरु

का सबसे पहला काम है– इंसान को असली मा'नों में इंसान बनाना। मन, वचन तथा कर्म से पवित्रता की अनिवार्यता को आवश्यकता से अधिक बल नहीं दिया जा सकता। क्योंकि आत्म–ज्ञान प्रभु–ज्ञान से पहले आता है, इसलिए सत्गुरु प्रारम्भ में अध्यात्म का सैद्धांतिक ज्ञान भी देता है और उसका निजी अनुभव भी, ताकि आत्मा, मन और तन के बंधनों से स्वतंत्र हो पाये।

धीरे–धीरे, आत्मा इसके योग्य हो जाती है कि अपने ऊपर चढ़े विभिन्न आवरणों को हटाकर फेंक सके, और तब यह माया से रहित हो जाती है और कह उठती है– 'मैं आत्मा हूँ।'

इसके पश्चात ही प्रभु–ज्ञान मिलता है, जो कि इस आत्म–विज्ञान का चरमोत्कर्ष और शिखर है और आत्मा की प्रभु–प्राप्ति में सहायता करता है।

जब गडरिया (गुरु) अपनी खोई हुई भेड़ों को अपने दायरे में ले लेता है, अपनी शरण में ले लेता है, तो उनकी सारी ज़िम्मेदारियाँ भी अपने ऊपर ले लेता है। सत्गुरु सदा के लिये सत्गुरु होता है– यह एक जाना–माना नियम है। जो पृथ्वी पर सत्गुरु है, वह विभिन्न मंडलों– सूक्ष्म, कारण और उससे परे भी सत्गुरु ही होता है। जब तक कि वह आत्मा को सुरक्षित रूप से परमात्मा के दिव्य लोक में पहुँचा न दे, वह चैन से नहीं बैठता।

निज–घर लौटना और आध्यात्मिक मार्ग पर उन्नति पूरी तरह सत्गुरु की मर्ज़ी पर निर्भर करती है, और सिर्फ़ वही प्रभु की ओर उठने वाले हर क़दम का और उसमें लगने वाले समय का फ़ैसला करता है।

जिस क्षण आत्मा सूक्ष्म मंडल में पहुँचती है और सत्गुरु के दिव्य स्वरूप का साक्षात्कार करती है, उसके बाद जीव के करने के लिये कुछ नहीं बचता। इसके बाद तो सत्गुरु का ही काम बचता है।

इसके अतिरिक्त, सत्गुरु ज्योति–पुत्र होता है और जैसे तूफ़ानी समुद्र में रोशनी का स्तंभ अपनी तेज़ रोशनी से मदद करता है, वैसे ही संसार भर के ऊपर वह अपनी कृपामयी ज्योति बिखेरता रहता है। अच्छे गडरिये की तरह से, उसे भी अनेक शिष्यों (भेड़ों) की देखभाल करनी होती है। जिस किसी का भी सत्गुरु से कोई संपर्क रहा होता है, अंत में उसे भी इस मार्ग पर चलने के लिये तैयार किया जाता है और उसकी प्रशिक्षण तथा परीक्षा अवधि तक उसे सत्गुरु की सहायता मिलती रहती है।

सत्रहवाँ अध्याय

सत्गुरु– प्रभु का अवतार

वास्तव में गुरु प्रभु का पूर्ण प्रकट स्वरूप होता है। वह प्रभु की दिव्य ज्योति से परिपूर्ण होता है और प्रभु के पथ का मार्गदर्शक होता है। वह एक स्तंभ है, जिस पर परमात्मा प्रकट होकर जीवों के उद्धार की योजना को साकार रूप देता है।

परमात्मा ने इंसान को अपने जैसा बनाया, परन्तु उसने अपने आप और आत्माओं के बीच एक वज्र–कपाट खड़ा कर दिया, और ऐसा परमात्मा के आदेश के सर्वप्रथम उल्लंघन के पाप के कारण हुआ। इस तरह से इंसान को निज–धाम या 'अदन के बाग़' (Garden of Eden) से निकाल कर स्थूल जगत में भेज दिया गया, जैसा कि बाइबिल की कहानी में आता है, ताकि वह मेहनत से अपनी रोज़ी–रोटी कमा सके और किसी मानव पुत्र की मदद से मुक्ति का रास्ता प्राप्त कर सके– ऐसा मानव पुत्र, जिसके रूप में परमात्मा स्वयं अवतरित होता है। उसके पास निज–घर की बादशाहत की कुंजी होती है, ताकि वह उसे खोल कर अपनी खोई हुई जीवरूपी भेड़ों को वहाँ पहुँचा सके।

'शब्द' शरीर धारण करके हमारे बीच निवास करता है। प्रभु की ज्योति उसकी आँखों से चमकती है, उसके गले से प्रभु बोलता है और जो प्रभु की कृपा के लिये भूखे–प्यासे होते हैं, उन्हें प्रभु–कृपा उसके द्वारा प्राप्त होती है। एक साधारण इंसान की भाँति वह हमारे बीच में रहता है, हमारे सुख–दुख का साथी बनता है, हमें अध्यात्म का पाठ पढ़ाता है और अध्यात्म की राह पर हमारा मार्गदर्शन करता है। वह परमपिता से एकमेक होता है, अतः वह उसकी इच्छा की पूर्ति करता है।

> मेरे पिता ने मुझे सब कुछ सौंपा है, और कोई इन्सान पुत्र को नहीं जानता, केवल पिता के; और कोई इन्सान पिता को नहीं

जानता, केवल पुत्र के और उसके, जिस पर पुत्र उसे प्रकट करना चाहे।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 11:27)

मौलाना रूमी भी फ़र्माते हैं:

चूँ किह् करदी ज़ाते-मुर्शिद रा क़बूल,
हम ख़ुदा दर ज़ातश आमद हम रसूल।

- किताब–उल–बैअत (पृ.8)

दो मगो ओ दो मख़्वाँ ओ दो मदाँ,
बन्दा रा ख़्वाजाए ख़ुद महव दाँ।
गर जुदा बीनी ज़ हक़ ईं ख़्वाजा रा,
गुम कुनी हम मतन ओ हम दीबाजा रा।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 6, पृ.309)

पीर व हक़ रा दो ज़ अहवली हर किह् दीद,
ऊ मरीद़ अस्त दर हक़ीक़त नै मुरीद।

- किताब–उल–बैअत (पृ.8)

(अर्थात, अगर तूने मुर्शिद की ज़ात को क़बूल कर लिया, तो उसमें ख़ुदा और रसूल [मध्यस्थ]– दोनों आ गए, दोनों में कोई अंतर नहीं। अगर तू मुर्शिद को ख़ुदा से अलग समझेगा, तो भटक जाएगा और परमार्थ के मूल तत्त्व को खो देगा। जो मुर्शिद को ख़ुदा से अलग मानता है, उन्हें दो समझता है, वह मरीद (मरा हुआ) है, मुरीद [शिष्य] नहीं।)

सत्गुरु निर्गुण व अरूप परमात्मा का रूप होता है– वह ऐसा स्वरूप है, जिसे हम देख सकते हैं और जिसके साथ संबंध जोड़ सकते हैं। यह वह स्वरूप है, जो हमें परमात्मा का ज्ञान प्रदान करता है और वही अपने नूरी अवस्था में परमात्मा की ओर जाती आत्मा के संग चलता और उसका मार्गदर्शन करता है।

प्रत्येक मंडल में– स्थूल, सूक्ष्म, कारण और उससे भी परे– सत्गुरु की शान बढ़ती जाती है, और जैसे–जैसे आत्मा दिव्य मंडलों में चढ़ाई करती जाती है, उसे सत्गुरु की असीम हुकूमत और शक्तियों का अधिक से अधिक अनुभव होने लगता है।

क्योंकि वह ख़ुदा का अवतार है, इसलिए वही मुसलमानों का क़िबला और काबा है, ईसाइयों का पूजास्थान है, यहूदियों की अमर ज्योति है, वही मंदिर है, यहूदी प्रार्थना भवन (Synagogue) और गुरुद्वारा है, क्योंकि अकेला वही पूजनीय है।

जैसे बिजली वातावरण में सर्वत्र भरी होती है, उसी तरह से परमात्मा भी समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त है। ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ वह न हो और फिर भी वह नज़रों से ओझल होकर छिपा रहता है। गुरु या सत्गुरु वह शक्तिशाली स्विच, वह स्त्रोत व सोमा होता है, जिसके द्वारा हम भी उस प्रभु की महानता की, उसकी शक्ति की एक झलक पा सकते हैं।

संक्षेप में, सत्गुरु वह स्तंभ है, जिसके केन्द्र पर परमात्मा काम करता है, इसीलिये यदि उसे सदेह–प्रभु कह लें, तो उचित ही होगा। यह परमात्मा की उस गुप्त अवस्था से भिन्न है, जो सर्वत्र विद्यमान है, पर फिर भी हम उसे नहीं जान पाते।

प्रभु की महानता व शक्ति सत्गुरु में खुल कर प्रकट है। जब तक कोई व्यक्ति किसी सत्गुरु के संपर्क में नहीं आता, उसके लिए परमात्मा मात्र एक विचार ही होता है, एक ऐसी छाया ही होता है, जिसका कोई सार नहीं।

सत्गुरु इस धरती पर चलता–फिरता प्रभु होता है, वह हमारे साथ बातें करता है, हमारे साथ मुस्कुराता है, और अपने शब्दों और निजी उदाहरणों द्वारा, हर क़दम पर हमारा मार्गदर्शन करता है। वह आत्मा धन्य है, जो जीवित सत्गुरु से जुड़ जाती है– और यह इंसान के लिए परमात्मा की सबसे बड़ी भेंट है।

वास्तव में इंसान ही इंसान का शिक्षक (गुरु) है। जब तक कोई सत्गुरु हमें दिव्य ज्योति न दे, हम उसे नहीं पा सकते और अंधे व्यक्ति की भाँति घोर अंधकार में भटकते रहते हैं।

स्थूल संसार में हम इन स्थूल आँखों से अपने इर्द–गिर्द के स्थूल पदार्थों के अतिरिक्त कुछ और नहीं देख पाते। सूक्ष्म दृष्टि से ही सूक्ष्म संसार देखा जा सकता है और कारण दृष्टि से कारण जगत। तीनों लोकों तथा उससे भी परे का मालिक होने के कारण, वह आंतरिक ज्योति प्रदान करता है, जो कि आंतरिक अंधकार को दूर कर देती है और तब व्यक्ति

दिव्य मंडलों के अनंत मनोरम दृश्य देखने लगता है, जो दिन–प्रतिदिन बढ़ते जाते हैं और हर क़दम पर नई ख़ुशियाँ लाते हैं। ये सभी काम वह शब्द–धारा या परमात्मा की ध्वनि के द्वारा करता है, जिसे सुनकर मुर्दों में भी जान आ जाती है और वे अनंत जीवन पा जाते हैं। वह परमात्मा और जीवात्मा को जोड़ने वाली कड़ी है। उसकी जड़ें परमात्मा से जुड़ी होती हैं और शाखाएँ सारे संसार में फैली होती हैं। ये शाखाएँ दिव्य फलों–फूलों से लदी होती हैं और इनके द्वारा वह उसके पास आने वाले हर इंसान को आध्यात्मिक भोजन प्रदान करता है।

इस बारे में मौलाना रूमी फ़रमाते हैं :

दिला नज़्दे-कसे ब नशीं किह् ऊ अज़ दिल ख़बर दारद,
बज़ेरे-आँ दरख़्ते रौ किह् अज़ गुलहाय तर दारद।
दरीं बाज़ारे-अत्ताराँ मरौ हर सू चू बेकाराँ,
ब-दुकाने कसे ब-नशीं किह् दर दुकान शकर दारद।

— दीवाने–शम्स तबरेज़ (पृ.128)

(अर्थात, ऐ मित्र! किसी ऐसे की नज़दीकी इख़्तियार कर जिसे तेरे दिल की हालत का पता हो। किसी ताज़ा सुगंधित फूलों से लदे छायादार पेड़ के नीचे तनिक बैठ कर आराम कर। बाज़ार में दुकान–दुकान पर मत भटक, जैसे कि आवारा घूमते रहते हैं। सीधा उसके पास जा, जिसके पास शहद ['शब्द'] का पूरा भंडार हो।)

दामने-ऊ गीर ऐ यारे-दलेर,
कू मुनज़्ज़ा बाशद अज़ बाला ओ ज़ेर।
बा तू बाशद दर मकानो-ला-मकान,
चूँ बिमानी अज़ सरा ओ अज़ दुकान।

— मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 3, पृ.45)

(अर्थात, ऐ बहादुर आत्मा! किसी ऐसे के पल्ले को ज़ोर से पकड़े रखो, जिसे हर मुक़ाम का ठीक–ठीक पता हो, जो सदा तुम्हारा दोस्त बना रहे– इस ज़िंदगी में भी और मरकर भी, इस संसार में भी और अगले में भी।)

हमारे लिए सत्गुरु का स्थूल रूप या सूक्ष्म नूरी स्वरूप, जो प्रभु–प्राप्ति में हमारी सहायता करता है, वह परमात्मा के मूल अलख स्वरूप से, जो सभी प्रकार के विचारों व ध्यान से परे है, कहीं बढ़कर कर है।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ईश्वर (निरंजन) और परमेश्वर (ब्रह्मा के अवतार), आदि सभी हमारे सम्मान तथा पूजा के योग्य हैं। हमने धार्मिक साहित्य में उनके विषय में बहुत कुछ पढ़ा हुआ है। पौराणिक कथाओं–गाथाओं में वे हमारे नायक और नायिकाओं के रूप में अवतरित होते हैं, लेकिन वे मानव–कल्पना के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं होते।

जब संत–सत्गुरु गगन में किसी आत्मा को अपने साये में ले लेते हैं, तो वे शनैः–शनैः उन सबके सच्चे महत्व को प्रकट कर देते हैं। सृष्टि के आदि से ये सभी अस्तित्व में हैं और अपने अपने कार्यों को करते रहते हैं। लेकिन जब तक सत्गुरु साथ ले जा कर हमें इनका रहस्य न दिखाए, हम इन्हें या इनके द्वारा किये कार्यों और इनके अधिकार क्षेत्र को नहीं जान सकते।

परमात्मा स्वयं इंसानी चोले में (संतों और अवतारों–पैग़म्बरों के रूप में) आकर हमें अपने बारे में बतलाता है। गुरु अमरदास जी ने इसीलिये कहा है :

धुरि खसमै का हुकमु पइया विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।

– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰556)

संत कबीर भी हमें बतलाते हैं :

गुरु बड़ गोबिंद तें, मन में देखु बिचार।
हरि सुमिरै सो वार है, गुरु सुमिरै सो पार।।

– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 34, पृ.3)

सत्गुरु की महानता इस बात में निहित है कि वह आत्मा को परम सत् के साथ जोड़ देता है और उसे जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति दिला देता है। प्रभु, हमारे साथ होते हुए भी, न तो सीधे हमारे सामने प्रकट हो सकता है और न ही आत्मा को स्थूल मंडल से परे ले जाकर मुक्त कर सकता है।

केवल किसी संत–सत्गुरु (प्रभु के प्रतिनधि) के निर्देशों को मान कर और 'शब्द' (कार्यशील प्रभु) के साथ संबंध स्थापित करके कोई व्यक्ति इन आश्चर्यजनक नतीजों को प्राप्त कर सकता है।

बिना 'शब्द' के, बंधन से कोई मुक्त नहीं हो सकता। सत्गुरु 'शब्द–सदेह' है और वही 'शब्द' को हमारे अन्दर प्रकट कर सकता है।

परमात्मा यदि रूठ जाये तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि सत्गुरु ऐसा करता है तो कोई भी उसे आश्रय नहीं दे सकता।

बिना सबद नहिं ऊबरै, केता करै उपाय।।
सतगुरु सबद प्रमान, अनहद बानी ऊचरै।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर।।

— कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 33, पृ.3)

शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।

— गुरु गीता (44)

(अर्थात, यदि भगवान शिव नाराज़ हो जायें, तो सत्गुरु उन्हें मना सकता है, परन्तु यदि सत्गुरु ही नाराज़ हो गये, तो फिर उन्हें हमारे लिये कौन मनायेगा?)

इस बारे में सहजोबाई, जो महिला भक्त हुई हैं, अपने सत्गुरु चरणदास जी की महानता के बारे में मधुर स्वरों में गाती हुई कहती हैं :

राम तजूं पै गुरु न बिसारूँ।। गुरु के सम हरि कूं न निहारूँ।।
हरि ने जनम दियो जग माहीं।। गुरु ने आवागमन छुटाहीं।।
हरि ने पाँच चोर दिए साथा।। गुरु ने लीन छुटाय अनाथा।।
हरि ने कुटुंब जाल में गेरी।। गुरु ने काटी ममता बेरी।।
हरि ने रोग भोग उरझायौ।। गुरु जोगी कर सबै छुटायौ।।
हरि ने करम भरम भरमायो।। गुरु ने आतम रूप लखायो।।
हरि ने मो सूं आप छिपायो।। गुरु दीपक दे ताहि दिखायो।।
फिर हरि बंध मुकति गति लाए।। गुर ने सभ ही भरम मिटाए।।
चरनदास पर तन मन वारूँ।। गुरु न तजूँ हरि कूं तजि डारुं।।

— सहजोबाई की बानी (हरि तें गुरु की बिशेषता, पृ.6)

अठारहवाँ अध्याय

गुरुदेव

(सत्गुरु का सूक्ष्म अथवा स्वयं ज्योतिर्मय स्वरूप)

'देव' शब्द संस्कृत की मूल धातु 'दिव्' से बना है, जिसका अर्थ है, प्रकाश। जब आत्मा स्थूल शरीर तथा स्थूल मंडल को त्यागने के पश्चात सूक्ष्म मंडल में ऊपर जाती है, तो उसके मार्गदर्शन के लिये सत्गुरु वहाँ सूक्ष्म नूरी स्वरूप में प्रकट होते हैं, इसीलिये उस स्वरूप के लिये 'गुरुदेव' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

थियोसोफ़िकल (ब्रह्मवादी) साहित्य में आता है कि संत–सत्गुरु का ज्योतिर्मय तेज मीलों–मीलों तक सूक्ष्म व कारण मंडलों में फैला रहता है। इसी तरह संत तुलसीदास हमें बतलाते हैं कि गुरुदेव के चरणों के नखों से मणि जैसी ज्योति फूटती है, जो शिष्य–आत्मा को दिव्य–दृष्टि प्रदान करती है :

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिबय दृष्टि हियँ होती।।

— श्रीरामचरितमानस (बालकांड 1.5)

हज़रत मुल्ला हुसैन काशिफ़ी इस के बारे में फ़रमाते हैं :

पीरे किह् चू दर दिलत नशीनद,
हाले-अज़लो-अबद ब-बीनद।

— किताब–उल–बैअत (पृ.5)

(अर्थात, जब सत्गुरु की ज्योति आत्मा में प्रकट होती है, तो शिष्य दोनों जहानों के रहस्यों को जानने वाला हो जाता है।)

एक सच्चा गुरु परमात्मा का रूप होता है। वह वास्तव में सत्य का शिक्षक होता है और 'सत्' की ज्योति को संसार में प्रकट करता है।

नानक गुरू गुरू है सतिगुरु मै सतिगुरु सरनि मिलावैगो।।

– आदि ग्रंथ (कानड़ा म॰4, पृ॰1310)

इसलिए 'गुरुदेव' शब्द से तात्पर्य सत्गुरु के नूरी स्वरूप से है, जो स्थूल देह से स्वतंत्र और बहुत ऊपर है और जिसे आत्मा अपनी आंतरिक सूक्ष्म ज्योति द्वारा देख पाती है। जब आत्मा सत्गुरु के सूक्ष्म स्वरूप को अंतर में आमने–सामने देखती है, तो उसके सभी भ्रम समाप्त हो जाते हैं और उसे अपने सभी परिश्रमों का सर्वोत्तम पुरस्कार प्राप्त होता है, जो कि जीवन का सार है ।

नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव।। भरम गए पूरन भई सेव।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी म॰5, पृ॰200)

ईसा मसीह अपनी उपदेशों में इस तरह से कहते हैं :

इसलिये अगर तुम्हारी एक आँख बन जाये, तो तुम्हारा सारा शरीर ज्योति से भर जायेगा।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 6:22)

गुरु अर्जन देव बतलाते हैं कि सत्गुरु का नूरी स्वरूप, भक्त के मस्तक पर अपने आप प्रकट होता है।

सफल मूरति गुर मेरै माथै।। जत कत पेखत तत तत साथै।।

– आदि ग्रंथ (देवगंधारी म॰5, पृ॰535)

एक मुस्लिम फ़कीर भी इसी तरह से फ़र्माते हैं :

दिल के आइने में है तस्वीरे-यार।
जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली।

सत्गुरु का यह ज्योतिर्मय सूक्ष्म स्वरूप आत्मा को परमात्मा की तरफ़ ले चलता है। वह स्थूल से लेकर ऊपर सतलोक तक, सभी मंडलों में आत्मा के साथ होता है। गुरु, गुरुदेव, सत्गुरु और परमात्मा में कोई अंतर नहीं होता।

यह प्रभु की एक ही दिव्य–धारा है, जो विभिन्न मंडलों में विभिन्न नाम धारण करती है।

'जैसा देश, वैसा भेष' के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए, दिव्य–धारा जिज्ञासुओं के लाभ के लिये जब स्थूल मंडल में प्रकट होती है, तो उसे 'गुरु' कहते हैं, जो अन्य अध्यापकों की भाँति मौखिक शब्दों द्वारा आध्यात्मिक जानकारी देता है।

जब जिज्ञासु की आत्मा शरीर छोड़ती है और सूक्ष्म मंडलों में यात्रा के लिए तैयार होती है, तो वही दिव्य धारा आत्मा के लाभ और मार्गदर्शन के लिये सूक्ष्म रूप धारण कर लेती है।

इस सूक्ष्म स्वरूप को, जो सत्गुरु के स्थूल शारीरिक स्वरूप से बंधा नहीं होता है, 'गुरुदेव' कहा जाता है। यह स्वःज्योतिर्मय होता है और इसकी ज्योति मीलों तक फैली होती है। सत्गुरु सत्य का गुरु या परमात्मा की शक्ति होता है, जो गुरु और गुरुदेव, दोनों के माध्यम से काम करता है। उसकी जड़ें 'सत्' या सत्य में पक्की तरह स्थित होती हैं और वह सीधे अमर और अपरिवर्तनीय 'सत्' से प्रेरणा ग्रहण करता है और इसीलिये उसे 'सत्गुरु' के नाम से जाना जाता है।

इस तरह हम देखते हैं कि सत्–धारा या सत् से बह कर फूट निकलने वाली 'शब्द'–धारा नीचे की तरफ़ बहती हुई, मंडल पर मंडल बनाती हुई, अंत में स्थूल मंडल बनाती है।

यह वही धारा है, जो जीवों को वापिस निज–घर ले जाने में सहायता करती है और विभिन्न स्थानों में विभिन्न नामों– जैसे गुरु, गुरुदेव और सत्गुरु के नाम से जानी जाती है, जब तक कि आत्मा सत् की जड़ तक न पहुँच जाये; वहाँ पहुँच कर आत्मा, आश्चर्यचकित होकर पुकार उठती है– "वाह ऐ गुरु!" जिसका अर्थ है– "हे गुरु! आपकी कितनी निराली शान है!"

वह अवर्णनीय है और बुद्धि–समझ से परे है। गुरुवाणी में हमें इस प्रकार का वर्णन मिलता है :

गुरुदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी म°5, पृ°262)

गुरु जब स्थूल या भौतिक मंडल में काम करता है, तो वह 'सत्' से एकमेक होता है। इसीलिये, कहा जाता है :

सफल मूरति गुरदेउ सुआमी सरब कला भरपूरे।।

– आदि ग्रंथ (बिलावल म°5, पृ°802)

महिमा कही न जाइ गुर समरथ देव।।
गुर पारब्रहम परमेसुर अपरंपर अलख्व अभेव।।
– आदि ग्रंथ (गूजरी वार म॰5, पृ॰522)

गुरु देवा गुरु अलख्व अभेवा तृभवण सोझ़ी गुर की सेवा।।
आपे दाति करी गुरि दातै पाइआ अलख्व अभेवा।।
– आदि ग्रंथ (भैरउ म॰1, पृ॰1125)

स्थूल विश्व में वह गुरु या अध्यापक की तरह से काम करता है, लेकिन जब एक जीव कुछ आध्यात्मिक अभ्यास करके पिंड या शरीर छोड़ने को तैयार होता है और अंड (सूक्ष्म मंडल) में प्रवेश करने वाला होता है, तो गुरु उसकी सहायता के लिये अपने सूक्ष्म, दिव्य–रूप में यानी 'गुरुदेव' के रूप में सामने आ जाता है। यहाँ वह गुरु और सत्गुरु के बीच की कड़ी का काम करता है, क्योंकि वह शरीरधारी गुरु से आत्मा की संभाल का काम अपने ऊपर ले लेता है और उसे सत्गुरु और सतपुरुष के पास ले जाता है।

जब आत्मा स्थूल और सूक्ष्म मंडलों के बीच की सीमा को पार करती है और सितारे, सूर्य और चंद्रमा में से गुज़रती है, जैसा कि वेदों में देवयान और पितृयान मार्ग के नाम से वर्णित है, तो गुरुदेव आत्मा को मिलते हैं और उसका स्वागत करते हैं। यह सूक्ष्म स्वरूप बिल्कुल सत्गुरु के स्थूल स्वरूप की भांति होता है, लेकिन बहुत अधिक सुंदर, दिव्य, भव्य, प्रकाशमय, और आकर्षक होता है।

मौलाना रूमी हमें बतलाते हैं :

रौ बसूए असले-ख़ुद हमचूँ ख़लील,
ब-गुज़र अज़ इस्तारा ओ चर्ख़े-नबील।
पाय हिम्मत बर ख़ुर ओ बर माह निह,
सर बर आँ ईवानओ आँ दरगाह निह।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 6, पृ.476)

(अर्थात, अगर आप इस परम ज्योति के भंडार को देखना चाहते हो, तो इब्राहिम की तरह से पहले अंतर्मुख निज–घर की तरफ़ मुँह करो। बड़े तारे और आसमान में से गुज़रो। धीरे–धीरे सूरज और चंद्रमा के ऊपर से गुज़रो और तब तुम अपने आप को दिव्य उपस्थिति में पाओगे।)

गुरु नानक इस ज्योतिर्मय पथ का वर्णन इस प्रकार करते हैं :

आनन्द रूपु अनूपु सरूपा गुरि पूरै देखाइआ।।

– आदि ग्रंथ (मारू म॰1, पृ॰1041)

सत्गुरु का यह दिव्य स्वरूप विभिन्न आंतरिक मंडलों पर हमेशा आत्मा के साथ चलता है और उसे सचखंड–सतलोक या निजघर पहुँचाकर ही दम लेता है। जब उसका नूरी स्वरूप शिव–नेत्र या दिव्य चक्षु पर प्रकट होता है, तो शिष्य को कुछ और पाना शेष नहीं रहता। इसी में भक्त की भक्ति निहित है। उसका आधा काम हो चुका होता है और इसके बाद सत्गुरु का सूक्ष्म स्वरूप पूरी ज़िम्मेवारी के साथ आत्मा की संभाल का काम अपने ऊपर ले लेता है, ताकि उसे अंतिम मंज़िल पर पहुँचा सके। संत भी इस स्वरूप की पूजा–उपासना करते हैं और इससे उल्लास और मस्ती प्राप्त करते हैं।

चरन कमल गुरुदेव पिआरे।।
पूजहि संत हरि प्रीति पिआरे।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰394)

ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती भी सत्गुरु के नूरी स्वरूप की बातें करते हैं :

ज़ शरमे-रूए माहत दर अर्क़ ग़र्क़े-आफ़्ताब,
व अज़ फ़ुरोग़े-माहे-रुख़सारे-तू मह अन्दर नक़ाब।
आफ़्ताब अज़ ख़ाके-राहत याफ़्त चश्मत लाजरम,
दर फ़ज़ाए आसमां ज़द ख़ैमा-ए-ज़री तनाब।
गर ज़ अनवारे-रुख़त यक शुअला ताबद बर फ़लक,
अज़ हया मस्तूर गरदद आफ़्ताब अन्दर नक़ाब।
नूरे-हक़ अस्त आं मुजस्सम गश्ता दर ज़ाते-नबी,
हम चू नूरे-माह कज़ ख़ुर्शीद करदस्त इक्तिसाब।

– दीवाने–ग़रीब नवाज़ (पृ.25)

(अर्थात, ऐ मुर्शिदे क़ामिल! आपके नूरी चेहरे की ज्योति के सामने सूरज नहीं ठहर सकता। आपकी चकाचौंध करने वाली ज्योति से बचने के लिये चंद्रमा ने भी अपना चेहरा बादलों में ढक लिया है। सूरज ने अपनी रोशनी की चमक आपके चरणों की धूलि से उधार ली है और अपना सुनहरी खेमा नीले आसमान पर गाढ़ दिया है। अगर आपके चेहरे की एक किरण भी आकाश में फूट पड़ती, तो सूरज भी शर्म के मारे पर्दे के पीछे छिप जाता। नबी [अवतार] के जिस्म में नूरे इलाही ने आकार धारण कर लिया है, ठीक वैसे ही, जैसे सूरज की रोशनी चंद्रमा में आकार धारण करती है।)

मौलाना रूमी, अपने मुर्शिदे–क़ामिल के ज्योतिर्मय स्वरूप का हवाला इस तरह देते हैं :

चिह् दानी तू किह् दर बातिन चिह् शाहे हमनशीं दारम,
रुख़्रे-ज़रीने-मन बनिगर किह् पाये आहनीं दारम।

– दीवाने–शम्स तबरेज़ (पृ.232)

(अर्थात, शहंशाहों के शहंशाह, जो मेरे साथ रहते हैं, उसके बारे में आप क्या जानते हैं? मेरे अंतर में देखो, मेरी बाहरी सूरत से धोखा मत खा जाना।)

इसी तरह से सेंट जॉन बाइबिल में आंतरिक नूरी स्वरूप के साथ अपने अनुभवों का वर्णन करते हैं :

मैं आत्मा रूप में था... और अपने पीछे से मैंने एक बहुत तेज़ आवाज, बिगुल बजने जैसी सुनी...

और मैं उस आवाज़ को देख्रने मुडा, जिसने मुझ से बात की। और मुड़ते हुए मैंने देख्रा...इंसानी पुत्र के समान, पैरों तक जो एक चोगे में ढँका हुआ था, और उसकी छाती पर सुनहरा पटुका था। उसके बाल और सिर ऊन जैसे सफ़ेद थे, बर्फ जैसे धवल थे और उसकी आँख्रें आग की लपटों के समान थीं।

उसके पैर भट्टी में तपाई हुई बहुत बढ़िया पीतल के जैसे थे... और उसकी आवाज़ ऐसी थी जैसी कि पानी की धाराओं की आवाज हो। और उसका मुख्र ऐसा प्रज्ज्वलित था जैसा कि सूरज अपनी पूरी ताक़त से चमकता है।

– पवित्र बाइबिल (रहस्योद्घाटन 1:10,12-16)

इसके बाद मैं देख्रता रहा, और आकाश में एक दरवाज़ा ख्रुला, और पहली आवाज़ जो मैंने सुनी, वह ऐसी थी, जैसे कि एक नगाड़ा बजता हुआ मेरे से बात कर रहा हो, जिसने कहा-इधर आओ और मैं तुम्हें वे चीज़ें दिख्राऊँगा, जो इसके बाद अवश्य होंगी।

– पवित्र बाइबिल (रहस्योद्घाटन 4:1)

स्वामीजी महाराज की लिखी पुस्तक, सार बचन (बचन 19, शब्द 7) में इसी तरह का संदर्भ हमें मिलता है :

गुरु मूरत अजब दिख्राई। शोभा कुछ कही न जाई।।

प्रसिद्ध सूफ़ी शायर, हाफ़िज़ साहिब फरमाते हैं :

रुयश ब-चश्मे-पाक तवां दीद चूं हिलाल,
हर दीदा जाए-जलवा-ए-आं-माह-पारा नीस्त।

— दीवाने–हाफ़िज़ (पृ.59)

(अर्थात, जिसकी नज़र है, वही उसकी शान को देख सकता है; वह हर किसी के सामने प्रकट नहीं होती।)

सत्गुरु का सूक्ष्म स्वरूप अपरिवर्तनीय है, अटल है। यही स्वरूप जिज्ञासुओं का मार्ग–दर्शन करता है।

गुरुदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी म॰5, पृ॰262)

गुरु अर्जनदेव गुरुदेव के बारे में कहते हैं :

आदि गुरए नमह।। जुगादि गुरए नमह।।
सतिगुरए नमह।। स्री गुरदेवए नमह।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰262)

सतपुरुष का सब से बड़ा और सब से ऊँचा स्वरूप, गुरुदेव है। वह परमात्मा की नियंत्रक शक्ति है और मुक्ति प्रदान कर सकती है। उसकी भक्ति करके, व्यक्ति तमाम सुखों को पा जाता है। 'सत्' गुरुदेव है, कुछ अन्य नहीं। उसके अतिरिक्त तमाम उपासनाएँ झूठी हैं।

गुरु अर्जनदेव गुरुदेव की महिमा निम्न स्मरणीय पदों में गाते हैं :

गुरुदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा।।
गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा।।
गुरदेव दाता हरि नामु उपदेसै गुरदेव मंतु निरोधरा।।
गुरदेव साँति सति बुधि मूरति गुरदेव पारस परस परा।।
गुरदेव तीरथु अंमृत सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा।।
गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा।
गुरदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा।।
गुरदेव संगति प्रभ मेलि करि किरपा हम मूड़ पापी जितु लगि तरा।।
गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी बावनआखरी म॰5, पृ॰262)

गुरुवाणी में सत्गुरु के मिलने से होने वाले अनेकों लाभों का वर्णन है :

काम क्रोध अरु लोभ मोह बिनसि जाइ अहंमेव।।
नानक प्रभ सरणागती करि प्रसादु गुरदेव।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰269)

अनगिनत युगों के ढ़ेरों कर्म नष्ट हो जाते हैं। वह जीव को शारीरिक चेतनता से ऊपर लाकर उसे ब्रह्मांडीय चेतनता में जगाता है, जहाँ से वह माया की अग्नि में, जिसमें सारी मानवता फँसी पड़ी है, फिर से नहीं जलता।

आत्मा की सभी सांसारिक इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इसके बाद उसका रास्ता बड़ा आसान और आरामदेह हो जाता है, और सभी तरफ़ से उसे बड़ाई मिलती है।

गुरुदेव अन्याय और अंधकार से भरे इस कलयुग में, भवसागर में फँसे इंसानों को रोशनी दिखाता है और पापियों को भी सुरक्षापूर्वक शांति और आनन्द के साम्राज्य में ले जाता है। जीव स्वयं मुक्त होता है और उसके साथ, उसके नज़दीक़ी लोगों का भी उद्धार हो जाता है।

गुरुदेव का प्रकट होना मालिक की दया पर और रूहानी रास्ते पर इंसान की कोशिशों पर निर्भर होता है।

उन्नीसवाँ अध्याय

पूरा गुरु

(मुर्शिदे-कामिल)

परा-विद्या (आध्यात्मिक विज्ञान) से लाभ उठा पाने के लिये नितांत आवश्यक है कि किसी जीवित सत्गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त हो, जो कि अध्यात्म विद्या की कला और विज्ञान– दोनों ही में निपुण हो। वह व्यक्ति एक मुर्शिदे–क़ामिल या पूर्ण संत होना चाहिये, जो जिज्ञासुओं को परिपूर्णता की ओर अग्रसर कर सके। 'यदि अंधे को अंधा रास्ता दिखायेगा, तो दोनों ही गड्ढ़े में गिरेंगे'– यह एक आम लोकोक्ति है, जिसे किसी टीका–टिप्पणी की आवश्यकता नहीं।

आध्यात्मिक पथ की भी कई मंज़िलें या दर्जे हैं। सर्वोच्च मंजिल तक पहुँचा संत या'नी पूर्ण संत ही जीवों को सर्वोच्च आध्यात्मिक लक्ष्य तक पहुँचा सकता है। जो व्यक्ति नौसिखिया है या आधी मंज़िल तक ही पहुँचा है, वह किसी जीव को चोटी तक नहीं ले जा सकता।

एक शिक्षा संस्थान में हम देखते हैं कि विभिन्न कक्षाओं के लिये विभिन्न स्तर के अध्यापक होते हैं। इस रूहानी विज्ञान में भी अनेक स्तर हैं, उदाहरण के लिये, साधु, संत और परम संत।

अध्यात्म के सिद्धांत और अभ्यास (Theory & Practice), दोनों की उचित जानकारी के लिये, हमें कम से कम एक संत की आवश्यकता होती है। एक साधु (जिसने सफलता पूर्वक स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों को पार किया है और जो तन और मन की चेतनता से ऊपर रहता है), हमें रास्ता दिखा सकता है और हमें किसी संत से आगे प्रशिक्षण लेने योग्य कर सकता है। लेकिन जो अभी साधु भी नहीं बना है, वह किसी काम का नहीं हो सकता। जन्म–मरण के चक्र से पूरी तरह से आज़ाद होने के लिये हमें पूर्ण संत का मिलना आवश्यक है। पूर्ण गुरु के शरीर पर कोई प्रमाण चिन्ह नहीं होता, जिससे उसकी पहचान की जा सके। व्यक्तिगत संपर्क से ही धीरे–धीरे उसकी महानता के बारे में व्यक्ति कुछ जानने लगता है, ठीक

वैसे ही, जैसे कि एक विद्यार्थी ज्यों–ज्यों अपनी पढ़ाई में आगे बढ़ता है, वह थोड़ा–थोड़ा अपने अध्यापक की योग्यता के बारे में जानने लगता है।

फिर, गुरु अपनी सारी योग्यता को एकदम प्रकट नहीं करता, परन्तु जैसे–जैसे एक जिज्ञासु अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है और रास्ते पर उन्नति करता है, तो गुरु भी उसी अनुपात से अपनी योग्यता उसके सामने प्रकट करता जाता है। सत्गुरु किसी साधारण अध्यापक की तरह ही शुरूआत करता है और एक मित्र और शुभचिंतक की तरह से शिक्षा देता है। समय के साथ, वह मुर्शिद या पूर्ण गुरु की सत्ता हमारे सामने प्रकट करता जाता है और अंत में वह स्वयं सत्गुरु या सत्य का गुरु प्रतीत होता है। ऐसी अवस्था आ जाती है कि वह और परमात्मा एकमेक लगते हैं, उनके बीच में कोई सीमा रेखा नहीं रह जाती।

बीसवाँ अध्याय

पूरे गुरु को कैसे पायें और पहचानें

एक पूर्ण गुरु को पाना इतना सरल नहीं, जितना कि लगता है। हम हर समय इंद्रियों के घाट पर बैठे लोग, वह आँख नहीं रखते, जिससे उस मानवीय–स्तंभ को पहचान सकें, जिस के द्वारा प्रभु की सत्ता संसार में काम करती है। फिर भी, जहाँ चाह, वहाँ राह होती है। ज़रूरत इस बात की है कि जिज्ञासु में उद्देश्य प्राप्ति की सच्ची लगन हो और परमात्मा को पाने की तीव्र आकांक्षा हो। जहाँ आग जलती है, ऑक्सीजन सहायता के लिये आती है और जीवन के सभी क्षेत्रों में, स्थूल मंडल से लेकर आध्यात्मिक मंडलों तक, मांग और आपूर्ति का नियम समान रूप से काम करता है। भूखे के लिये रोटी और प्यासे के लिये पानी हमेशा रहता है।

> मांगो और यह तुम्हें मिलेगा, खोजो और तुम उसे पा लोगे, दरवाज़ा खटखटाओ और तुम्हारे लिये यह खोल दिया जायेगा।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 7:7)

> कोई भी आदमी दो मालिकों की सेवा नहीं कर सकता; या तो वह किसी एक से नफ़रत करेगा और दूसरे से प्यार करेगा, या फिर वह एक को पकड़े रखेगा ओर दूसरे को तिरस्कार देगा। तुम परमात्मा और शैतान की सेवा एक साथ नहीं कर सकते।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 6:24)

बाइबिल में आगे हमें मिलता है :

> मैं तुम्हारा परमात्मा, एक ईर्ष्यालु परमात्मा हूँ...
>
> – पवित्र बाइबिल (निर्गमन 20:5)

और प्रभु की तरह से सत्गुरु भी अपने प्रेमियों से अपने लिये संपूर्ण और निर्मल प्यार चाहता है और जब तक कि व्यक्ति अपना सब कुछ, तन,

मन और धन न्योछावर करने को तैयार न हो, उसका रास्ता नहीं खुलता है और न ही हम सत्गुरु के निकट आ सकते हैं, जो कि आगे को रास्ता प्रकट करता है।

'जब चेला तैयार होता है, तभी गुरु प्रकट होता है,' यह परमात्मा का क़ानून है। जिसकी आँखों पर पट्टी बँधी हो, वह व्यक्ति, अपने आप ही सर्कस के अखाड़े में कैसे प्रवेश पा सकता है?

> कोई मेरे पास नहीं आ सकता, जब तक पिता, जिसने मुझे भेजा है, उसे खींच न ले।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:44)

जिन्हें परमात्मा चाहता है, वे स्वयं ही सत्गुरु के पास खिंचे चले जाते हैं या सत्गुरु स्वयं, चाहे वे कहीं भी क्यों न हों, उन्हें ढूँढ निकालता है।

इसी तरह से सत्गुरु को पूरी तरह से जानना, मनुष्य के सामर्थ्य से परे है। हम उसकी महानता की उतनी ही झलक पा सकते हैं, जितनी कि वह स्वयं हमें दिखलाना चाहे। सत्गुरु अकेला ही यह फ़ैसला करता है कि किस समय और कितनी प्रगति किस आदमी को मिले और जितना भी वह चाहता है, अपनी आध्यात्मिक निधि को हमारे सामने धीरे–धीरे प्रकट करता जाता है। वह अपनी दात हमें उतनी ही देता है, जितनी हम समझ सकें और संभाल सकें। उसकी संगति में शिष्य जब आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ता जाता है तो उसे और अधिक समझता जाता है, उसकी ताक़त को सभी आंतरिक मंडलों में, एक सिरे से दूसरे सिरे तक काम करते देखता है, मुक़ामे–हक़ या सचखंड तक, जहाँ वह अपने मूलरूप (एकंकार) में प्रकट होता है।

स्थूल भौतिक–मंडल में, भूमंडल के नियमानुसार वह 'शब्द'–सदेह होकर हमारे बीच रहता है और किसी भी अन्य शिक्षक की भाँति हमें शिक्षा देता है– इस संसार की नहीं, बल्कि उस संसार की, जो इससे बिल्कुल भिन्न है, स्वःज्योतिर्मय है, और अनगिनत तारे, चंद्रमा और सूर्यों से भरा हुआ है। जबकि देखने में तो वह हमारे सांसारिक दुख–सुखों में हिस्सा बाँटता है, लेकिन वास्तव में वह इन द्वंद्वों से, दुख–दर्दों से बहुत ऊपर रहता है, और हमें सदा आध्यात्मिक संदेश देता रहता है, इस दुनिया में भी और आंतरिक दुनिया में भी, हर क़दम पर अपने विवेकपूर्ण शब्दों से

हमें ढ़ारस देता रहता है और अनगिनत उपायों से हमारे अंदर परमात्मा का प्यार भरता रहता है और हमें प्रेरित करता है कि हम परमात्मा की शान की महिमा करें।

सतिगुरु सदा दइआलु है भाई विणु भागा किआ पाईऐ।।
एक नदरि करि वेखै सभ ऊपरि जेहा भाउ तेहा फलु पाईऐ।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰3, पृ॰602)

वाहु वाहु सतिगुरु सति पुरखु है जिस नो समतु सभ कोइ।।...
वाहु वाहु सतिगुरु निरवैरु है जिसु निंदा उसतति तुलि होइ।।
– आदि ग्रंथ (सलोक वारां ते वधीक म॰4, पृ॰1421)

इक्कीसवाँ अध्याय

उसका जीवन व आचरण

एक संपूर्ण गुरु का जीवन और आचरण, विलक्षण होता है और अन्य मनुष्यों से अलग होता है।

1. वह हमेशा भेंटों को देता है, लेता नहीं। वह अपने शिष्यों से कभी छोटी से छोटी सेवा की भी इच्छा नहीं रखता। वह अपनी आजीविका स्वयं कमाता है और कभी किसी पर बोझ नहीं बनता। अपनी संपूर्ण व्यक्तिगत बचत, यदि कोई हो तो, वह ज़रूरतमंदों की सहायता पर ख़र्च करता है।

गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ।। ता कै मूलि न लगीऐ पाइ।।
घालि खाइ किछु हथहु देइ।। नानक राहु पछाणहि सेइ।।

– आदि ग्रंथ (सारंग वार म॰4, पृ॰1245)

2. आध्यात्मिक उपदेशों के बदले में वह कोई फ़ीस नहीं वसूलता। इसके विपरीत, वह अध्यात्म को परमात्मा की दूसरी भेंटों– जैसे रौशनी, हवा, पानी के जैसे मुफ़्त में बाँटता है।

3. वह नम्रता की जीवित मूर्ति होता है। परमात्मा की सभी शक्तियों और उस जैसी महानता के होते हुए भी, वह किसी बात का श्रेय अपने ऊपर नहीं लेता, बल्कि वह सब कुछ परमात्मा या अपने सत्गुरु की कृपा से हुआ मानता है। फलों से लदी पेड़ की शाखा की तरह, वह नीचे से भी नीचे झुकता जाता है और ऐसी सादग़ी भरी शान से घूमता फिरता है, जो केवल उसी में पाई जाती है।

आपस कउ जो जाणै नीचा।। सोऊ गनीऐ सभ से ऊचा।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰266)

4. वह किसी से नाराज़ नहीं होता और सभी के साथ शांति से रहता है। वह दूसरों में ग़लती नहीं निकालता और जो कोई उसकी बुराई करते

हैं, वह उन्हें मुस्कारातेे हुए क्षमा कर देता है। उसका प्यार सारी मानवता के लिए होता है। मसीह की तरह वह इस नियम का पालन करता है, "अपने दुश्मनों से भी प्यार करो," और इसी की शिक्षा देता है।

5. पवित्रता, प्रभुत्व और अध्यात्म उसके अंतर से इस तरह प्रवाहित होते हैं, जैसे नदी में ताज़गी देने वाला बहता पानी, जिससे जिज्ञासुओं के तपते और झुलसे दिलों को पुनर्जीवन मिलता है और वे उसके योग्य मार्गदर्शन में आध्यात्मिक मार्ग पर ख़ुशी–ख़ुशी आगे बढ़ जाते हैं।

6. वह कोई विशिष्ट पोशाक़ नहीं पहनता। वह आसान मध्य मार्ग अपनाता है। उसका मार्ग, एक तरफ़ तो तप–तपश्चर्याओं से दूर है, और दूसरी तरफ़ कर्मकांडों और रीति–रिवाज़ों से। उसकी शिक्षाओं में प्राकृतिक सत्य होता है, जो सीधे आत्मा की गहराइयों में उतर जाता है, और प्रत्येक व्यक्ति, चाहे किसी भी लिंग और आयु का हो, उसके द्वारा बतलाए गए आध्यात्मिक रास्ते का अनुसरण कर सकता है।

7. एक मदारी की भांति, वह लोगों को आकर्षित करने और उनका मान–आदर जीतने के लिये कोई चमत्कार नहीं दिखलाता और न ही उनमें विश्वास करता है। वह अपने अंतर की गहराइयों में अपने रूहानी ख़ज़ाने को पूरी तरह से छिपा करके रखता है। अगर ज़रूरत की मांग हो, तो वह अपनी ताक़तों को किसी विशेष अवसर पर प्रयुक्त कर सकता है। फिर भी, उसके शिष्य, उसके गुप्त वरदहस्त को अपनी मदद करते हुए प्रतिदिन अनुभव करते हैं।

बाइसवाँ अध्याय

सत्गुरु की शारीरिक बनावट

सत्गुरु की शारीरिक विशेषताओं के बारे में भी हम पढ़ते हैं। शारीरिक रूप में भी उसमें कोई त्रुटियाँ या कमज़ोरियाँ नहीं होतीं। उसकी चाल शान से भरपूर होती है। उसकी आँखें बब्बर शेर की तरह चमकती रहती हैं। उसका मस्तक चौड़ा होता है और पैरों में कमल (पद्‌म) का चिन्ह होता है और उसके नूरानी चेहरे पर साधारणतया पर एक काला तिल होता है।

शीराज़ के महान सूफ़ी शायर, हाफ़िज़ साहिब फ़र्माते हैं :

अगर आं तुर्के-शीराज़ी बदस्त आरद दिले-मा रा,
बख़ाले-हिन्दुवश बख़्शम समरकंदो-बुख़ारा रा।

— दीवाने–हाफ़िज़ (पृ.30)

(अर्थात, अगर वह शीराज़ का मुर्शिद मेरे भटकते मन को क़ाबू में कर ले, तो मैं उसके चेहरे पर जो दिलकश तिल है, उस पर लोक–परलोक दोनों न्योछावर कर दूँ।)

हाफ़िज़ साहिब के मुर्शिद भी शीराज़ के ही रहने वाले थे।

तेईसवाँ अध्याय

सत्गुरु का प्रभाव

सत्गुरु की उपस्थिति में मन नियंत्रण में आ जाता है और स्थिर महसूस करता है।

जिन डिठिआ मन रहसीऐ किउ पाईऐ तिन्ह संगु जीउ।।
संत सजन मन मित्र से लाइनि प्रभ सिउ रंगु जीउ।।
– आदि ग्रंथ (सूही म॰5, पृ॰760)

वह गरिमामयी नम्रता से ओत–प्रोत पवित्रता से भरी तरंगें चारों ओर छोड़ता रहता है, जो जीवों पर बहुत गहरा प्रभाव छोड़ती है। उसके शब्द अध्यात्म के रंग से भरे होते हैं और आत्मा को दूसरी दुनिया में खींचकर ले जाते हैं और स्फूर्तिदायक नशा सा प्रदान करते हैं।

गर कशायद ऊ सरे अंबाने राज़,
जाँ ब सूए अर्श साज़द तर्को ताज़।
– मौलाना रूमी

(अर्थात, यदि वह अपने रहस्य प्रकट कर देता, तो मेरी आत्मा तुरंत प्रभु की ओर उड़ जाती।)

2. उसके मस्तक और आँखों पर लगातार एकटक देखते रहने से एक विशेष प्रकार की ज्योति प्रकट होती है, जो हमारी आत्मा को ऊपर की ओर खींचती है। और थोड़ी देर के लिये बाहर को फैली हमारी सुरत की धाराएँ खिंच कर एकत्र हो जाती हैं और व्यक्ति उच्चतर चेतनता की अवस्था में पहुँच जाता है।

3. वह शांति का दूत है और सभी द्वंदों (dualities) से ऊपर होता है। उसके साथ रहने से हमारे भीतर परमानंद और मंगलकामनाओं की धाराएँ प्रवाहित होने लगती हैं। वह सभी विरोधी और शत्रुतापूर्ण विचारों को नष्ट

कर देता है, और उनके बदले में आत्मा में स्थिरता और टिकाव भर देता है, जिससे वह धीरे–धीरे ईश्वरोन्मुख हो जाती है।

जिसु मिलिऐ मनि होइ अनन्दु सो सतिगुरु कहीऐ।।
मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ीबैरागिन म॰4, पृ॰168)

4. वह ओजस (ब्रह्मचर्य के फल) की शक्ति से परिपूर्ण होता है और उसका मस्तक ईश्वरीय ज्योति से दमकता रहता है। प्रभुसत्ता से भरे उसके शब्दों की चुंबकीय शक्ति से व्यक्ति बरबस खिंचा चला जाता है। उसके नेत्रों से एक विशेष प्रकार की ज्योति दमकती है, जिससे मन नाकाम हो जाता है। वह ख़मीर के जैसे कार्य करता है और मनरूपी रेगिस्तान में जीवन फूँक देता है।

5. अपनी तीक्ष्ण दृष्टि के द्वारा वह व्यक्ति की भावनाओं और उद्‌वेगों को जान जाता है और अपने आदेशों को व्यक्तिगत आवश्यकताओं और समय के अनुसार ढाल लेता है। किसी भी जीव का स्थूल शरीर उसके लिये पारदर्शी मर्तबान की तरह होता है। यद्यपि वह आसानी से देख लेता है कि उसके अंदर क्या है, परन्तु वह पर्दापोश होता है, औरों के सामने कभी उसका रहस्य नहीं खोलता और उसे अपने तक ही सीमित रखता है। जो कोई उसके पास जाता है, चाहे भृंगी (भँवरा) हो या भिड़ (ततैया), फूल की भाँति वह सबको सुगंध देता है। सत्गुरु के घर में प्रत्येक वस्तु प्रचुर मात्रा में होती है और प्रत्येक के मन की इच्छा पूरी हो जाती है। प्रत्येक मानव, जो संत–सत्गुरु के संपर्क में आता है, वह आध्यात्मिक संस्कार ग्रहण करता है, जो समय बीतने पर अवश्य फलीभूत होता है। जिस क्षण कोई व्यक्ति सत्गुरु से मिलता है, उसी क्षण निश्चित रूप से उसके दिन अच्छे होने लग जाते हैं।

6. एक संत–सत्गुरु वास्तव में परमात्मा का पुत्र होता है। उसके हृदय में सभी धर्मों और देशों के लागों के लिये समान रूप से सच्चा प्यार होता है। वह सभी के अंदर परमात्मा की ज्योति देखता है। इसीलिये वह सारे संसार के भले की बात करता है।

एक नूर ते सभु जगु उपजिया कउन भले को मंदे।
– आदि ग्रंथ (प्रभाती कबीर, पृ॰1349)

नानक सतिगुरु ऐसा जाणीए जो सभसै लए मिलाइ जीउ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी म॰1, पृ॰72)

सतिगुरु पुरखु दइआलु है जिस नो समतु सभु कोइ।।
एक द्रसटि करि देखदा मन भावनी ते सिधि होइ।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी वार म॰4, पृ॰300)

वह न तो पुरानी धार्मिक मान्यताओं को तोड़ता है, और न ही कोई नया धर्म चलाता है। वह 'सत्' का गुरु होने के कारण किसी को भी उसके धर्म और संप्रदाय की दृष्टि से नहीं देखता। उसके लिये सिर्फ़ यही महत्त्वपूर्ण है कि इंसान में आध्यात्मिक लक्ष्य को पाने की अभिलाषा हो, क्योंकि संत–मत पर चलने के लिए इसी की ज़रूरत है।

हिलि मिलि खेलौं सबद से, अंतर रही न रेख।
समझे का मत एक है, क्या पंडत क्या सेख।।
– कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (परिचय का अंग 11, पृ.108)

हमारे बाहरी धार्मिक भेदभावों के बावजूद, वह आध्यात्मिक मार्ग के बारे में निर्भयता से बात करता है, जो कि हमारे अंदर है। जो कोई ऐसे संत–सत्गुरु से संपर्क स्थापित कर लेता है, वह आध्यात्मिक पथ का सच्चा तीर्थयात्री होता है और उससे सर्वाधिक लाभ उठाता है।

मौलाना रूमी इसीलिये फ़र्माते हैं :

मर्दे-हज्जी हमरही हाजी तलब,
ख़्वाह हिन्दू ख़्वाह तुर्क ओ या अरब।
मनिगर अंदर नक़्श ओ अंदर रंगे-ऊ,
बनिगर अंदर अज़्म ओ दर आहंगे-ऊ।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.304)

(अर्थात, अगर तुम्हें हज पर जाने की तमन्ना हो, तो अपने साथ किसी मार्गदर्शक को ले लेना जो उस हज का अनुभवी हो, बेशक़ वह हिंदू हो, तुर्की हो या अरबी हो। वह कैसा लगता है, इसकी परवाह न करना; सिर्फ़ इतना ख़्याल रखना कि वह रास्ते को जानता हो और निपुण हो।)

हमें सत्गुरु से कोई सांसारिक संबंध तो स्थापित नहीं करना है। हमें उससे आध्यात्मिक निर्देश और मार्गदर्शन हासिल करना है

और यदि वह हमें यह दे सकता है, तो समझना चाहिये कि यह काफ़ी है।

7. सत्गुरु प्रभुत्व का स्वरूप होते हैं। जैसे धुर–धाम के सत्य बिना ज़बान के सूक्ष्म रूप में उनमें उतरते हैं, वैसे ही सत्गुरु के निर्देश चुपचाप कार्य करते हैं और वे बिना ज़बान के जीव के हृदय में उतर जाते हैं।

शेख़ो-फ़अआल अस्त बे आलत चू हक़्क़।
बा मुरीदां दाद बे-गुफ़्ते सबक़।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 2, पृ.134)

(अर्थात, एक शेख़ [सत्गुरु] परमात्मा की तरह से निराकार में स्थित होता है और बिना बोले अपनी शिक्षा शिष्यों का देता है।)

सत्गुरुओं की शिक्षाएँ बेज़बानी की ज़बान में होती हैं अर्थात मूक भाषा में होती हैं; न तो वह बोलने में आ सकती है और न ही लिखने में।

तुम मेरी बात को क्यों नहीं समझते? क्योंकि तुम मेरे शब्द को नहीं सुन सकते।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 8:43)

वह सिर्फ़ रूह की ज़बान से बोलता है और इसे रूह द्वारा ही अनुभव किया जाता है।

शाह नियाज़ फ़र्माते हैं :

अम्रे-रब्बी अस्त रुहो-सिर्र ख़ुदास्त,
ज़िक्रे-बेकामो-बेज़बां ऊरास्त।

– दीवाने–ग़रीब नवाज़ (पृ.90)

(अर्थात, आत्मा की ज़ात वही है, जो परमात्मा की है। बाहरी सहायता [जैसे बोलने की इंद्रियाँ आदि] के बिना भी यह अपने आप को व्यक्त कर सकती है, क्योंकि यह परमात्मा का रूप है।)

सत्गुरुओं की शिक्षाएँ मूक भाषा में प्रसारित होती हैं। उनको न तो बोलचाल की, न ही लिखित वाणी के द्वारा पाया जा सकता है। अर्थात इनमें स्थूल इंद्रियों का कोई ख़ास काम नहीं; ये सब आत्मा के आन्तरिक अनुभव का मसला हैं।

अखी बाझहु वेखणा विणु कन्ना सुनणा।।
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा।।
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा।।
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा।।

– आदि ग्रंथ (माझ वार म॰1, पृ॰139)

मौलाना रूमी भी यही फ़र्माते हैं :

बे परो बे पा सफ़र मी करदमे,
बे लबो-दंदाँ शकर मी ख़ारदमे,
चश्म बस्ता आलमे मी-दीदमे।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.228-229)

(अर्थात, मैं उन मंडलों में बिना पंखों के उड़ता हूँ, पैरों के बिना वहाँ यात्रा करता हूँ, बिना होंठ, व दाँतों के स्वर्ग का भोजन करता हूँ, और अपनी आँखें बंद करके वहाँ की शान को देखता रहता हूँ।)

8. जिज्ञासुओं को अपने भ्रम निवारण हेतु कभी कभार ही सत्गुरु से प्रश्न करना पड़ता है, क्योंकि वे अपने आप, बिना पूछे ही, उन प्रश्नों का उत्तर दे देते हैं, जो श्रोतागणों के मन में प्राथमिक रूप से उभरते रहते हैं।

9. सत्गुरु की शिक्षाएँ हमेशा 'नाम' या 'सुरत–शब्द योग' पर केंद्रित रहती हैं। वे स्पष्ट शब्दों में हमें बताते हैं कि व्यक्ति बाहरी साधनों से परमात्मा को नहीं पा सकता, न ही उस तक पहुँच सकता है। क्योंकि वह परमात्मा हमारी आत्मा का स्वामी है, इसीलिये उसे अंतर्मुख होकर, अपने अंदर ही खोजना होगा।

सेंट मॅथ्यू अपने सुसमाचारों में हमें बतलाते हैं :

मैं तुम्हें निश्चयपूर्वक बतलाता हूँ कि जब तक तुम एक छोटे बच्चे के समान सरल न बन जाओ, तुम प्रभु की बादशाहत में प्रवेश नहीं पा सकते।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 18:3)

आगे, सेंट ल्यूक के सुसमाचारों में हमें मिलता है :

निश्चयपूर्वक मैं तुम्हें यह कहता हूँ कि जो कोई भी परमात्मा की बादशाहत को छोटे बच्चे के जैसे स्वीकार नहीं करेगा, वह

वहाँ प्रविष्ट नहीं हो सकेगा।

– पवित्र बाइबिल (लूका 18:17)

मानव महान है, क्योंकि यह मानव शरीर सच्चा हरिमंदिर है तथा इसी में ज्ञानों के सिरमौर की ज्योति जगमगा रही है।

सेंट ल्यूक हमें बतलाते हैं :

परमात्मा की बादशाहत बाहर देखने भालने से नहीं प्राप्त होती......परमात्मा की बादशाहत तो तुम्हारे अंदर है।

– पवित्र बाइबिल (लूका 17:20-21)

एक मुस्लिम दरवेश इन्हीं स्वरों में फर्माते हैं :

मस्जिद अस्त ईं दिल जिस्मश साजद अस्त।

(अर्थात, इंसानी दिल ही मस्ज़िद है और शरीर पूजा–स्थल है।)

आगे फिर,

नकली मन्दिर मसजिदों में जाय सद अफ़सोस है।
क़ुदरती मसजिद का साकिन दुख उठाने के लिये।।

– तुलसी साहिब

मग़रिबी साहिब भी हमें बतलाते हैं :

यार दर तू पस चिरा ऐ बेख़बर,
यार दर ख़ुद तू चिह् गरदी दर बदर।

– मसनवी बू अली शाह क़लन्दर (पृ.25)

(अर्थात, तुम्हारा प्रियतम–परमात्मा तुम्हारे अंदर है और तुम इस बात से अनजान हो। वह तुम्हारी आत्मा की आत्मा है, और तुम उसकी तलाश में बाहर भटक रहे हो।)

इस विषय में स्वामी शिवदयाल सिंह जी महाराज फ़र्माते हैं :

दर दिमाग़े तो गुलशनो मजलिस।
सैर कुन तेज़ रौ ज़े मुर्शिद पुर्स।

– सार बचन (बचन 21, ग़ज़ल 2)

(अर्थात, तुम्हारे मस्तिष्क के अंदर बड़े आश्चर्यजनक बाग़ीचे और सौंदर्य–स्थल हैं। यदि तुम उनका आनंद लेना चाहो, तो सत्गुरु (मुर्शिद) के पास मार्गदर्शन के लिये पहुँचो।)

गुरुवाणी में आया है :

विणु काइआ जि होर थै धनु खोजदे से मूड़ बेताले।।
से उझड़ि भरमि भवाईअहि जिउ झाड़ मिरगु भाले।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी वार म॰4, पृ॰309)

पिंड (स्थूल शरीर) ब्रह्मांड (विश्व) का ही लघु स्वरूप है। एक ही आत्मा ब्रह्मांड तथा पिंड– दोनों में काम कर रही है। जब तक हम इस पिंड में मौजूद अपनी आत्मा को नहीं पहचानते और उसके संपर्क में नहीं आते, तब तक हम विश्वव्यापी ब्रह्मांडीय आत्मा (या'नी परमात्मा) को देख व अनुभव नहीं कर सकते और न ही उससे एकमेक हो सकते।

जब तक देहधारी आत्मा देह से अलग नहीं होती और इंद्रियों के घाट से ऊपर नहीं आती, तब तक यह ब्रह्मांडीय आत्मा से सुसंगत नहीं हो सकती।

फिर भी, हम परमात्मा या ब्रह्मांडीय आत्मा को सदा पिंडी जगत में खोजते रहते हैं। हम परमात्मा को धरती की गुफाओं में, बर्फ़ीले पहाड़ों की चोटियों पर, पवित्र नदियों के पानी में, रेगिस्तान के रेतीले टीलों पर तथा इंसानी हाथों से बने मंदिरों और मस्जिदों, गिरजों एवं सिनेगाहों (Synagogues) में ही खोजते रहते हैं; इसीलिये हम उसे पाने में असफल रह जाते हैं।

यदि हम अपने शरीर के भीतर के अंतरीय रास्ते को जान लें, तो हम अपने अंदर उस महाशक्ति का अनुभव पाने की आशा कर सकते हैं। लेकिन यह अंतर्मुखता, परा–विद्या या आत्मा–विज्ञान के किसी अनुभवी महापुरुष की सहायता के बिना संभव नहीं है, क्योंकि केवल उसी के पास परमात्मा की बादशाहत की कुंजी है और उसके शब्द 'सिमसिम खुल जा' के जैसे उस गुप्त द्वार को तुरन्त खोल देते हैं।

गुर परसादी वेखु तू हरि मंदरु तेरै नालि।।

– आदि ग्रंथ (प्रभाती बिभास म॰3, पृ॰1346)

10. सत्गुरु की शिक्षाएँ अपने आप में परिपूर्ण हैं और उनकी परख वैसे ही की जा सकती है, जैसे किसी अन्य विज्ञान की।

फिर भी, इस विज्ञान के अनुभव पुस्तकीय ज्ञान और बौद्धिकता से बहुत भिन्न है और न ही ये किसी विकृत दिमाग़ की कल्पना हैं, जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं।

संत हमेशा दृढ़ विश्वास और अधिकार से बात करते हैं, क्योंकि वे जो कुछ बोलते हैं, आत्मा की गहराइयों से बोलते हैं। उनका ज्ञान न तो किसी पुस्तक से लिया गया होता है और न ही किसी सुनी–सुनाई किंवदंती के आधार पर होता है। वे सीधे हमें अपना ज़ाती (निजी) अनुभव प्रदान करते हैं, जो कि शुद्ध और निर्मल होता है। फिर, वे हमें अंधविश्वास करने को नहीं कहते। इसके विपरीत, वे कहते हैं कि हर जिज्ञासु स्वयं उन बातों को अपने अंदर अनुभव करके देखे।

सत्य वह है, जिसका अनुभव तुरन्त किया जा सके, युगों के बाद नहीं, चाहे आरम्भ में वह अनुभव कितना ही कम क्यों न हो। सत्गुरु वस्तुओं के मूल तक जाकर उनका अनुभव पाते हैं और तब कहीं दूसरों को बतलाते हैं।

नानक का पातिसाहु दिसै जाहरा।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰397)

श्री रामकृष्ण परमहंस से जब नरेन (जो बाद में स्वामी विवेकानंद के नाम से विख्यात हुए) ने परमात्मा को देखने के बारे में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ बच्चा, मैंने परमात्मा को देखा है, जैसे मैं तुम्हें देखता हूँ।"

वास्तव में, सभी संत–सत्गुरुओं को परमात्मा का अनुभव हुआ होता है और वे उसकी ज्योति और जीवन में मस्त रहते हैं, और एक तरह से वे उसके (परमात्मा के) साथ काम करने वाले (Conscious Co-worker) हो जाते हैं।

शम्स तबरेज़ फ़र्माते हैं :

बबायद चश्म सरे माशूक़ दीदन,
कलामश रा बगोशे ख़ुद शुनीदन,
निहां अंदर निहां बीहद जमालश,
बगोख्ने हिस फ़हम बकुनद कमालश।

(अर्थात, परमात्मा को अपनी आँखों से देखना और उसकी आवाज़ को अपने कानों से सुनना अधिक अच्छा है। उसकी शान दो आँखों के पीछे, अंधकार के

पर्दे के पीछे छिपी हुई है और उसकी महानता को अंदर ही देखा जा सकता है।)

बाइबिल में हम पढ़ते हैं :

> जब मुर्दे परमात्मा के पुत्र की आवाज़ सुनेंगे..... जो सुनेंगे, वे जीवित रहेंगे।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 5:25)

ऐसी महान आत्माएँ कभी धर्मग्रंथों पर निर्भर नहीं रहतीं, क्योंकि आख़िरकार, धर्मग्रंथ उन जैसी महान आत्माओं के अनुभवों के लिखित विवरण ही हैं। वे सदेह 'सत्' होते हैं, 'शब्द'–सदेह होते हैं और हमारे बीच रहते हैं। सभी वेद व शास्त्र उनके अंतर में मौजूद स्रोत से निकलते हैं। वे (संत–सत्गुरु) उन धर्मग्रंथों से बहुत अधिक हैं, क्योंकि वे धर्मग्रंथ उनके असीम ज्ञानसागर व व्यक्तित्व का कणमात्र है। सत्गुरुओं की शिक्षाएँ अत्यंत स्वतंत्र होती हैं और सदेह आत्माओं को स्वतंत्रता और मुक्ति प्राप्त कराती हैं।

> मैं ज़िंदगी की रोटी हूँ, जो मेरे पास आयेगा, कभी भूखा नहीं रहेगा, और जो मुझ पर विश्वास करेगा, कभी प्यासा नहीं रहेगा।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:35)

मलार की वार में गुरु नानक हमें बतलाते हैं कि किसी संत–सत्गुरु की क्या पहचान है :

> घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु।।
> पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु।।
> दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु।।
> तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु।।
> सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ।।
> अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ।।
> उलटि कमलु अंमृति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ।।
> अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ।।
> सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु।।
> सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु।।
>
> – आदि ग्रंथ (मलार वार म॰1, पृ॰1291)

वे अपने अनुयायियों को बाहरी साधनों की व्यर्थता के बारे में कभी धोखे में नहीं रखते। उनकी मुख्य शिक्षाएँ केवल एक चीज़ के आस–पास घूमती हैं— 'शब्द' के साथ संपर्क और 'शब्द' की ही भक्ति। अनहद संगीत का अंतर में प्रकट होना संत–सत्गुरु की भेंट है।

कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा।। वाजे ता कै अनहद तूरा।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰393)

सत्गुरु हमेशा 'नाम' में तल्लीन रहते हैं और एक निपुण यान चालक की भाँति, सच्चे जिज्ञासुओं को सुरक्षापूर्वक भवसागर से पार ले जाते हैं और जो परमात्मा का साम्राज्य उनके लिए अंतर में खोया हुआ था, उसमें उन्हें पहुँचा देते हैं।

नामि रता सतिगुरू है कलिजुग बोहिथु होइ।।
गुरमुखि होवै सु पारि पवै जिना अंदरि सचा सोइ।।
– आदि ग्रंथ (बिहागड़ा वार म॰4, पृ॰552)

11. संत–सत्गुरु कभी–कभी ऐसे काम कर देते हैं, जो दुनियादारों को ठीक नहीं लगते। ऐसा वे इसलिये करते हैं ताकि सांसारिक मन वाले लोग उनसे दूर रहें, और मक्खियों के जैसे उड़ जाएँ, ताकि वे सच्चे जिज्ञासुओं का रास्ता न रोक सकें।

दरे-दरवेश रा दरबाँ न बायद,
बबायद ता सगे-दुनिया न आयद।

(अर्थात, एक दरवेश (पवित्र महात्मा) को किसी दरबान (द्वारपाल) की ज़रूरत नहीं होती। हाँ, सांसारिक कुत्तों को दूर रखने के लिये उनकी आवश्यकता होती है।)

निंदा दरवेशों के लिये दरबान का काम करती है, ताकि सांसारिक व्यक्ति रास्ते से दूर रहें।

भाई बाला की जन्म साखी में यह उल्लेख है कि एक बार गुरु नानक जी ने फ़र्माया था :

कलियुग में दुखी मानवता की भलाई के लिये परमात्मा के बहुत से संत अवतरित होंगे।

भाई अजिता ने प्रश्न किया :

गुरुजी, क्या आप हमें यह बतलायेंगे कि हम संपूर्ण संत को कैसे जानेंगे? उसका बाहरी स्वरुप कैसा होगा और हम उसे कैसे पहचान पायेंगे?

सत्गुरु महाराज जी ने उत्तर दिया :

जब कभी कोई संत प्रकट होता है, समाज के कुछ नेता, धार्मिक अंधविश्वासी व्यक्ति और जाति-पाति में फँसे व्यक्ति, उसकी बुराई करेंगे। विरले ही सच्चे संत के पास पहुँचेंगे। बाक़ी सभी सत्गुरु और उसके शिष्यों की निंदा-चुगली व बदनामी करेंगे। जन-साधारण, जो बाहरी साधनों- जैसे धर्मग्रंथों के पठन-पाठन, गिरजे, मंदिर, मस्ज़िद आदि में सामूहिक प्रार्थना और मंत्रजाप आदि में लगे रहते हैं, वे शब्द का अभ्यास नहीं करेंगे। जब ऐसी परिस्थितियाँ उपस्थित होंगी, तो मैं संतों के मार्ग को प्रचलित करने के लिये बारंबार अवतरित होऊँगा और लोगों को अनहद वाणी के साथ जोड़ूँगा।

12. एक संत के आगमन से अध्यात्म की बाढ़ आ जाती है और युगों–युगों से सूखे और प्यासे दिल तरोताज़ा हो जाते हैं। जो भी उसके पास आता है– पापी या पुण्यी, उसकी संगत से लाभ उठाता है और सांत्वना पाता है। अनेक डाकुओं, हत्यारों और ठगों का उनकी संगत में आकर काया–कल्प हुआ। एक निपुण धोबी के जैसे, वह हमारी आत्माओं की सारी मैल– स्थूल, सूक्ष्म या कारण मैल को पूरी तरह धोता है, जब तक कि आत्मा अपनी मौलिक शान और ज्योति से चमकने नहीं लगती।

हम संत में निस्वार्थ प्रेम और बलिदान की जीती जागती मूर्ति पाते हैं। उसके उपदेश सार्वभौमिक होते हैं और इंसान की सुरत के लिए होते हैं। हज़ारों की संख्या में जिज्ञासु उसके आस–पास इकट्ठे होते हैं और उसकी शिक्षाओं से लाभ उठाते हैं।

13. एक संत परमात्मा का सच्चा पुत्र होता है और परमात्मा की सभी शक्तियाँ उसमें होती हैं। उसकी लंबी और ताक़तवर भुजाएँ सारी दुनिया को अपने आगोश में बाँध लेती हैं और उसके मददगार हाथ संसार के प्रत्येक भाग में फैले होते हैं। उसके लिये नज़दीकी–दूरी कोई मा'ने नहीं रखती। उसकी बचाने वाली दया अचरजपूर्ण और अनोखे तरीक़ों से काम

करती है और लोग अनेक कष्टप्रद और निराशापूर्ण परिस्थितियों से, यहाँ तक कि मौत से भी, बिना ख़रोंच लगे, बच जाते हैं।

धरती और दिव्य मंडलों का मालिक होने के कारण, वह निजघर की ओर जाती आत्माओं का आत्मिक मंडलों में मार्गदर्शन करता है और उसका नूरी स्वरूप सदा उस यात्री आत्मा के साथ रहता है, जो शरीर छोड़ कर आगे मंडलों में जाती है।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

दस्ते-पीर अज़ ग़ायबाँ कोताह नीस्त,
दस्ते-ऊ जुज़ कब्ज़ा-ए-अल्लाह नीस्त।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.312)

पस मरा दस्ते-दराज़ आमद यक़ीं,
बर गुज़श्त अज़ आस्माने-हफ़्तमीं।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 2, पृ.187)

(अर्थात, किसी संत–सत्गुरु का हाथ परमात्मा के हाथ से छोटा नहीं होता। वास्तव में यह हाथ स्वयं परमात्मा का ही होता है। हाँ, यह सात आसमानों के आर–पार फैला होता है और आत्माओं को आशा व विश्वास प्रदान करता रहता है।)

ये संत की अनगिनत निशानियों में से मात्र कुछ एक निशानियाँ हैं। इस संदर्भ में मौलाना रूमी फ़रमाते हैं :

बस निशानी हा कि अंदर औलियास्त,
ख़ास आँ जाँ बवद कि आश्नास्त।

(अर्थात, एक औलिया [महापुरुष] में आश्चर्यजनक ताक़तें और ख़ासियतें होती हैं, जो केवल एक पवित्र आदमी देख सकता है अनुभव कर सकता है।)

एक सत्गुरु की बड़ाई और महानता आत्मा के सामने तब अधिक स्पष्ट होती है, जब आत्मा शारीरिक और मानसिक सीमाओं को पार करके उसकी संगति में आगे बढ़ती है। सत्गुरु का नूरी स्वरूप यहाँ से आगे हमेशा उसके साथ रहता है, चाहे वह कहीं भी हो, और अंतर–बाहर उसका मार्गदर्शन करता है, उसके सभी प्रश्नों का जवाब देता है और वह उसके भविष्य का एकमात्र निर्णायक और उसका एकमात्र रक्षक होता है। इस अवस्था में व्यक्ति पूरी तरह से उसमें लीन हो जाता है और कह उठता है :

गुरु मेरै संगि सदा है नाले।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰394)

संसार ऐसे लोगों से भरा हुआ है, जो गुरु और संत–सत्गुरु होने का दावा करते हैं। लेकिन वे सभी लोग जो ताक़त और नाम–प्रसिद्धि के पीछे भागते हैं, शायद इस भूमिका को नहीं निभा सकते और इस कठिन कर्तव्य को पूरा नहीं कर सकते। मानव को ऐसे नक़ली संतों से बच कर रहना चाहिए, जो भेड़ों के रूप में ख़ूंख़ार भेड़ियों से कम नहीं हैं।

भूल कर भी किसी सच्चे गुरु की परीक्षा लेने की कोशिश करने का कोई लाभ नहीं। उसकी उपस्थिति अपने आप मन को वश में कर लेती है।

मौलाना रूमी फ़रमाते हैं :

हेच न-कुशद नफ़्स रा जुज़ ज़िल्ले-पीर,
दामने आँ नफ़्स कुश रा सख़्त गीर।
चूँ बगीरी सख़्त आँ तौफ़ीके-हूस्त,
दर तू हर क़ुव्वत किह् आयद जज़्बे-ऊस्त।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 2, पृ.242)

(अर्थात, पीर के साये के बगैर, मन को कोई क़ाबू में नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति को कस कर पकड़ लो। अगर आप ऐसा कर सकते हैं, तो यह उसी की कृपा से होगा और उसके बाद उसकी ताक़त तुम्हारे अंदर काम करने लगेगी।)

कबीर साहिब हमें उस रास्ते के बारे में बतलाते हैं :

मन दीया तिन सब दिया, मन की लार सरीर।
अब देवे को कछु नहीं, यों कह दास कबीर।।
तन मन दिया तो भल किया, सिर का जासी भार।
कबहूँ कहै कि मैं दिया, धनी सहैगा मार।।
तन मन ता को दीजिए, जाके विषया नाहिं।
आपा सबही डारि कै, राखै साहिब माहिं।।
तन मन दिया तो क्या हुआ, निज मन दिया न जाय।
कहै कबीर ता दास से, कैसे मन पतीयाय।।
तन मन दीया आपना, निज मन ता के संग।
कहै कबीर निरभय भया, सुन सतगुर परसंग।।

निज मन तो नीचा कीया, चरन कंवल की ठौर।
कहै कबीर गुरदेव बिन, नजर न आवै और।।

— कबीर साखी संग्रह, भाग 1 (गुरुदेव का अंग 18-13, पृ.2-3)

चौबीसवाँ अध्याय

गुरु, गुरुदेव, सत्गुरु और मालिक की एकता

धर्मग्रंथों में हम पढ़ते हैं कि परमात्मा निराकार है। वह बिना आँखों के देखता है, बिना हाथों के काम करता है, बिना पैरों के चलता है और बिना कानों के सुनता है।

वह सर्वव्यापी है, परन्तु फिर भी उसे देखा नहीं जा सकता। वह हर विचार, तर्क–वितर्क, समझ और सूझ–बूझ से परे है। मनुष्य अपनी सीमित बुद्धि और समझ के द्वारा उस तक नहीं पहुँच सकता। तो फिर हम परमात्मा को कैसे देख सकते और कैसे उससे प्यार कर सकते हैं? एक ही वर्ग या जाति के प्राणियों में सदा आपस में प्रेम प्यार और मिलकर रहने की भावना रहती है। हवा में उड़ने वाले पक्षी इकट्ठे होकर, झुंड बना कर उड़ते हैं। एक ही तरह के पशुओं में प्यार होता है और वे भी इकट्ठे रेवड़ों और झुंडों में इधर–उधर घूमते हैं। मनुष्य प्रकृति से सामाजिक प्राणी है और अपने साथियों के साथ समाज बना कर समूहों में रहता है।

ध्यान का अर्थ है, चित्तवृत्तियों को एकाग्र करना। पर जब तक ध्यान ठिकाने के लिए आँखों के आगे कोई वस्तु नहीं हो, तो ध्यान कैसे बनेगा? इंसान की इसी ज़रूरत को पूरा करने के लिए श्रीराम और श्रीकृष्ण (काल के अवतार) ने मानव चोला धारण किया और इसी उद्देश्य के लिए सत्गुरु (सतपुरुष या दयाल के अवतार) इस संसार में आते हैं– 'सत्', जो कि दृष्ट और अदृष्ट, अविनाशी सचखंड से लेकर सबसे निचले मंडल, नाशवान तथा मरणशील स्थूल देश तक पूरी सृष्टि का आधार है।

एक मुस्लिम फ़क़ीर ने उसका वर्णन बड़ी ख़ूबसूरती से किया है :

अगर आ ख़ुदा अस्त ख़ुद मी आयद।

– नग़मा–ए–सरमद (रूबाई 75, पृ.64)

(अर्थात, अगर वह ख़ुदा [ख़ुद–आ] है, तो उसे ख़ुद आने दें।)

वास्तव में, उसे इंसानी स्तर पर आना ही पड़ता है, क्योंकि तभी मनुष्य उसके बारे में जान सकता है।

जो आत्माएँ प्रभु को पाने को तड़पती हैं, मगर उस तक पहुँच नहीं सकतीं, उन्हें वह प्रभु एक सत्गुरु के रूप में उपदेश देकर अपनी इच्छा पूरी करता है।

वह उन्हें बताता है कि वह (सत्गुरु) देह रखता है, लेकिन वह देह नहीं है। वह सभी देहधारी आत्माओं को बताता है कि देहाभास से ऊपर कैसे उठा जा सकता है और वह अपनी तवज्जोह का उभार देकर, उन्हें शरीर की क़ैद से बाहर खींचता है और उनका मित्र व मार्गदर्शक बन जाता है।

इस तरह से निराकार को आकार धारण करना पड़ता है, एक इंसानी स्तम्भ अपनाना पड़ता है, जहाँ से वह अपनी प्रभुता को प्रकट कर सके, ताकि दुखी और असहाय उसका लाभ उठा सकें। वह हमें बताता है कि हमारी असली क़ीमत क्या है और हम किस तरह से अपनी खोई हुई बादशाहत, जहाँ से सृष्टि के आदि में हमें निकाला गया था, को फिर से पा सकते हैं।

संत–सत्गुरु के शरीर रूपी स्तम्भ पर परमात्मा की पूरी शक्ति प्रकट होती है, और इसलिये उसे सच्चे अर्थों में प्रभु देहधारी कहा जा सकता है। वह यह ख़ुशख़बरी लेकर आता है कि परमात्मा और उसकी बादशाहत निकट ही हैं और सही दिशा में प्रयत्न और अभ्यास से, आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं।

जिसने 'सत्' को जान लिया, वह सत्गुरु है। वास्तव में सत्गुरु, सत् देहधारी है। 'शब्द' ('नाम') वास्तव में सदेह हो जाता है और हमारे बीच में निवास करता है, और उसके आदेश और मार्गदर्शन से, हम उसके साथ हो लेते हैं, जब तक कि उसकी तरह से, हम भी चेतन सिद्धांत, 'शब्द' बन जाते हैं, और परमात्मा की दैवी योजना में सुसंगत होकर हाथ बँटाने लगते हैं।

गुरु परमेसरु एको जाणु।। जो तिसु भावै सो परवाणु।।

– आदि ग्रंथ (गोंड म॰5, पृ॰864)

पच्चीसवाँ अध्याय

एकता का भाव

वास्तव में, सत्गुरु 'सत्' से एकमेक हो होते हैं, क्योंकि वे 'सत्' में समाये होते हैं और उसी में रंगरलियाँ मनाते हैं। 'सत्' असीम व सर्वव्यापी है, पर यह इंसानी चोले में स्वयं प्रकट होकर, लोगों के बीच रहकर काम करता है– उसे आप चाहे किसी भी नाम से पुकारो– सत्गुरु, मुर्शिद आदि।

वे ज्योति के स्तम्भ होते हैं, जो भवसागर को 'सत्' की रोशनी से प्रज्ज्वलित करते हैं, जिससे तड़पती इंसानियत को रास्ता दिखाई दे सके। वे बिजली के ऐसे जीवन्त खटके या स्विच जैसे होते हैं, जो बिजलीघर से जुड़ा हो, और जिसको खोलते ही बिजलीघर की सारी बिजली हमें मिल सकती हो। वे हर व्यक्ति को, उसकी ज़रूरत के अनुसार, रूहानियत की दौलत बाँटते हैं।

एक चुंबकीय केन्द्र या जीवन्त स्विच की भाँति, वे शरीर रखते हैं, पर वे शरीर नहीं होते, बल्कि उसमें काम करने वाली प्रभु–सत्ता होते हैं। यही बात आत्मा–देहधारियों या'नी हम पर भी लागू होती है। हम भी वे नहीं है, जो कि हम प्रतीत होते हैं या'नी यह शरीर, बल्कि हम आत्मा हैं, जो इस स्थूल शरीर को जान देती है।

आत्मा की ज़ात या रूप वही है, जो सत्गुरु में काम करने वाली सत्ता की है, हालाँकि यह अनगिनत परदों में लिपटी रहती है और अनंत सीमाओं में बँधी रहती है। पर जब आत्मा अनेकों परदों और सीमाओं से मुक्त हो जाती है और निरोल अवस्था को पा जाती है, तो यह सत्गुरु की शान और महानता को देखने वाली हो जाती है, क्योंकि वह वो क्षितिज है जहाँ मृत्युलोक (इहलोक) और परलोक मिलते हैं और जहाँ से प्रभु की ज्योति का सूर्य उगता है और सम्पूर्ण आकाश में उजाला करता है। मौलाना रूमी कहते हैं :

दर बशर रूपोश कर्द अस्त आफ़ताब
— मसनवी मौलाना रूमी, निकलसन (दफ़्तर 1:2964, पृ.182)

(अर्थात, मा'नो सूर्य उसमें छिपा हुआ है।)

हम प्रभु की महानता, शान और सौन्दर्य का अंदाज़ा सत्गुरु की भौतिक देह को देखकर नहीं लगा सकते। उसका अनुभव पाने के लिए हमें उसके ही स्तर तक ऊँचा उठना होगा।

एवडु ऊचा होवै कोइ। तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ।।
— आदि ग्रंथ (जप जी 24, पृ॰5)

प्रभु का रूप आत्मिक है, इसलिए हमें भी आत्म–विश्लेषण द्वारा अपनी आत्मा को विभिन्न परदों से मुक्त करना होगा, क्योंकि आत्मा ही आत्मा का अनुभव कर सकती है; उसे न तो इंद्रियों से जाना जा सकता है, न मन से और न ही बुद्धि से।

सत्गुरु की आँखें नशे से भरे प्याले होते हैं, जो अंतर अनंत में खुलती हैं और बाहर इस सीमाबद्ध संसार में। इन आँखों से प्रभु का नूर चमकता दिखाई देता है– परछाईरहित नूर, जिसकी तुलना इस ससांर की किसी भी वस्तु से नहीं की जा सकती।

मौलाना रूम उसके बारे में बताते हैं :

मर्दे-ख़ुदा मस्त बुवद बे-शराब,
मर्दे-ख़ुदा सेर बुवद बे-कबाब।
— कुल्लीयाते–शम्स तबरेज़ (पृ.116)

(अर्थात, वह बिना शराब के मस्त रहता है और बिना भोजन के तृप्त रहता है।)

आगे कहते हैं :

दस्ते-ऊ दस्ते-ख़ुदा चश्मे-ऊ मस्ते-ख़ुदा।
— दीवाने–शम्स तबरेज़ (पृ.116)

(अर्थात, उसकी आँखें प्रभु की आँखें हैं, उसके हाथ प्रभु के हाथ हैं।)

इस संसार में रहते हुए भी वह इसका बंदा नहीं होता, न ही वह हमारी तरह तन के पिंजरे में क़ैद होता है। वह मुक्त होता है और जब चाहे, रूहानी खंडों–ब्रह्मंडों में आ–जा सकता है। उसमें यह समर्था होती है कि

वह अपनी इच्छानुसार, हज़ारों–लाखों जीवों को रूहानी मंडलों में जाने की शक्ति प्रदान कर सकता है।

सत्स्वरूप महापुरुष 'सत्' में अभेद होता है और उसमें संपूर्ण 'सत्' समाया होता है, जिसके द्वारा वह मुक्ति प्रदान करने के अपने मिशन को जारी रखता है।

सत्गुरु, आकार रखते हुए भी निराकार है। वह शब्द–देहधारी है; प्रेम, परमानंद और शांति का महान स्रोत है। इंसान, इंसान से ही सीख सकता है और प्राकृतिक नियम के अंतर्गत, 'शब्द' देह धारण करता है और हमारे बीच रहता है, ताकि हमें रूहानी निर्देश दे सके और हमारा मार्गदर्शन कर सके। आगे, अपनी तवज्जोह को उभार देकर, वह हमें निज घर जाने के लायक़ भी बनाता है। और ये सब काम–काज करते हुए, वह रोज़ाना अपनी इच्छानुसार, अपने घर सचखंड या सतलोक में पहुँच जाता है और निजानंद की मस्ती में आराम करता है।

'सत्गुरु' और 'सत्' एक ही हैं, दोनों में कोई भेद नहीं, क्योंकि वह 'सत्' का केन्द्र है।

अपरंपार पारब्रहमु परमेसरु नानक गुरु मिलिआ सोई जीउ।।

– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰1, पृ॰599)

सतिगुरु मेरा सदा सदा ना आवै न जाइ।।
ओहु अबिनासी पुरखु है सभ महि रहिआ समाइ।।

– आदि ग्रंथ (सूही म॰4, पृ॰759)

हम सत्गुरु की कितनी भी प्रशंसा करें, हम उसके साथ न्याय नहीं कर सकते, क्योंकि जब कुछ भी अस्तित्व में नहीं था, तब उसका अस्तित्व था और उसी से सभी अन्य वस्तुएँ, संपूर्ण सृष्टि और सारे खंड–मडल अस्तित्व में आए।

गुरु की महिमा किआ कहा गुरु बिबेक सत सरु।।
ओहु आदि जुगादी जुगह जुगु पूरा परमेसरु।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰397)

गुरुवाणी में यह कहा गया है कि ध्यानपूर्वक अपने अंदर खोजबीन करने से व्यक्ति इस परिणाम पर पहुँचता है कि सत्गुरु ही

'सत्' है और 'सत्' ही गुरु है, इन दोनों में किसी तरह का अंतर नहीं होता।

समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰4, पृ॰442)

सर्वशक्तिमान परमेश्वर, वास्तव में, एक संत के रूप में रहता है और अपनी योजना को उसके द्वारा क्रियान्वित करता रहता है।

गुर महि आपु रखिआ करतारे।।
गुरमुखि कोटि असंख उधारे।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰1, पृ॰1024)

बिनु गुर प्रेम न लभई जन वेखहु मनि निरजासि।।
हरि गुर विचि आपु रखिआ हरि मेले गुर साबासि।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰4, पृ॰996)

कबीर साहिब हमें बतलाते हैं कि वे परमात्मा के साथ एकमेक हैं।

अब हम तुम एक भए हहि एकै देखत मनु पतीआही।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी कबीर, पृ.339)

अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी।।
राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी।।
– आदि ग्रंथ (रामकली कबीर, पृ.969)

शम्स तबरेज़ भी इसी स्वर में फ़र्माते हैं :

मन तू शुदम तू मन शुदी, मन तन शुदम तू जां शुदी,
ता कस नगोयद बअद अज़ीं मन दीगरम तू दीगरी।
– अमीर ख़ुसरो (पृ.112)

(अर्थात, हम ऐसे एकमेक हो गये हैं, जैसे आत्मा और शरीर, ताकि इसके पश्चात कोई यह नहीं कह सकता कि मैं आप से अलग हूँ।)

ईसा भी कहते हैं :

मैं और मेरा पिता एक हैं।
– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 10:30)

जिसने मुझे देखा, उसने मेरे पिता को देखा।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 14:9)

वास्तव में परमात्मा और सत्गुरु, समुद्र और उसकी लहरों के जैसे हैं। जब लहरें उठती और गिरती हैं, तो क्षण भर के लिए वे अलग प्रतीत होती हैं, लेकिन जैसे सागर का सार पानी है, वैसे ही लहरों का सार भी पानी है।

ठीक वैसी ही पानी की बूँद है। जब उसे समुद्र से अलग करते हैं, तो वह एक बूँद होती है, लेकिन जिस क्षण वह समुद्र में मिल जाती है, वह वह अपना व्यक्तित्व को खो बैठती है और समुद्र का ही भाग बन जाती है।

परमात्मा निराकार है। जब वह सत्गुरु में प्रकट होता है, तो लोगों को उपदेश देने और मार्गदर्शन के लिये रूप धारण कर लेता है।

नानक सोधे सिंमृति बेद।। पारब्रहम गुर नाही भेद।।

– आदि ग्रंथ (भैरउ म॰5, पृ॰1142)

परमात्मा 'आदि शब्द सिद्धांत' है, जिसका अनुभव आत्म–ज्ञान के प्यासे लोगों को सत्गुरु के द्वारा मिलता है।

गुर महि आपु समोइ सबदु वरताइआ।।
सचे ही पतीआइ सचि समाइआ।।

– आदि ग्रंथ (मलार वार म॰1, पृ॰1279)

आपे सतिगुरु आपि सबदु जीउ जुगु जुगु भगत पिआरे।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी म॰3, पृ॰246)

पवित्र बाइबिल में हम पढ़ते हैं :

'शब्द' सदेह हुआ और हमारे बीच रहा...सत् और कृपा से भरा हुआ।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 1:14)

गुरुवाणी में हमें मिलता है :

गुर सतिगुर सुआमी भेदु न जाणहु
जितु मिलि हरि भगति सुखाँदी।।

– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰1, पृ॰77)

हरि का संतु सतगुरु सत पुरखा जो बोलै हरि हरि बानी।।

जो जो कहै सुणै सो मुकता हम तिस कै सद कुरबानी।।

– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰4, पृ॰667)

सर्वशक्तिमान प्रभु से जुड़े रहने के कारण, गुरु सभी का कर्ता और करणहार है और सारी सृष्टि व उसके जीवों का पालन करता है।

गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखि सची सोइ।।

– आदि ग्रंथ (सिरी म॰3, पृ॰52)

गुरु परमेसरु करणैहारु।। सगल सृसटि कउ दे आधारु।।

– आदि ग्रंथ (सूही म॰5, पृ॰741)

गुरु सुखदाता गुरु करतारु।। जीअ प्राण नानक गुरु आधारु।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी म॰5, पृ॰187)

गोसाईं तुलसीदास, हिंदी रामायण के महान लेखक, गुरु के बारे में कहते हैं :

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

– रामचरितमानस (बालकांड, सोरठा 5)

(अर्थात, जो मनुष्य रूप में स्वयं परमात्मा है, करुणा का सागर है, उस गुरु के चरण–कमलों में नमस्कार। उसकी कृपामयी वाणी हमारे अंदर के अंधे मोह के अंधकार को नष्ट करती है।)

पवित्र बाइबिल में हम पढ़ते हैं कि ईसा ने एक बार अपने शिष्यों से पूछा : "लोग मुझ मनुष्य–पुत्र को क्या समझते हैं?" और साइमन पीटर ने उत्तर दिया : "आप क्राइस्ट हैं और जीवित परमात्मा के पुत्र हैं।"

ईसा ने पतरस (पीटर) से कहा :

साइमन बार-जोना! आप धन्य हैं। ये बात तुम्हें किसी इंसान ने नहीं बतलाई, बल्कि मेरे स्वर्गस्थ पिता ने तुम्हें बतलाई है।

और मैं भी तुम्हें कहता हूँ, कि तुम पीटर हो और इस चट्टान पर मैं अपना गिरजा (चर्च) बनाऊँगा, और उसके सामने नरक के द्वार नहीं खुलेंगे।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 16:13,16-18)

दूसरे अवसर पर, उन्होंने उनसे अधिक स्पष्टता से कहा :

फ़िलिप ने उनसे कहा, "भगवन्! हमें पिता के दर्शन करा दो और हमारे लिये यही काफ़ी है।" ईसा ने उनसे कहा, "मैं इतने समय तुम्हारे साथ रहा और फिर भी तुमने मुझे नहीं जाना, फ़िलिप? जिसने मुझे देखा, उसने मेरे पिता को देखा। और फिर तुम ऐसा क्यों कहते हो कि हमें पिता के दर्शन करा दो? क्या तुम यह विश्वास नहीं करते कि मैं पिता में हूँ और पिता मेरे अंतर में निवास करता है।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 14:8-10)

गुरु अर्जन देव जी महाराज ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में प्रभु के साथ अपनी एकता की बात हमें बतलाई है :

मंदर मेरे सभ ते ऊचे।। देस मेरे बेअन्त अपूछे।।
राजु हमारा सदा ही निहचलु।। मालु हमारा अखूटु अबेचलु।।
सोभा मेरी सभ जुग अंतरि।। बाज हमारी थान थनंतरि।।
कीरति हमारी घरि घरि होई।। भगति हमारी सभनी लोई।।
पिता हमारे प्रगटे माझ।। पिता पूत रलि कीनी साँझ।।
कहु नानक जउ पिता पतीने।। पिता पूत एकै रंगि लीने।।

– आदि ग्रंथ (भैरउ म॰5, पृ॰1141)

हिंदू धर्मग्रंथों में हमें मिलता है :

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परब्रह्मः तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

– स्कन्द पुराण; गुरु गीता (32)

(अर्थात, गुरु ही ब्रह्मा है, वही विष्णु और शिव है। वही पारब्रह्म है, और इसीलिये हम गुरु के चरण–कमलों में प्रणाम करते हैं।)

मांडुक्य उपनिषद् (श्लोक 12) में कहा गया है :

अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्यः प्रपञ्चोपशमः शिवोऽद्वैत एवमोङ्कार आत्मैव संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद।।

(अर्थात, जैसे पहाड़ से निकलने वाली बहुत सी नदियाँ विभिन्न मैदानों से गुज़रती हुई, समुद्र में गिर कर अपना नाम और पृथक अस्तित्व खो कर समुद्र हो जाती हैं, इसी तरह से ब्रह्मज्ञानी दिव्य पुरुष [प्रभु] में, अपने नाम और स्वरूप को खोकर, तद्‌रूप होकर समा जाता है।)

यहाँ प्रश्न उठता है कि सर्वव्यापी आत्मा, एक इंसान के सीमित शरीर में कैसे समा सकती है? श्रीमद्भगवद्गीता के सप्तम अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है :

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।।
नहां प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।।

— श्लोक 24-25

(अर्थात, मेरे परम भाव–स्वरूप (परे के स्वरूप) को न जानते हुए मूर्ख व्यक्ति मुझे प्रकट मनुष्य ही मानते हैं। वे मेरे इस अप्रकट, परम स्वरूप को नहीं जानते, जिसमें मैं सबसे परम ईश्वर–महेश्वर हूँ। मैं अपनी योगमाया की शक्ति से ढका रहने के कारण जन साधारण के सामने प्रकट नहीं होता। मुझ अजन्मा और अविनाशी को यह मूढ़ संसार नहीं जानता।)

आगे, अध्याय 9, श्लोक 11 में भगवान कहते हैं :

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्।।

(अर्थात, मेरे भावातीत स्वभाव को समस्त प्राणियों का स्वामी न समझते हुए, मूर्ख मुझे मनुष्य मात्र मानकर निंदा करते हैं।)

मौलाना रूमी के अनुसार, मुस्लिम दरवेशों पर भी यही बात लागू होती है :

दस्ते-पीर अज़ ग़ायबाँ कोताह नीस्त,
दस्ते-ऊ जुज़ क़ब्ज़ा-ए-अल्लाह नीस्त।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.312)

पस मरा दस्ते-दराज़ आमद यक़ीं,
बर गुज़श्त अज़ आस्माने-हफ़्तमीं।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 2, पृ.187)

बा कफ़श दरिया-कुल रा इत्तिसाल,
हस्त बे चूंन ओ चगूना पुर कमाल।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 5, पृ.96)

दर बशर रूपोश कर्द अस्त आफ़्ताब,
फ़हम कुन वल्लाहू आअलम वस्सवाब।

– मसनवी मौलाना रूमी, निकलसन (दफ़्तर 1: 2964, पृ.182)

(अर्थात, एक पीर की भुजा, परमात्मा की भुजा से छोटी नहीं और उसके द्वारा परमात्मा की ताक़त काम करती है। सातवें लोक–आसमान तक उसकी बाजू फैली होती है और उसके अतिरिक्त कोई भी उसकी महानता को नहीं दर्शा सकता। वास्तव में एक प्रज्ज्वलित सूर्य उसके अंदर छिपा होता है और श्रेष्ठता इस बात में है कि उसे उसी रूप में जाना जाये, जैसा कि वह स्वयं है।)

आगे, मौलाना रूम कहते हैं :

नूरे-हक़ ज़ाहिर बुवद अंदर वली,
नेक बीं बाशी अगर अहले-दिली।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.39)

(अर्थात, सत् की ज्योति किसी वली [सत्गुरु] के दिल में चमकती है। अगर तुम मोमिन [गुरु के शिष्य] हो, तो तुम उसे उसी [ज्योति के] रूप में देख सकते हो।)

वे आगे कहते हैं :

गुफ़्त पैग़म्बर किह् हक़ फ़रमूदा अस्त,
मन नगुंजम हेच दर बाला व पस्त।
दर ज़मीनो आसमानो अर्श नीज़,
मन नगुंजम ईं यक़ीं दान ऐ अज़ीज़।
दर दिले-मोमन बगुंजम ऐ अजब,
गर मरा ज़ूई दरां दिलहा तलब।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.282)

(अर्थात, हज़रत साहिब ने एक बार घोषित किया कि ख़ुदा ने उनसे कहा कि मैं सर्वोच्च ऊँचाइयों, सबसे गहरी खाइयों, धरती, आकाश, और सभी स्वर्गों से भी बहुत ऊँचे व परे हूँ। लेकिन एक बात बड़ी हैरानी की है कि मैं अपने भक्त [मोमिन] के दिल में बड़े आराम से समा जाता हूँ और जो कोई मुझसे मिलना चाहे, मुझे वहीं तलाश करे।)

सूरतश बर ख़ाक़ ओ जाँ दर ला-मकाँ,
ला-मकाने फ़ौक़े-वहमे-सालिकाँ।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.182)

(अर्थात, वह [मुर्शिद–सत्गुरु] धरती पर रहता है, फिर भी उसकी आत्मा अधर में फैली हुई है, जहाँ दुनिया के बुद्धि विचार या फ़लसफ़े नहीं पहुँच सकते।)

इस बारे में हमें शम्स तबरेज़ बतलाते हैं :

आँ पादशाहे-आज़म दर बस्ता बूद मुहकम,
पोशीद दल्क़े-आदम यानी किह् बर दर आमद।

– दीवाने–शम्स तबरेज़ (पृ.136)

(अर्थात, बादशाहों का बादशाह हमारे अंदर एक मोटे पर्दे के पीछे गद्दीनशीन है। इस हाड़–माँस के परदे के अंदर छिपा, वह हमें अपने पास लाने के लिये स्वयं आता है।)

बुल्लेशाह फ़र्माते हैं :

मौला आदमी बण आइआ।।
ओह आइआ जग जगाइआ।।

(अर्थात, मौला (परमात्मा) इंसान को अज्ञान की निद्रा से जगाने के लिये ख़ुद ही इंसान बन आता है।)

इसी तरह के गुरुवाणी में हमें बहुत से संदर्भ मिलते हैं :

हरि जीउ नामु परिओ रामदासु।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰5, पृ॰612)

हमरो भरता बडो बिबेकी आपे संतु कहावै।।
– आदि ग्रंथ (आसा भगत कबीर, पृ॰476)

पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरु होइ लखावै।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी भगत पीपा, पृ॰695)

सतगुरु निरंजनु सोइ।। मानुख का करि रूपु न जानु।।
– आदि ग्रंथ (रामकली म॰5, पृ॰895)

हरि का सेवकु सो हरि जेहा।।
भेदु न जाणहु माणस देहा।।
– आदि ग्रंथ (मारू सोलहे म॰5, पृ॰1076)

इसी तरह से भाई गुरदास फ़र्माते हैं :

एकंकार अकार करि गुर गोविंद नाउ सदवाइआ।।
– वारां गिआन रतनावली (25:1)

(अर्थात, एक–अंकार [अप्रकट परमात्मा]आकार धारण करके एक गुरु का नाम ग्रहण कर लेता है।)

जो तुम्हें सत् (निराकार) के बारे में बतलाये और तुम्हें सत् (अपरिवर्तनीय अमर सत्य) के साथ जोड़ दे, वह कोई और नहीं, बल्कि सत् देहधारी है। वह वास्तव में 'शब्द'–धारा है जो कि सबसे ऊँचे देश (सतलोक) से प्रवाहित होकर आ रही है।

मानवता को शिक्षित करने के लिये, यह 'शब्द'–धारा, एक संत की शक्ल धारण कर लेती है। अन्यथा, यदि परमात्मा, जो कि 'शब्द' धारा है, मनुष्य का रूप धारण करके हमारे बीच आकर, हमें मानवीय और आध्यात्मिक रहस्यों को न समझाये, तो मनुष्यों को आध्यात्मिक ज्ञान कैसे प्राप्त हो? इसी कारण से संत कबीर साहिब फ़र्माते हैं :

ब्रहम बोले काया के ओले।। काया बिन ब्रहम किआ बोले।।

जब तक वह परमात्मा हमारे जैसा आकार बनाकर, इस स्थूल मंडल में आकर, हमारे लिये जीता–जागता परमात्मा न बने, जिसे हम देख, सुन और समझ सकें, तब तक उस निराकार, निर्गुण प्रभु को, हम शरीरधारी मानव जान नहीं सकते। वह एक ही समय में परमात्मा भी होता है और मानव भी। वह परमात्मा और मानव के बीच कड़ी का काम करता है। वह 'शब्द'–सदेह होता है, ताकि परमात्मा के बारे में उपदेश देकर हमारा मार्गदर्शन कर सके।

रूस का एक सम्राट (ज़ार), पीटर दि ग्रेट, नौकायन और जहाज–रानी के काम को सीखने का बड़ा उत्सुक था, इसलिये वह एक मामूली मज़दूर के वेश में छिप कर हॉलेंड चला गया। वहाँ बहुत से रूसी मज़दूर भी आजीविका के लिये काम करते थे और पीटर भी उनके साथ काम करने लगा और बातों–बातों में उन्हें अपनी मातृभूमि के बारे में बतलाता और अपने साथ वापिस चलने को कहता।

ये ग़रीब लोग, पुराने ज़ार द्वारा रूस से निकाल दिए गये थे और वापिस नहीं जा नहीं सकते थे, बस मन मसोस कर रह जाते थे। पीटर

उनसे यह कहता कि ज़ार उसका थोड़ा–थोड़ा जानकार है और हो सकता है कि वह उन्हें क्षमा दिला दे। लेकिन बहुत कम लोग यह विश्वास कर पाए कि उन जैसे फटे–पुराने कपड़ों वाला एक मामूली मज़दूर, बादशाह ज़ार से भी कोई संबंध रखता होगा।

जब पीटर ने अपना प्रशिक्षण समाप्त करके, वापिस अपने देश की तरफ़ प्रस्थान किया, तो बहुत थोड़े से लोग, जो उसकी बातों पर विश्वास रखते थे, साथ वापिस हो लिये। जब वह रूस में प्रविष्ट हुआ, तो जगह–जगह उसका शाही स्वागत सम्मान हुआ। जब देश से निर्वासित मज़दूरों ने पीटर को दिये गये सम्मान को देखा, वे उत्साहित हो गये और उन्हें विश्वास हो गया कि वह उन्हें क्षमा अवश्य दिलवा देगा। जब आख़िर में उन्होंने देखा कि पीटर राजधानी में प्रवेश करके राजगद्दी पर बैठ गया, तो वे लोग अपने मज़दूर साथी के इस परिवर्तन पर दंग रह गये।

पीटर महान की तरह से ही, सत्गुरु भी सम्राटों का सम्राट है। वह इस संसार की क़ैद में, हमारे जैसा, साधारण वेश धारण करके आता है। वह भी हमारी तरह ही अपनी आजीविका कमाता है, हमारे से निज–घर, सतलोक की बात करता है, घर वापिस जाने के लिये हमारे अंदर ललक और चाह पैदा करता है और रास्ते में हमारे साथ जाने की और हमारा मार्गदर्शन करने की बात कहता है। बहुत थोड़े से लोग, जो उसके शब्दों पर विश्वास करते हैं, और उसकी सलाह पर चलना शुरू करते हैं, उन्हें इस बड़े भारी कैदख़ाने से छुड़ाकर, परमात्मा के सिंहासन की ओर ले जाया जाता है, जहाँ वे सत्गुरु को उस दिव्य स्वरूप में देखते हैं, जो कि हज़ारों सूर्यों और चंद्रमाओं के तेज से भी अधिक तेज है।

गुरु अर्जन हमें बतलाते हैं कि जिस प्रभु ने हमें देश–निकाला देकर दुनिया में भेजा था, वह अब हमें वापिस बुला रहा है :

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰678)

जब रानी इंदुमती, अभ्यास पूरा करके सचखंड में पहुँचीं, तो उसने देखा कि उसके सत्गुरु कबीर, वहाँ सतपुरुष की गद्दी पर बैठे हुए थे। यह देखकर वह बोली, "सत्गुरु! आप ने पहले ही मुझे क्यों नहीं बतलाया कि

आप स्वयं सतपुरुष हैं?" कबीर साहिब ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "तब तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं होता।"

सभी संत, जो सतलोक या अनामी देश में पहुँच जाते हैं, वे परमात्मा में अभेद हो जाते हैं और इस तरह से दर्जे में सभी बराबर हो जाते हैं। अतः उन में से किसी को भी एक दूसरे से बड़ा या छोटा नहीं कहा जा सकता :

संत संत को दोय कर जाने।। सो नर पड़ै नरक की खाने।।

सामान्यतः हज़ारों लोग एक संत–सत्गुरु के पास सत्संग में आते हैं और उसके सत्संग प्रवचनों को सुनते हैं, लेकिन उनमें से प्रत्येक उसे अपनी आध्यात्मिक और मानसिक पृष्ठभूमि के अनुसार ही देखता है। कुछ उसे पवित्र मानव समझते हैं, कुछ उसे दार्शनिक और कुछ पढ़ा–लिखा इंसान मानते हैं। दूसरे उसे आदर्श नैतिक आदमी मानते हैं, तो फिर कुछ दूसरे उसे निस्वार्थी कार्यकर्ता समझते हैं। ऐसे जीव दुर्लभ हैं, जो उसके अंदर परमात्मा को देखते हैं।

इस प्रकार प्रत्येक उसके (गुरु के) अंदर वैसा ही प्रतिबिंब पाता है, जैसा वह (शिष्य) स्वयं होता है या होना चाहता है। इसलिये वह (शिष्य) उससे (गुरु से) उसी गुण को पाता है, क्योंकि प्रत्येक को वह वही कुछ बाँटता है, जिसे पाने के वह योग्य हो।

मानव रूप में भैतिक देह में प्रकट होने के कारण, उसका सर्वप्रथम कर्तव्य मानव निर्माण (इंसान को इंसान बनाना) है, और 'सदेह प्रभु' होने के कारण उसका कर्तव्य परमात्मा को प्रकट करना या उसका अनुभव देना है। इसलिए, यह सब कुछ इंसान की पुराने जन्मों की अपनी पूष्ठभूमि पर निर्भर करता है। वह मानव वास्तव में धन्य है, जो प्रभु का रूप बनने के लिये पूर्णतया तैयार है, क्योंकि ऐसे व्यक्ति के लिये, वे तुरन्त ही अपने प्रभुत्व को प्रकट कर देते हैं; जैसे कि भगवान कृष्ण ने अर्जुन के सामने अपने काल रूप को प्रकट किया था, जब अज्ञान के कारण, उसने अपने क्षत्रिय–धर्म का पालन करने में झिझक की थी।

एक अंधा, आँख वाले मानव को नहीं देख सकता और न ही उसे पकड़ सकता है, जब तक कि आँख वाला मानव दया करके उसे हाथ पकड़ कर, सही रास्ते पर न ले जाये।

इसी तरह से, जब तक सत्गुरु अपने असली सत्स्वरूप का अनुभव न कराये, तब तक उसके अंदर के प्रभुरूप को हम नहीं पहचान पाते। यहाँ तक कि जो लोग सत्गुरु के साथ लगातार रहते हैं– जैसे कि उनके निकट संबंधी, वे भी अक्सर उसके अंतर छुपे प्रभु–रूप को नहीं पहचान पाते।

जब तक वह आँख न बने, तब तक कोई भी व्यक्ति एक संत की आंतरिक प्रकृति को, उसके अंदर छुपे प्रभु को नहीं जान सकता। जो अपने अंदर परमात्मा को देख व पहचान सकता है, उसने वास्तव में परमात्मा को पा लिया है, क्योंकि वह प्रभु उसके अंदर न केवल निवास करता है, अपितु उसके द्वारा प्रकट रूप में काम भी करता है।

गुरु एक ऐसी हस्ती है, जिस पर प्रभु की सत्ता प्रकट होती है और दिव्य योजना को पूर्ण करती है।

भाई नंदलाल 'गोया' फ़र्माते हैं :

ख़ुदा हाज़िर बुवद दायम बबीं दीदारे-पाकश रा।

– दीवाने–गोया (पृ.12)

(अर्थात, वह ख़ुदा ख़ुद हाज़िर–नाज़िर है। तू उसके पाक दर्शन कर।)

गुरु नानक, इसी तरह से फ़र्माते हैं :

नानक का पातिसाहु दिसै जाहरा।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰397)

इसी तरह से जब नरेन (जो बाद में स्वामी विवेकानंद बने) पहले पहल श्री रामकृष्ण परमहंस से मिले, तो उन्होंने पूछा, "महाराज! क्या आप ने परमात्मा को देखा है?" रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "हाँ बच्चे! मैंने उसे देखा है, जैसे मैं तुझे देखता हूँ।"

इस प्रकार, यह सब हमारी अंतर्दृष्टि पर ही निर्भर करता है। अगर वह दिव्य–दृष्टि किसी के पास है या अगर सत्गुरु ऐसा चाहे, तो सत्गुरु में परमात्मा की ज्योति निकलती हुई दिखलाई दे सकती है। सभी आध्यात्मिक साधनाओं का उद्देश्य यही है कि हमारी आंतरिक आँख खुल जाए, ताकि हम परमात्मा को दोनों जगह देख सकें; सर्वत्र, पूरी सृष्टि में फैला हुआ भी और सत्गुरु के अंदर सिमटा हुआ भी।

यह साक्षात्कार भी परमात्मा की बख़्शीश पर निर्भर करता है और कोई भी उसे अधिकार रूप में नहीं माँग सकता। जिस आत्मा ने युगों–युगों के अभ्यास से अपने आप को इस योग्य बना लिया है, उसी को प्रभु की ओर से यह पवित्र भेंट मिलती है।

छब्बीसवाँ अध्याय

परमात्मा और सत्गुरु की दातें

अध्यात्म का रास्ता कोई राजमार्ग नहीं, जिस पर आसानी से चला जा सके। यह जोख़िम से भरा, कठिन और टेढ़ा–मेढ़ा रास्ता है।

कठोपनिषद् (1:1:3:14) में हमें मिलता है :

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।

(अर्थात, उठो, जागो और गुरु की शरण में जाकर जागृति प्राप्त करो। यह रास्ता छुरे की धार के समान तेज़ है, जिस पर चलना बड़ा कठिन है– ऐसा विद्वान लोग कहते हैं।)

प्रसिद्ध मुस्लिम दरवेश, बाबा शेख़ फ़रीद फ़र्माते हैं :

उठु फरीदा गमन कर, दुनिया भालण जाए।
मत कोई बख्सिया तै मिलै, तू भी बख्सिया जाए।

(अर्थात, ऐ फ़रीद! उठ और किसी वली–अल्लाह की तलाश में सारी दुनिया को छान, क्योंकि सिर्फ़ तभी तुम बख़्शे जा सकते हो।)

पवित्र कुरान शरीफ़ में इस रास्ते को 'पुल–ए–सिरात' कहा गया है और 'उस्तरे की धार जैसा तेज़' और 'बाल जैसा बारीक़' बताया गया है।

भाई गुरदास भी कहते हैं कि 'गुर–सिक्खी' ('सत्गुरु का मार्ग') 'बाल से भी बारीक़ और उस्तरे की धार से भी तेज़' है :

गुर सिखी बारीक है सिल चटणु फिकी।
सिखी खांडे की धार है उहु वालहु निकी।

– वारां गिआन रतनावली (9:2)

बाइबिल में आता हैः

क्योंकि जो रास्ता और दरवाज़ा जीवन की ओर जाता है वह तंग है, इसीलिये बहुत कम व्यक्ति ऐसे हैं जो इसको पाते हैं।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 7:14)

वेदों में भी यौगिक आसनों और साधनाओं के लिए अनगिनत विधियों और संयमों का ज़िक्र आता है, जो इतने कठिन हैं कि सोचकर ही रौंगटे खड़े हो जाते हैं।

इतनी कठिनाइयों के होते हुए, यह मिट्टी का पुतला (इंसान), जो वस्तुतः निर्बल है, मन–माया के चंगुल में फँसा हुआ है, अंधी कामनाओं के जंजाल में उलझा हुआ है, और काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और अहंकार से भरा हुआ है, कैसे अपने आप, बिना प्रभावित हुए, भला इस आध्यात्मिक पथ का तीर्थयात्री बन सकता है?

इतनी विषम परिस्थिति में, जिसे देखकर अक्ल चकरा जाती है, और जिसमें से बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं, परमात्मा अपने जीवों पर दया करता है। वह स्वयं मानव के चोले में धरती पर उतर आता है और कष्ट झेलता है, ताकि उसके बच्चे बख़्शे जाएँ। लेकिन हमारे सामने फिर एक मुश्किल आती है।

सत्गुरु की शिक्षाओं को समझना और प्रतिदिन सख़्ती से उनका पालन करना, सत्गुरु में विश्वास रखना, अपना तन, मन और सुरत पूरी तरह से उसे समर्पित करना, उसकी रज़ा में राज़ी रहना, यह सब इतना सरल नहीं। जब तक सत्गुरु और परमात्मा, दोनों ही जीव पर कृपा न करें, वह 'सत्' को नहीं देख सकता और मुक्त नहीं हो सकता।

आपे जगजीवनु सुखदाता आपे बखसि मिलाए।।

– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰32)

हम, अपनी सीमित बुद्धि से सत्गुरु की बातों को पूरी तरह से समझ भी नहीं सकते। लेकिन प्रभु अपनी मौज से, समय आने पर, जीव को एक संत–सत्गुरु से मिला देता है, जो 'नाम' के साथ जोड़कर जीवों को धीरे–धीरे आगे ले जाता है, जब तक कि वह आदि 'शब्द' या 'नाद' धारा के मूल स्त्रोत तक न पहुँच जाए।

विणु सचे दूजा सेवदे हुइ मरसनि बुटु।।
नानक कउ गुरि बख्सिआ नामै संगि जुटु।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी वार म॰4, पृ॰315)

करमु होवै सतिगुरु मिलाए।।
सेवा सुरति सबदि चितु लाए।।

– आदि ग्रंथ (माझ म॰1, पृ॰109)

कृपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई।।

– आदि ग्रंथ (सूही म॰4, पृ॰757)

सत्गुरु यद्यपि शरीर रखता है, लेकिन वह प्रभु का स्वरूप होता है। उसमें भी वही गुण होते हैं, जो परमात्मा में होते हैं। वह भी पापियों के उद्धार के लिये आता है और बाक़ी लोगों में भी अपनी मुक्तिदायिनी दया का संचार करता है। वह जीवों के पाप धोता है और उन्हें 'नाम' का उपहार देता है, जो सभी बीमारियों, शारीरिक, आध्यात्मिक और आकस्मिक की सर्वश्रेष्ठ दवा है।

पतित उधारणु सतिगुरु मेरा मोहि तिस का भरवासा।।
बख्सि लए सभि सचै साहिबि सुणि नानक की अरदासा।।

– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰5, पृ॰620)

गुर पूरे की वडी वडिआई हरि वडा सेवि अतुलु सुख्यु पाइआ।।
गुरि पूरै दानु दीआ हरि निहचलु नित बख्से चड़ै सवाइआ।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी वार म॰4, पृ॰305)

सत्रहवीं शताब्दी के अंग्रेज़ी कवि, ड्राइडेन, मसीहा के बारे में हमें बतलाते हैं :

प्रभु को मानव तन में उतरता देखो। अपराधी के नाम में दुख भोगते देखो; तुम्हारे सारे दुष्कर्म परमात्मा ने अपने ऊपर ले लिये और अपने सारे श्रेष्ठ कर्म तुम्हारे ऊपर उंडेल दिये हैं।

— ड्राइडेन [John Dryden- 'Religio Laici' - A Layman's Faith]

सत्गुरु की दया–मेहर उतनी ही असीम है, जितनी उसकी महानता– यहाँ तक कि जो उसकी बुराई करते हैं, उनको भी वह क्षमा कर देता है और उन्हें अपना लेता है :

कोई निंदकु होवै सतिगुरू का फिरि सरणि गुर आवै।।
पिछले गुनह सतिगुरु बख्सि लए सतसंगति नालि रलावै।।
– आदि ग्रंथ (बिलावल वार म॰4, पृ॰855)

ऐसे अनगिनत लोग हैं, जिनके पाप माफ़ कर दिये जाते हैं और वे सुरक्षापूर्वक संसार–सागर के पार ले जाये जाते हैं।

कउण कउण अपराधी बख्सिअनु पिआरे साचै सबदि वीचारि।।
भउजलु पारि उतारिअनु भाई सतिगुर बेड़ै चाड़ि।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰3, पृ॰638)

सत्गुरु वास्तव में परमात्मा ही है। वह करुणा का सजीव समुद्र है। उसमें से हर प्रकार की बख़्शीश सदा ऐसे निकलती रहती है, जैसे किसी सदाबहार झरने से ठंडा और ताज़ा पानी।

गुरु नाराइणु दयु गुरु गुरु सचा सिरजणहारु।।
गुरि तुठै सभ किछु पाइआ जन नानक सद बलिहार।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी माझ म॰5, पृ॰218)

परमात्मा और गुरु का सर्वोच्च उपहार 'नाम' ही है। वे हमेशा अपने भक्तों पर नाम की बख़्शीश करके, इस तरह से उन को मुक्ति प्रदान करते हैं।

हरि भगताँ नो नित नावै दी वडिआई बख्सीअनु नित चड़ै सवाई।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी वार म॰4, पृ॰316)

अगम अगोचरु दरसु तेरा सो पाए जिसु मसतकि भागु।।
आपि कृपालि कृपा प्रभि धारी सतिगुरि बख्सिआ हरि नामु।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰406)

इस संसार और अगले संसार में, 'नाम' के उपहार से बढ़कर कोई दूसरा उपहार नहीं :

नावै जेवडु होरु धनु नाही कोइ।। जिस नो बख्से साचा सोइ।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰3, पृ॰364)

व्यक्ति 'नाम' का उपहार पा सकता है और सत्संग व सत्गुरु के द्वारा परमात्मा की ओर जाने का रास्ता पा सकता है।

जिस नो बख्ससे दे वडिआई।।
गुर परसादि हरि वसै मनि आई।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी गुआरेरी म॰3, पृ॰159)

भए कृपालु गुपाल गोबिंद।। साधसंगि नानक बख्सिंद।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰391)

'नाम' की कमाई से परमात्मा की दया–मेहर प्राप्त होती है और उसकी लगातार याद और दया–मेहर से नाम की कमाई होती है। दया–मेहर और नाम की कमाई, एक–दूसरे पर आश्रित हैं औ एक–दूसरे के विकास में सहायक होते हैं।

नाउ नानक बख्सीस नदरी करमु होइ।।
– आदि ग्रंथ (सूही म॰1, पृ॰729)

राम नाम बिनु कवनु हमारा।।
सुख्र दुख्र सम करि नामु न छोडउ आपे बख्सि मिलावणहारा।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰416)

इकु दमु साचा वीसरै सा वेला बिरथा जाइ।।
साहि साहि सदा समालीऐ आपे बख्से करे रजाइ।।
– आदि ग्रंथ (गूजरी म॰3, पृ॰506)

उसके हुक्म (आज्ञा) को पहचानने और भाणे (इच्छा) को मानने से उसकी कृपा हमारे ऊपरने लगती है।

जिन्ही पछाता हुकमु तिन्ह कदे न रोवणा।।
नाउ नानक बख्सीस मन माहि परोवणा।।
– आदि ग्रंथ (गूजरी वार म॰5, पृ॰523)

किसी संत के द्वारा बीजा गया 'नाम' का बीज, फल दिये बिना रह नहीं सकता। दुनिया में ऐसी कोई ताक़त नहीं, जो उसे रोक सके और देर–सवेर, जीव अपने लक्ष्य– आत्म–अनुभव और प्रभु–अनुभव तक अवश्य पहुँचेगा।

करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बख्स न मेटै कोइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰1, पृ॰62)

भगति करहि मरजीवड़े गुरमुखि भगति सदा होइ।।
ओना कउ धुरि भगति खजाना बखसिआ मेटि न सकै कोइ।।
– आदि ग्रंथ (वडहंस वार म॰4, पृ॰589)

काल और माया भी 'नाम' के बीज को नष्ट नहीं कर सकते, क्योंकि यह उस मंडल में बोया जाता है, जो उनके साम्राज्य से बहुत ऊपर है।

इसके अतिरिक्त, इस बीज को बोने वाला या'नी सत्गुरु स्वयं सतपुरुष है और इसलिये ईश्वर (सूक्ष्म मंडल का मालिक–निरंजन) और परमेश्वर (कारण मंडल का मालिक, 'ॐ') उसके काम में हस्तक्षेप नहीं कर सकते।

गुर की दाति न मेटै कोई।। जिस बखसे तिसु तारे सोई।।
– आदि ग्रंथ (मारू सोलहे म॰1, पृ॰1030)

गुर का सबदु न मेटै कोई।। गुरु नानकु नानकु हरि सोइ।।
– आदि ग्रंथ (गोंड म॰5, पृ॰864)

परमात्मा की बख़्शीश असीम है और कभी ख़त्म नहीं होती, लेकिन बड़े भाग्य हों, तभी यह मिलती है। आवागमन के अनंत चक्र से जीव को बचाने के लिये, उसकी कृपा का एक कण ही काफ़ी है।

आपे सचा बखसि लए फिरि होइ न फेरा राम।।
– आदि ग्रंथ (वडहंस म॰3, पृ॰571)

आवण जाणा ना थीऐ निज घरि वासा होइ।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰3, पृ॰993)

यह दौलत 'गुरुमुख' को मिलती है, 'मनमुख' को नहीं।

नानक सभु किछु आपे आपि है दूजा नाही कोइ।।
भगति खजाना बखसिओनु गुरमुखा सुखु होइ।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰3, पृ॰994)

जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई।।
गुरमुखि बोलहि सो थाइ पाए मनमुखि किछु थाइ न पाई।।
– आदि ग्रंथ (सूही म॰4, पृ॰758)

उसकी बख़्शीश से ही व्यक्ति 'नाम' की कमाई करता है।

जिसु तूं बख्सहि नामु जपाइ।। दूतु न लागि सकै गुन गाई।।

– आदि ग्रंथ (आसा म॰1, पृ॰416)

मानव अपने आप में एक असहाय प्राणी है और स्वयं कुछ भी नहीं कर सकता। इसलिये जो कुछ वह करता नज़र आता है, उसके लिये उसे गर्व नहीं करना चाहिये।

करण करावनहार सुआमी।। सगल घटा के अंतरजामी।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी गुआरेरी म॰5, पृ॰178)

संत–सत्गुरु के चरण–कमलों में पूरी नम्रता के साथ संपूर्ण आत्म–समर्पण ही सभी बीमारियों की एकमात्र दवा को और प्रभु की बख़्शीश को पाने का एकमात्र तरीक़ा है।

सत्ताइसवाँ अध्याय

सत्गुरु की सँभाल

सत्गुरु और शिष्य का संबंध अद्वितीय है, और धरती पर इसका कोई पर्याय नहीं मिलता। फिर भी, संतों ने हमें इसके बारे में कुछ न कुछ समझाने का प्रयत्न किया है। जबकि सभी सांसारिक संबंध, थोड़े या अधिक, स्वार्थ से भरे होते हैं, पर सत्गुरु और शिष्य का संबंध पूर्णतः निःस्वार्थ प्रेम का होता है।

तुलना के लिये, हम एक माता और बच्चे के प्यार पर विचार करते हैं। नवजात शिशु कोमल हाड़–माँस का एक नाज़ुक और बेसुध ढ़ेर होता है। वह अपनी आवश्यकताओं के बारे में कुछ नहीं कह सकता और न ही वह अपनी देखभाल कर सकता है, लेकिन माँ मानवता के उस छोटे रूप की स्नेहमयी देखभाल करती है। वह उसकी सभी ज़रूरतों और उसकी सुख–सुविधाओं को पूरा करती है। उसकी ख़ुशी में ही उसकी अपनी ख़ुशी है और उसके दुखों से उसे दुख का अनुभव होता है। दिन–रात वह अपने बच्चे के भले के लिए अनथक प्रयास करती रहती है और किसी भी बलिदान को अत्यधिक नहीं मानती। वह सब कुछ त्याग देती है, ताकि वह शिशु को वह सब दे सके, जो वह देने में समर्थ है और वह उसके लिए अपना जीवन भी त्यागने को तत्पर रहती है।

जैसे–जैसे बालक बड़ा होता जाता है, वैसे–वैसे वह अपनी माता के प्रेम को अपनाता चला जाता है। प्रेम की कृपामयी धाराएँ आँखों से आँखों तक प्रवाहित होती हैं। मूक भाषा में वह प्रेम का पहला पाठ पढ़ना शुरू करता है। धीर–धीरे, ठुमकता बालक बोलना सीखता है– शुरू में तोतले लफ़्ज़ों में; अपने हर प्रयत्न की सफलता पर माता की ख़ुशी की कोई सीमा नहीं रहती, जब तक कि वह स्वयं अपनी देखभाल करने में सक्षम नहीं हो जाता।

इसी प्रकार, जब एक व्यक्ति गुरु के द्वारा स्वीकृत हो जाता है, सत्गुरु के घर में मा'नो यह उसका दूसरा जन्म होता है। वह मन और माया की मलीनता में बुरी तरह रंगा होता है और दुनियावी मोह–बंधनों में पूर्णतया बंधा होता है। वह शरीर और शारीरिक संबंधों में इतना लिप्त होता है कि वह उनसे अलग नहीं सोच सकता।

अपने संपूर्ण सांसारिक ज्ञान, धन, प्रसिद्धि और नाम के बावजूद, आध्यात्मिक मामलों में वह कोरा होता है। उसका संपूर्ण जीवन इंद्रियों के घाट पर गुज़रा होता है और उसे इंद्रियों के भोगो–रसों के सिवाय, कुछ और पता नहीं होता और वे ही उसकी ज़िंदगी के सब कुछ होते हैं।

जब सत्गुरु के घर में जाकर शिष्य द्विजन्मा बनता है, तो सत्गुरु अपने ऊपर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व ले लेते हैं। अपने उपदेशों और अपनी तवज्जोह द्वारा वे धीरे–धीरे जीव को इंद्रियों के घाट की लम्पटताई से मुक्ति दिला देते हैं। वे शिष्य को बतलाते हैं कि वह न तो शरीर है, न मन है, न बुद्धि है, बल्कि इन सबसे ऊँचा है; वह आत्मा या सुरत है और प्रकृति ने उसे विभिन्न प्रकार के संसाधन (शरीर, मन और इंद्रियाँ) जीवन में किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए दिए हैं। आध्यात्मिक साधनाओं द्वारा सत्गुरु उसे इस योग्य बना देते हैं कि वह अपने मन को शांत कर सके। इसके बाद वह स्थिरता की अवस्था पा लेता है और फिर वह जीवन को एक नए दृष्टिकोण से देखना शुरू कर देता है। उसका सारा नज़रिया बदल जाता है और उसकी आत्मा में जागृति का उदय होता है।

वह फिर इंद्रियों का ग़ुलाम नहीं रहता, अपितु एक आंतरिक संतुष्टि, शांति और स्थिरता पा जाता है, जो उसे हर समय आत्मा के ठिकाने पर टिकाये रखती है। यह सब कुछ सत्गुरु का काम है, बल्कि इससे भी कहीं अधिक। एक जीव को सांसारिक मैल से पाक–साफ़ करना कोई मामूली काम नहीं है, लेकिन आध्यात्मिक जीवन के लिये यह नितांत आवश्यक है।

वह शिष्य की आत्मा को इंद्रियों, मन और बुद्धि के चंगुल से मुक्त करके, इन सब से ऊपर लाता है और यह काम सत्गुरु के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं कर सकता।

सुरत की धाराओं के शक्तिशाली प्रवाह को, जो नीचे की ओर बाहरी दुनिया में फैल रहा है, रोकना और रोक करके एक केन्द्र या'नी आत्मा के

ठिकाने पर एकत्र करना, अपने आप में एक बड़ा भारी काम है। पर, सत्गुरु का अगला काम इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है।

प्रारंभिक सफ़ाई—अभियान के बाद, वह आंतरिक आँख पर लगे पर्दे को हटाता है और उसे दृष्टि और ज्योति प्रदान करता है तथा वह आंतरिक कान पर लगी मुहर को तोड़ता है, और जीव को आंतरिक संगीत सुनने योग्य बना देता है। अपनी व्यक्तिगत तवज्जोह व देखरेख का उभार देकर, वह मोह—माया में फँसे, कचरे रूपी जीव को एक ऐसे निपुण व्यक्ति में परिवर्तित कर देता है, जो परमात्मा के अनलिखे क़ानून और अनबोली भाषा को समझ सके, उसका आनंद उठा सके और बाहरी स्थूल इंद्रियों के बिना काम कर सके।

सत्गुरु अपना जीयादान देकर शिष्य की संभाल करता है।

धन्नु धन्नु गुरू गुरु सतिगुरु पाधा जिनि हरि उपदेसु दे कीए सिआणे।।

— आदि ग्रंथ (गउड़ी बैरागिन म॰4, पृ॰168)

सतिगुरु सिख के बंधन काटै।।

— आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰286)

जैसे अंग्रेज़ी के महान कवि वर्ड्स्वर्थ ने अपनी बहन के बारे में कविता में गाया है, वैसे ही एक शिष्य भी अपने सत्गुरु के बारे में गाता है :

उसने मुझे आँखें दीं, उसने मुझे कान दिये,
नम्रता भरी देखभाल ही और कोमल से भय भी दिये।
ऐसा दिल दिया, जो मीठे आँसुओं का स्रोत है,
प्यार, विचार और ख़ुशियों से भरा है।

— वर्ड्स्वर्थ [William Wordsworth- 'The Sparrow's Nest']

चाहे कितनी भी ख़तरनाक परिस्थितियाँ क्यों न हों, सत्गुरु अपने शिष्यों को हमेशा बचाते हैं। सत्गुरु की रक्षक भुजाएँ, ढ़ाल बन जाती हैं और शिष्य ऐसी ज़िंदगी बिताता है मा'नो आनंद ही आनंद हो। सत्गुरु ऐसा इसलिये करता है, क्योंकि उसने उस जीव की ज़िम्मेदारी ले रखी होती है। इस बारे में शिष्य पर कोई बंधन नहीं होता और न ही यह ज़रूरी है कि उसे इस सँभाल का पता ही लगे।

और फिर, सत्गुरु अपने शिष्य के पापों और ग़लतियों का बोझ भी अपने ऊपर ले लेते हैं।

तुम्हारे सारे दुष्कर्म उसने अपने ऊपर ले लिये,
और उसकी सारी श्रेष्ठताएँ तुम्हारे ऊपर उंडेल दी गईं।

— ड्राइडेन [John Dryden- 'Religio Laici' - A Layman's Faith]

वह अपने जीव के कर्मों का लेखा–जोखा अपने हाथों में ले लेता है। उसकी सुरत की धाराओं के प्रवाह को उलट कर, ऊपर की तरफ़ मोड़ करके, और उसे इंद्रियों के जाल से आज़ाद करके, सत्गुरु आगे भविष्य के लिये उसे, कोई और कर्म–बीज बोने के योग्य नहीं छोड़ते। फिर भी, यदि कोई ग़लती वह इंसान होने के कारण करता है, तो सत्गुरु नर्मी से लेकिन दृढ़ता से पेश आते हैं, ताकि आगे भुगतने के लिये कोई कर्म बाक़ी न रहे। इस तरह से क्रियमान कर्मों (वर्तमान कर्म) का हिसाब चुकता दिया जाता है।

आगे प्रारब्ध कर्म आते हैं, जो हमारे भविष्य या भाग्य का निर्धारण करते हैं और जिनके कारण हमें मौजूदा जन्म मिला होता है, सत्गुरु उन्हें नहीं छूते, और शिष्य प्रसन्नता से उनके सम्मोहनों में से गुज़रता हुआ अपना जीवन बिता देता है।

भए कृपाल गुसाईआ नठे सोग संताप।।
तती वाउ न लगई सतिगुरि रखे आपि।।

— आदि ग्रंथ (गउड़ी माझ म॰5, पृ॰218)

आख़िरी बात, जो कम महत्व की नहीं, वह यह है कि सत्गुरु जीव को 'जीवन की रोटी' खिलाते हैं और 'जीवन का पानी' ('नाम') पिलाते हैं, जब तक कि वह आध्यात्मिक रूप से किशोर न बन जाये और किसी सीमा तक आत्म–निर्भर न हो जाए।

'नाम' की चिंगारी के स्पर्शमात्र से युगों–युगों के संचित कर्म भस्म हो जाते हैं और वे भविष्य में फल देने योग्य नहीं रहते।

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल।। सेवक कउ गुरु सदा दइआल।।

— आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰286)

मैं जीवन की रोटी हूँ, जो मेरे पास आयेगा, कभी भूखा नहीं रहेगा, और जो मुझ पर विश्वास करेगा, कभी प्यासा नहीं मरेगा।

— पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 6:35)

शिष्य के लिये सत्गुरु की रक्षक संभाल, माता की संभाल से कहीं अधिक होती है। वह हमेशा अपनी प्यार भरी दृष्टि अपने शिष्य पर रखता है और सभी हानिकारक चीज़ों से उसकी रक्षा करता है, क्योंकि उसके प्यार की कोई सीमा नहीं।

जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि।।
अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि।।
तिउ सतिगुरु गुरुसिख राखता हरि प्रीति पिआरि।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी बैरागिन म॰4, पृ॰168)

माता प्रीति करे पुतु खाइ।। मीने प्रीति भई जलि नाइ।।
सतिगुर प्रीति गुरसिख मुखि पाइ।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी गुआरेरी म॰4, पृ॰164)

इस विषय में नज़दीकी–दूरी का कोई प्रश्न नहीं, क्योंकि सत्गुरु के सामने इसकी कोई अहमियत नहीं। उसकी लंबी और ताक़तवर भुजाएँ हर जगह पहुँच सकती हैं और उसकी सूक्ष्म नज़र हर जगह देख सकती है।

दस्ते-पीर अज़ गायबां कोताह नीस्त,
दस्ते-ऊ जुज़ क़ब्ज़ा-ए-अल्लाह नीस्त।

– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.312)

(अर्थात, उसका दस्त (हाथ) परमात्मा (ख़ुदा) का हाथ है और परमात्मा की ताक़त उसके द्वारा काम करती है।)

शिष्य कहीं भी क्यों न हो, उसकी बाहरी परिस्थितियाँ कितनी भी विषम क्यों न हों, सत्गुरु हमेशा उसके अंग–संग होकर हर क़दम पर उसका मार्गदर्शन करता है, क्योंकि यह उसकी शाश्वत प्रतिज्ञा है।

हे इंसान! मैं तेरे साथ चलूंगा और तेरा मार्गदर्शक रहूंगा;
तेरी सबसे बड़ी ज़रूरत में तेरे संग-संग रहूंगा। (- Everyman)

कूँज आकाश में उड़ती है, लेकिन अपने अंडे अपनी तवज्जोह देकर सेती है। इसी तरह से सत्गुरु भी अपने शिष्यों को अपनी नज़र के अंदर रखता है, उन्हें 'जीवन के पानी' ('नाम' का बीज जो शिष्य के भीतर उन्होंने बो दिया है) से तब तक सींचता है, जब तक कि आत्मा तीन आवरणों (स्थूल, सूक्ष्म और कारण) से मुक्त होकर, स्वःप्रकाशित न हो उठे।

नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰286)

हाथ देइ राखै अपने कउ सासि सासि प्रतिपाले।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰682)

जो ताक़त, सीमेंट की भाँति, शिष्य और सत्गुरु को बाँध कर एक कर देती है, वह प्रेम ही है। अपनी असीम दया–मेहर से वह परमात्मा का संदेश दुखी मानवता के सामने रखता है और प्रार्थना करता है कि वे लोग उस अग्नि से बच सकें, जिस में सभी प्राणी जल रहे हैं।

मौलाना रूमी फ़र्माते हैं :

ख़ल्क़ रा ख़्वानद सूए दरगाहे-ख़ास,
हक़ रा ख़्वानद अफ़ू कुन देह ख़ुलास।

(अर्थात, वह लोगों को परमात्मा के साम्राज्य की ओर बुलाता है। वह प्रभु से प्रार्थना करता कि उन्हें क्षमा करे और मुक्ति दे।)

शिष्य का असली मित्र सत्गुरु ही है। वह उसे तनाव और निराशापूर्ण अवस्थाओं से बचाता है। जब शिष्य के विरोध में शक्तिशाली ताक़तें जमा हो जाती हैं, वह उनमें घिर जाता है और सहायता की सभी आशाएँ समाप्त हो जाती हैं, तो सत्गुरु उसकी सहायता को आता है। समय–समय पर शिष्य को सत्गुरु के परम शक्तिशाली प्रभाव का अनुभव होता रहता है, जो उसके भले के लिये काम करता रहता है। कभी–कभी वह ऐसे तरीक़ों से काम करता है, जो कि शिष्य की समझ से परे होते हैं। जैसे एक माता सुबह–सवेरे अपने सोये हुए बच्चे के जागने की प्रतीक्षा करती है, इसी तरह से, और उससे भी अधिक बेचैनी के साथ, सत्गुरु बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता है कि कब उसका शिष्य, मन और माया के अज्ञान से निकल कर, अपना सिर ऊपर उठायेगा और सहायता के लिये उसकी तरफ़ देखेगा तथा उसका दिल ख़ुश करेगा।

सत्गुरु की संभाल शिष्य की जिस्मानी मौत के समय और अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। जब उसके सभी रिश्तेदार और मित्र असहाय होकर उसके बिस्तर के पास इंतज़ार करते हैं और डॉक्टर नाउम्मीदी जाहिर करते हैं, तब सत्गुरु का दिव्य स्वरूप उसकी संभाल के लिये प्रकट

हो जाता है और इस दुनिया से विदा होती आत्मा को अगली दुनिया में ले चलता है, जहाँ कि कर्मों का लेखा माँगा जाता है।

उसके बाद, वे उसे उस मंडल में ले जाता है, जहाँ वह उचित समझे, ताकि आत्मा आध्यात्मिक साधना के द्वारा आगे बढ़ सके।

सचा सतिगुरु सेवि सचु सम्हालिआ।।
अंति खलोआ आइ जि सतिगुर अगै घालिआ।।
– आदि ग्रंथ (मलार म॰5, पृ॰1284)

सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंन्हि।।
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि।।
– आदि ग्रंथ (सूही म॰1, पृ॰729)

मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई।।
पारब्रहम का नामु दृड़ाए अंते होइ सखाई।।
– आदि ग्रंथ (रामकली म॰5, पृ॰915)

मौलाना रूमी कहते हैं :

दामने-ऊ गीर जू तर बे गुमाँ,
ता रही अज़ आफ़ते-आख़िर ज़मां।
– मसनवी मौलाना रूमी (दफ़्तर 1, पृ.73)

(अर्थात, ऐ नादान! जल्दी करके किसी मार्गदर्शक को ढूँढो, क्योंकि तभी तुम परलोक के ख़तरों से बच सकोगे।)

हमारे सारे सांसारिक संबंध क्षणभंगुर और अस्थाई हैं। कुछ लोग तो हमें ग़रीबी में छोड़ जाते हैं, कुछ कष्ट के दिनों में और बाक़ी बीमारी के समय में। बहुत थोड़े लोग ऐसे होते हैं, जो ज़िंदगी में हमेशा साथ निभाते हैं, लेकिन मौत के समय वे भी पीछे छूट जाते हैं। पर सत्गुरु सच्चा मित्र होता है, जो हमेशा शिष्य के अंग–संग सहाई होकर, वह चाहे जहाँ भी रहे, उसके इर्द–गिर्द अपनी रक्षक बाजुओं का कवच बना कर उसकी रक्षा करता है। वह मौत के समय आत्मा के साथ आ खड़ा होता है और दूसरी दुनिया में मार्गदर्शक बनकर उसके साथ जाता है।

नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ।
ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि।।
– आदि ग्रंथ (मारू वार म॰5, पृ॰1102)

जब शिष्य की आत्मा स्थूल शरीर को त्यागती है, तो सत्गुरु का ज्यो. तिर्मय स्वरूप उसे लेने आ जाता है और इस तरह सत्गुरु का चेताया जीव यमदूतों का शिकार नहीं बनता, बल्कि सत्गुरु उसे अपने साथ ले चलता है।

तुलसी साहिब हमें बतलाते हैं :

सोना काई न लगे, लोहा घुन नहिं खाय।
बुरा भला जो गुरू भगत, कबहुं नरक न जाय।।

— तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की बानी (शब्द 17, पृ.271)

सत्गुरु वास्तव में इस लोक और परलोक, दोनों में गुरु है और जीव की दोनों संसारों में सहायता करता है। उससे बढ़कर कोई दूसरा मित्र नहीं हो सकता।

मै हरि हरि खरचु लइआ बंनि पलै।।
मेरा प्राण सखाई सदा नालि चलै।।

— आदि ग्रंथ (माझ म॰4, पृ॰94)

ऐथै ओथै रखवाला।। प्रभ सतिगुर दीन दइआला।।

— आदि ग्रंथ (सोरठ म॰5, पृ॰628)

सो सतिगुरु पिआरा मेरै नालि है जिथै किथै मैनो लए छडाई।।।
तिसु गुर कउ साबासि है जिनि हरि सोझी पाई।।

— आदि ग्रंथ (वडहंस वार म॰4, पृ॰588)

सतिगुरु बाझु न बेली कोई।। ऐथै ओथै राखा प्रभु सोई।।

— आदि ग्रंथ (मारू म॰1, पृ॰1031)

जब कभी एक जीव, किसी सत्गुरु से मिलता है, तो उसे प्रभु का शुक्राना करना चाहिये, क्योंकि सत्गुरु ही उसे दीक्षा देकर अमर जीवन प्रदान कर देता है। क्योंकि सत्गुरु करुणा सागर है, वह बेझिझक, मुसीबतों में, बिना किसी कृतज्ञता की भावना के, शिष्य की सहायता करता है।

मौलाना रूमी उसके बारे में कहते हैं :

मिहरबां बे-रिश्वतां यारी कुनां, दर मक़ामे-सख़्त ओ दर रुदे-गराँ।।

(अर्थात, वह मित्र निस्वार्थी और कृपालु हृदय है; वह भयंकर मुसीबतों और मुश्किल समय में सहायता करता है।)

गुरु ने निस्सहायों की सहायता करने की प्रतिज्ञा ले रखी होती है। मात्र कृपालुता के कारण, वह सारी मानवता पर दया–मेहर की वर्षा करता है। उसका संग सबसे अधिक लाभकारी है। अगर गुरु अंग–संग हो, तो लाखों शत्रु भी शिष्य का कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं :

जामि गुरु होइ वलि लख्र बाहे किआ किजइ।।

– आदि ग्रंथ (सवैये म॰4, पृ॰1399)

सत्गुरु के आकर्षक दरबार में जिनकी पहुँच है, वे जीव वास्तव में धन्य हैं, क्योंकि उन्हें इस लोक और परलोक में चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं।

सारी दुनिया उसके समक्ष आदर-भाव से सर झुकाती है। दिव्य मंडल उसके अवतरण के लिये व्याकुल रहते हैं, क्योंकि पूर्ण वही है, जो पूर्णता के सम्पर्क में है।

वे शिष्य कितने भाग्यशाली हैं, जो उसकी पवित्र छत्रछाया में निवास करते हैं; अपने जीवनकाल में भी तथा उसके बाद भी वे तीव्र गति से अध्यात्म के राजमार्ग पर, दिन–दूनी रात–चौगुनी उन्नति करते चले जाते हैं।

अट्ठाइसवाँ अध्याय

गुरु का मेहर भरा हाथ

सत्गुरु दया–मेहर का झरना है। उसकी दया–मेहर के तरीक़े अद्‌भुत हैं। वह दया–मेहर की एक दृष्टि से ही जीव को सदा के लिए निहाल कर सकता है। वह 'नाम' की भरपूर वर्षा करता है। जब कभी वह अपनी मौज में किसी जीव के ऊपर अपना वरद हाथ रख दे, तो उस जीव को उसके बाद किसी दूसरी बख़्शीश की ज़रूरत नहीं पड़ती।

पलक झपकते ही, जीव अज्ञान रूपी अंधकार के मोटे परदे को पार कर जाता है और उसकी बख़्शीश का अनुभव पा जाता है, जो उसके अंतर में दिव्य 'ज्योति' और 'श्रुति' के रूप में प्रकट हो जाती है। इस अनुभव से जीव अनेक युगों के अमिट कर्मबंधन से एकदम मुक्त हो जाता है और दया–मेहर और शांति से भरा–पूरा अमर जीवन पा जाता है।

मै सुखी हूं सुखु पाइआ।। गुरि अंतरि सबदु वसाइआ।।
सतिगुरि पुरखि विखालिआ मसतकि धरि कै हथु जीउ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰5, पृ॰73)

मेरै हीअरै रतनु नामु हरि बसिआ गुरि हाथु धरिओ मेरै माथा।।
जनम जनम के किलबिख दुख उतरे गुरि नामु दीओ रिनु लाथा।।
– आदि ग्रंथ (जैतसरी म॰4, पृ॰696)

इस प्रकार सत्गुरु के हाथों से धन्य हुए सौभाग्यशाली जीव विरले हैं।

तिसु सालाही जिसु हरि धनु रासि।।
सो वडभागी जिसु गुर मसतकि हाथु।।
– आदि ग्रंथ (भैरउ म॰5, पृ॰1155)

जिसु मसतकि गुरि धरिआ हाथु।।
कोटि मधे को विरला दासु।।
– आदि ग्रंथ (प्रभाती म॰5, पृ॰1340)

इस विस्तृत दुनिया में सत्गुरु के हाथों का स्पर्श जीव को कष्टों और मुसीबतों से बचाता है और वह जीव निश्चिंत हो जाता है। सारी दुनिया उसके चरणों में प्रणाम करती व झुकती है। वह आज़ादी से, किसी भी मंडल मेें बेरोकटोक जा सकता है, क्योंकि पूरे सत्गुरु की कृपा उसे भी पूर्ण बना देती है।

चतुर दिसा कीनो बलु अपना सिर ऊपरि करु धारिओ।।
कृपा कटाख्य अवलोकनु कीनो दास का दूखु बिदारिओ।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰681)

उनत्तीसवाँ अध्याय

गुरु के आगे आत्म–समर्पण

सत्गुरु के चरण–कमलों में आत्म–समर्पण का अर्थ है अपनी इच्छा को सत्गुरु की इच्छा में मिला देना और अपने आप को पूरी तरह से उसके हवाले कर देना। सभी चिंताओं–परेशानियों से बचने का यह सबसे सरल और पक्का रास्ता है। ऐसा तभी होता है, जब शिष्य को अपने सत्गुरु के समर्थ होने का पूरा विश्वास हो।

यह आत्म–समर्पण उस लाचार मरीज़ के समर्पण जैसा है, जो एक शल्य–चिकित्सक की समर्था में विश्वास करके अपना जीवन उसके हाथों में सौंप देता है और जो भी इलाज वह कर सके, उसके लिए तैयार हो जाता है।

फिर इस समर्पण की तुलना उससे भी की जा सकती है, जब जंगल में राह भटका, निराश राही उस मार्गदर्शक के हवाले हो जाए, जो जंगल के रातों से भली–भाँति परिचित हो।

सत्गुरु का काम 'परा–विद्या' (परलोक की विद्या) का मात्र किताबी ज्ञान देना नहीं है, अपितु वह हमें रूहानी अनुभव भी प्रदान करता है और शिष्य की सभी कठिनाइयों में सहायता भी करता है। एक सच्चा मित्र केवल यही नहीं बताता कि किस तरह से मन और माया के प्रभाव से बच निकलना है, बल्कि वह स्वयं हमारी मदद करके हमें बाहर निकालता है।

उदाहरण के लिये, कल्पना करो कि किसी व्यक्ति को विदेश जाना है। वह वहाँ जाने के विभिन्न साधनों के बारे में पूछताछ करेगा– ज़मीनी, समुद्री और हवाई मार्ग, जिस किसी से भी वह जाने का निश्चय करे। यह चुनाव करने के बाद वह हवाई जहाज़, समुद्री जहाज़ या रेलगाड़ी में प्रविष्ट होता है और चालक की कुशलता पर विश्वास करके, ज़रा भी चिंता किये बिना, अपनी सीट पर आराम से बैठ जाता है। अगर समुद्री जहाज़ भँवर में या हवाई–जहाज़ किसी तूफ़ान में फँस जाता है, तो यह कैप्टन या पाइलट

का काम है कि हर संभव कोशिश करे, ताकि जिन यात्रियों का उत्तरदायित्व उसके ऊपर है, उनके जीवन, धन, सम्पत्ति की सुरक्षा करे और उन्हें सुरक्षित स्थान पर पहुँचाये।

ठीक इसी तरह से, आध्यात्मिक जिज्ञासु को भी ध्यानपूर्वक खोजबीन के बाद, पहले सत्गुरु की आध्यात्मिक योग्यता के बारे में पता लगाना होता है। पर एक बार गुरु चुन लेने के बाद, उसे पूरी तरह उसके हवाले हो जाना चाहिए, क्योंकि सिर्फ़ गुरु आध्यात्मिक रास्ते से पूरी तरह वाकिफ़ होता है, उसके तोड़–मोड़ जानता है और एक अचूक मार्गदर्शक का काम करता है।

'समर्पण' शब्द का अभिप्राय है कि शिष्य को सत्गुरु की योग्यता पर पूरा विश्वास हो और वह सत्गुरु के सभी आदेशों पर पूरी तरह से चले, अपनी अक्ल को उसमें दख़ल न देने दे, क्योंकि उसकी अपनी अक्ल सीमित है और गुरु के आदेशों के भेद या राज़ को नहीं समझ सकती।

सत्गुरु के आदेशों पर प्रश्न चिन्ह लगाना उसका काम नहीं। एक सिपाही की तरह, क्यों और किसलिये को जाने बिना, उसे सत्गुरु का आदेश मानना सीखना चाहिये, क्योंकि सत्गुरु ही जानते हैं कि शिष्य के लिए क्या बेहतर है।

इसलिये शिष्य को सत्गुरु की आज्ञा का अक्षरशः पालन करना चाहिये और स्वयं को उस आध्यात्मिक अभ्यास में लगा देना चाहिये, जैसा कि उसे बताया गया हो।

आध्यात्मिक सफलता का यही रास्ता है, इसके अतिरिक्त कोई और नहीं।

इस संदर्भ में हमारे पास ईरान के महान सूफ़ी शायर, हाफ़िज़ साहिब का निम्न कथन है :

ब-मै सज्जादा रंगीं कुन गरत पीरे-मुग़ां गोयद।
किह् सालिक बेख़बर न बुवद ज़ राहो-रस्मे मंज़िल हा।

— दीवाने–हाफ़िज़ (पृ.29)

(अर्थात, अगर मुर्शिदे–कामिल चाहे, कि अपनी नमाज़ की चटाई को भी शराब में रंग दो, तो रंग दो क्योंकि वह आध्यात्मिक मार्ग के जो मोड़–तोड़ और मुश्किलात हैं, उनसे नावाकिफ़ नहीं है।)

जब एक शिष्य अपना सब कुछ सत्गुरु के अर्पण कर देता है, तो वह चिंतामुक्त हो जाता है, और सत्गुरु को अब उसकी सारी ज़िम्मेवारी अपने ऊपर लेनी होती है, जैसे कि एक माता अपने नादान बच्चे की लेती है, जो कि अपना बुरा–भला नहीं जानता।

जैसे–जैसे शिष्य अपनी साधना में आगे बढ़ता है, वह सत्गुरु से और अधिक दया–मेहर प्राप्त करने के लायक़ बनने लगता है और सत्गुरु की असीम दया–मेहर और मार्गदर्शन से, वह दिन–ब–दिन उन्नति करता है। उसकी सारी इच्छाएँ, बिना उसके प्रयास के, अपने आप पूरी होने लगती हैं।

संतहु सुनहु सुनहु जन भाई गुरि काढी बाह कुकीजै।।
जे आतम कउ सुखु सुखु नित लोड़हु ताँ सतिगुर सरनि पवीजै।।

– आदि ग्रंथ (कलिआन म॰4, पृ॰1326)

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के अठारहवें अध्याय के श्लोक 66 में भगवान श्री कृष्ण उद्‌घोषणा करते हैं :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

(अर्थात, सभी कर्मों–धर्मों को छोड़ कर मेरी शरण में आ जाओ। सभी पापों से मैं तुम्हें बचाऊँगा, किसी प्रकार की चिंता मत करना।)

पवित्र कुरान में, हमें इसी तरह के उल्लेख मिलते हैं :

जो कोई भी नेक काम करते हुए अल्लाह को समर्पित रहेगा, उसका इनाम अल्लाह के पास है और उसे कोई डर नहीं होगा और न ही उसे कोई तकलीफ़ होगी।

– पवित्र कुरान (2.112; 10.6)

और बाइबिल में कहा गया है :

मैं तुम्हारे ऊपर अपना वरद हाथ रख दूँगा और तुम्हारा मैल पूरी तरह से हटा दूँगा और खोट को निकाल बाहर करूँगा।

– पवित्र बाइबिल (यशायाह 1:25)

बोझे से दबे सभी मेहनतक़श लोगों! मेरे पास आओ, मैं तुम्हें विश्राम प्रदान करूँगा।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 11:28)

और,

कष्ट के दिनों में मुझे याद करना, मैं तुम्हें कष्ट से छुड़ा दूँगा।

– पवित्र बाइबिल (भजन–संहिता 50:15)

'आत्म–समर्पण' (शरण का मार्ग) कोई आसान काम नहीं। ऐसी उपलब्धि के लिये, व्यक्ति को एक नादान बच्चे की भाँति बनना होगा। इसका मतलब होगा एक पूरा आंतरिक परिवर्तन, और व्यक्ति अपनी मति को छोड़कर गुरु की मति को अपना लेता है, उसका अपना व्यक्तित्व ख़त्म हो जाता है और वह गुरु का रूप बन जाता है। यह रास्ता 'स्वः' को नकारने का है, जिस पर हर कोई नहीं चल सकता।

दूसरी ओर, आध्यात्मिक साधना (करनी का मार्ग) का रास्ता तुलनात्मक रूप से आसान है। आध्यात्मिक उन्नति के लिये निजी प्रयत्न तो कोई भी करके देख सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह आत्म–समर्पण के रास्ते की तुलना में अधिक लंबा और कठिन रास्ता है, लेकिन सत्गुरु में विश्वास होने पर, इस पर कोई भी क़दम–कदम करके, आगे बढ़ सकता है। पर अगर इंसान ऊँचे भाग्य से आत्म–समर्पण या शरण का रास्ता अपना लेता है, तो उसे सत्गुरु की सभी दातें जल्दी ही मिल सकती हैं, क्योंकि वह सीधा उसकी गोदी में जा गिरता है और उसे स्वयं कुछ नहीं करना होता।

उसके बाद वह सत्गुरु का चुना हुआ प्रतिनिधि, उसका प्रिय पुत्र, परमात्मा का पुत्र हो जाता है। लेकिन वास्तव में कोई विरली धन्य आत्मा ही इस तरह की अवस्था प्राप्त करने में सफल होती है।

जा कै मसतकि करम प्रभि पाए।।
साध सरणि नानक ते आए।।

– आदि ग्रंथ (गउड़ी सुखमनी म॰5, पृ॰296)

जो सतगुर की सरणागती हउ तिन कै बलि जाउ।।
दरि सचै सची वडिआई सहजे सचि समाउ।।
नानक नदरी पाईऐ गुरमुखि मेलि मिलाउ।।

– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰31)

धर्मग्रंथों में, इस मार्ग को अपनाने के लाभों के अनेक वर्णन हैं :

गुरु पूरा पाइओ मेरे भाई।
रोग सोग सभ दूख्र बिनासे सतिगुर की सरणाई।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰395)

हरख्र सोग का नगरु इहु कीआ।। से उबरे जो सतिगुर सरणीआ।।
तूहा गुणा ते रहै निरारा सो गुरमुख्रि सोभा पाइदा।।
– आदि ग्रंथ (मारू म॰5, पृ॰1075)

मन मेरे गुर सरणि आवै ता निरमलु होइ।।
मनमुख्र हरि हरि करि थके मैलु न सकी धोइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰39)

जगत उधारण सेई आए जो जन दरस पिआसा।।
उन की सरणि परै सो तरिआ संतसंगि पूरन आसा।।
– आदि ग्रंथ (गउड़ी म॰5, पृ॰207)

सरब सुख्रा का दाता सतिगुरु ता की सरनी पाईऐ।।
दरसनु भेटत होत अनन्दा दूख्रु गइआ हरि गाईऐ।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ म॰5, पृ॰630)

मन महि मुंद्रा हरि गुर सरणा।।
– आदि ग्रंथ (रामकली म॰1, पृ॰879)

जगतु जलंदा डिठु मैं हउमै दूजै भाइ।।
नानक गुर सरणाई उबरे सचु मनि सबदि धिआइ।।
– आदि ग्रंथ (सोरठ वार म॰4, पृ॰651)

करन करावन सरनि परिआ।।
गुर परिसादि सहज घरु पाइआ मिटिआ अंधेरा चंदु चड़िया।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰393)

जीअ दानु गुरि पूरै दीआ राम नामि चितु लाए।।
आपि कृपालु कृपा करि देवै नानक गुर सरणाए।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰4, पृ॰443)

गुपता नामु वरतै विचि कलजुगि घटि घटि हरि भरपूरि रहिआ।।
नामु रतनु तिना हिरदै प्रगटिआ जो गुर सरणाई भजि पइआ।।
– आदि ग्रंथ (प्रभाती म॰3, पृ॰1334)

गुरु के आशीर्वाद से, व्यक्ति मौत के डर से निर्भीक हो जाता है, और सफलतापूर्वक संसार–सागर के पार ले जाया जाता है।

जमकालु निहाले सास आव घटै बेतालिआ।।
नानक गुर सरणाई उबरे हरि गुर रखवालिआ।।
– आदि ग्रंथ (सारंग वार म॰4, पृ॰1248)

परमात्मा द्वारा स्वीकार कर लिए जाने पर व्यक्ति के सभी कर्म पवित्र हो जाते हैं।

नानक नरकि न जाहि कबहूं हर संत हरि की सरणी।।
– आदि ग्रंथ (आसा म॰5, पृ॰460)

जिन कउ पूरबि लिखिआ सेई नामु धिआइ।।
नानक गुर सरणागती मरै न आवै जाइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰5, पृ॰53)

दुख हरत करता सुखह सुआमी सरणि साधू आइआ।।
संसारु सागरु महा बिखड़ा पल एक माहि तराइआ।।
– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰5, पृ॰691)

जब एक जीव सत्गुरु के आगे समर्पण कर देता है, तो परमात्मा उसे अपने संरक्षण में ले लेता है और उसे 'सहज अवस्था' (सदा की ख़ुशी की हालत) का वर दे देता है। उसके सभी डर समाप्त हो जाते हैं और वह अपने असली आत्म–स्वरूप को पहचान जाता है।

तीसवाँ अध्याय

सत्गुरु के वचन

जब एक व्यक्ति सत्गुरु के पास आता है, तो उसे खुले दृष्टिकोण को अपना कर आना चाहिये। क्योंकि वह यह जानता है कि उसके अभी तक किये गये सभी कर्मों– व्यक्तिगत अथवा सामूहिक, से उसे मुक्ति नहीं मिल सकी, उसे उन सभी को त्याग देना चाहिये और गुरु से आध्यात्मिक उपदेश देने की प्रार्थना करनी चाहिये।

उनसे उपदेश पा कर, उसे उनका सख़्ती से पालन भी करना चाहिये। गुरु का कहा मानने में ही सच्ची भक्ति निहित है। जो कुछ सत्गुरु हुक्म देता है, उसी को धार्मिक आदेश समझकर धारण करना चाहिये, चाहे वह बात इंसानी तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हो या नहीं। आख़िरकार, हमारी बुद्धि और तर्क सीमित है, और जिन गहराइयों तक सत्गुरु जाता है, हम वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। वह अपने आदेशों का आधार, उनका कारण जानता है और एक पूरे ज़िम्मेवार सेनाध्यक्ष की तरह से आदेश देता है।

इसलिये एक सच्चे सिपाही के जैसे हमें उसके आदेश का पालन करना चाहिये और जो कुछ वह करने को कहता है, वह करना चाहिये। इस विषय में हाफ़िज़ कहते हैं :

ब-मै सज्जादा रंगीं कुन गरत पीरे-मुग़ां गोयद।
किह् सालिक बेख़बर न बवद ज़ राहो-रस्मे मंज़िल हा।

— दीवाने–हाफ़िज़ (पृ.29)

(अर्थात, अगर मुर्शिदे–कामिल चाहे, कि अपनी नमाज़ की चटाई को भी शराब में रंग दो, तो रंग दो क्योंकि वह आध्यात्मिक मार्ग के जो मोड़–तोड़ और मुश्किलात हैं, उनसे नावाकिफ़ नहीं है।)

केवल ऊपरी तौर से सत्गुरु की जी–हजूरी करने से कभी कोई लाभ होने वाला नहीं। सत्गुरु जो कहता है, वह उस पर पूरा अमल देखना चाहता है क्योंकि शिष्य की भलाई उसी में है। बाइबिल में बड़ा ज़ोर देकर कहा गया है :

> अगर तुम मुझे प्यार करते हो, तो मेरा कहना मानो।
>
> – पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 13:15)

> तुम 'शब्द' के अभ्यासी भी बनो, और केवल उपदेश सुनकर न रह जाओ, नहीं तो तुम अपने आप को ही ठगोगे।
>
> – पवित्र बाइबिल (याकूब 1:22)

आगे, वे बताते हैं कि अध्यात्म की केवल बातचीत करते रहने से भी कुछ लाभ नहीं।

> शास्त्री और फ़रीसी मूसा की गद्दी पर बैठे हैं...लेकिन तुम उनके कामों की नक़ल मत करना, क्योंकि वे कहते हैं लेकिन करते नहीं।
>
> – पवित्र बाइबिल (मत्ती 23:2-3)

> क्योंकि परमात्मा का साम्राज्य बातों में नहीं, लेकिन उसकी सामर्थ्य में है।
>
> – पवित्र बाइबिल (I कुरिन्थियों 4:20)

जैसे बिना आत्मा के शरीर एक शव है, इसी तरह से ख़ाली बातें करना भी एक शव के समान है।

सेंट पॉल कहते हैं :

> यदि मैं मनुष्यों और स्वर्गदूतों की बोलियाँ बोलूँ और प्रेम न रखूँ, तो मैं ठनठनाता हुआ पीतल और झनझनाती हुई झांझ हूँ।
>
> – पवित्र बाइबिल (I कुरिन्थियों 13:1)

यही बात सत्गुरु के दर्शनों पर भी लागू होती है। इससे व्यक्ति को थोड़ी देर के लिए मानसिक टिकाव मिल सकता है, लेकिन ज्योंही वह दूर चला जाता है, मन पुनः विद्रोह करने लगता है और तन और आत्मा पर हावी हो जाता है।

अतः, अमल में लाना और सत्गुरु के वचनों को जीवन में उता. रना ही इस मार्ग पर काम आता है। सत्गुरु के शब्द दिल की गहराई में उतर जाते हैं और शायद ही कोई होगा, जो उन पर अमल करने की न सोचे।

अगर तुम मुझ में बसते हो और मेरे वचन तुममें बसते हैं, तो तुम जो माँगोगे वह तुम्हारे लिए कर दिया जायेगा।

मेरे पिता (परमात्मा) की शान इसी से होती है कि तुम बहुत सा फल लाओ। तब ही तुम मेरे चेले ठहरोगे।

– पवित्र बाइबिल (यूहन्ना 15:7-8)

तुम उनके फलों से उन्हें जान लोगे।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 7:20)

पर जो अच्छी ज़मीन में बीज डालता है, वह है कि जो 'शब्द' को सुनता है और समझता है। उसी में फल भी लगते हैं-किसी में सौ गुने, किसी में साठ गुने और किसी में तीस गुने।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 13:23)

संसार की तुलना एक फ़सल से की गई है, और फ़सल के समय आदमी फल के अतिरिक्त किसी की परवाह नहीं करता।

गुरु के वचनों को धर्म ग्रंथों का आदेश मानो और इससे जीवन के फल की अच्छी फ़सल लगेगी।

– पवित्र बाइबिल (मत्ती 13:30)

सत्गुरु के वचन सत्गुरु से अलग नहीं। दिल की गहराइयों में जो भावना है, उसी का रंग लेकर ज़ुबान से लफ़्ज़ निकलते हैं। सत्गुरु शब्द में समाया हुआ है और उसके वचन उसी चीज़ का इजहार हैं कि जो उसके अंदर समाई है और वह है 'शब्द' या'नी जीवन–धारा और जीवन–शक्ति। तो फिर दोनों (सत्गुरु और उसके वचन) भला एक दूसरे से अलग कैसे किये जा सकते हैं? निस्संदेह उसके वचन, जिज्ञासुओं के दिल पर मार करते हैं और जिस मिठास भरे दर्द से वे पीड़ित रहते हैं, उसे कोई दूसरा नहीं जान सकता।

अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी सुणि गुर बचन मनि तीर लगईआ।।
मन की बिरथा मन ही जाणै अवरु कि जाणै को पीर परईआ।।

– आदि ग्रंथ (बिलावल म॰4, पृ॰835)

सत्गुरु के वचनों को जैसे जैसे व्यक्ति अधिक प्राथमिकता देता जाता है, वैसे ही उसे मिलने वाली दया–मेहर बढ़ती जाती है। जो कुछ सत्गुरु आज्ञा दे, उसका पालन करने में ही सत्गुरु की सच्ची भक्ति है। गुरु रामदास हमें बताते हैं कि सत्गुरु की चाह हमारे साथ सदा रहनी चाहिये, चाहे हम कुछ भी क्यों न कर रहे हों। सत्गुरु अपने वचनों में छिपा है, और उसके वचन ही असली सत्गुरु है।

सतिगुरु बचनु बचनु है नीको गुर बचनी अंमृतु पावैगो।
जिउ अंबरीकि अमरा पद पाए सतिगुर मुख्न बचन धिआवैगो।।

– आदि ग्रंथ (कानड़ा म॰4, पृ॰1311)

गुर का बचन जपि मंतु।। एहा भगति सार ततु।।

– आदि ग्रंथ (रामकली म॰5, पृ॰895)

सतिगुर बचन कमावणे सचा एहु वीचारु।।

– आदि ग्रंथ (सिरी म॰5, पृ॰52)

सत्गुरु का 'शब्द' हमेशा दीक्षितों के साथ रहता है। दुनिया की कोई भी ताक़त इसे छीन नहीं सकती, आग इसे जला नहीं सकती और पानी इसे बहा नहीं सकता। यह अविनाशी और अमर है। यह अनाथों का नाथ है और हर क़दम पर हमारी संभाल करता है, हमारी रक्षा करता है। यह सभी भ्रम और शंकाओं को जड़–मूल से नष्ट कर देता है। इसके निकट मौत का देवता (यमराज) भी नहीं आ सकता।

राम नामु गुरबचनी बोलहु।। संत सभा महि इहु रसु टोलहु।।
गुरमति ख्नोजि लहहु घरु अपना बहुड़ि न गरभ मझारा हे।।

– आदि ग्रंथ (मारू म॰1, पृ॰1030)

इन्द्रियों के स्तर पर किए गए कर्मों के द्वारा कोई भी व्यक्ति 'नाम' के ख़ज़ाने को प्राप्त नहीं कर सकते।

सभी लोग निस्सन्देह गुरुवाणी सुनते और गाते हैं, लेकिन उससे वही असली लाभ उठाते हैं, जो गुरु के वचनों को अंतिम सत्य मान कर अपना जीवन बनाते हैं।

सेवक सिख पूजण सभि आवहि सभि गावहि हरि हरि ऊतम बानी।।
गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पावै
जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी।।

– आदि ग्रंथ (धनासरी म॰4, पृ॰669)

जो लोग बारंबार सत्गुरु से मिलते हैं, उनका उस के प्रति प्यार बढ़ता चला जाता है और जो लोग उसकी बात को सच मान कर उसके आदेशों का पालन करते हैं, वे प्रभु के प्रियतम हो जाते हैं।

सत्गुरु कैसा भी आदेश क्यों न दे, उसका पालन अदम्य उत्साह से होना चाहिये, ताकि व्यक्ति 'शब्द' को पकड़ने योग्य बन सके, जो उसे वापिस तुम्हारे निज–धाम में पहुँचा देगा।

गुरि कहिआ सा कार कमावहु।। सबदु चीन्हि सहज घरि आवहु।।
साचै नाइ वडाई पावहु।।

– आदि ग्रंथ (बिलावल म॰3, पृ॰832)

गुर का कहिआ जे करे सुखी हू सुखु सारु।।
गुर की करणी भउ कटीऐ नानक पावहि पारु।।

– आदि ग्रंथ (सारंग की वार म॰4, पृ॰1248)

सत्गुरु की आज्ञा का पालन करना नितांत आवश्यक है, क्योंकि ऐसा करने में ही शिष्य की भलाई है।

वैसे तो सत्गुरु से बहुत सारे लोग रोज़ाना मिलते हैं, लेकिन सिर्फ़ उनसे मिलना काफ़ी नहीं है। मुक्ति पाने के लिये मन, वचन और कर्म से उनकी आज्ञा का पालन करना होता है।

सतिगुर नो सभु को वेखदा जेता जगतु संसारु।।
डिठै मुकति न होवई जिचरु सबदि न करे वीचारु।।

– आदि ग्रंथ (वडहंस की वार म॰4, पृ॰594)

सत्गुरु को 'सुरत–शब्द योग' में निपुण होना चाहिये और वह इस योग्य हो कि हमारे अंदर 'शब्द' को प्रकट कर सके– वह 'शब्द', जो कि

नीचे के नौ द्वारों में प्रकट नहीं होता, बल्कि दसवें द्वार (दो भ्रूमध्य, आत्मा के ठिकाने पर) पर प्रकट होता है।

जब भाग्य से ऐसा सत्गुरु मिल जाये, तो शिष्य का कर्तव्य है कि सच्चे हृदय से उसकी आज्ञा में अपने आप को रखे और जैसा वह चाहे, वैसा अपने आप को ढ़ाल ले। ऐसा करके, उसे अपने मानव जन्म का पूरा लाभ प्राप्त होता है और वह अपने पूर्वजों एवं वंशजों की बड़ी भारी सेवा करता है और उसे फिर किसी से भी डरने की आवश्यकता नहीं रहती।

तिन का जनमु सफलु है जो चलहि सतगुर भाइ।।
कुलु उधारहि आपणा धन्नु जणेदी माइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰28)

गुर के भाणै जो चलै दुखु न पावै कोइ।।
गुर के भाणे विचि अंमृतु है सहजे पावै कोइ।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰31)

एक शिष्य, जो सत्गुरु की इच्छा (भाणे) पर जीवन गुज़ारता है, वह 'जीवन का अमृत' पा जाता है और अपने जन्म सिद्ध अधिकार के रूप में, प्रभु का साम्राज्य जीत लेता है।

मन मेरे सतिगुर कै भाणै चलु।।
निज घरि वसहि अंमृतु पीवहि ता सुख लहहि महलु।।
– आदि ग्रंथ (सिरी राग म॰3, पृ॰37)

सत्गुरु की आज्ञा कौन समझ सकता है और उसका पूरी तरह से कौन पालन कर सकता है? जिसके अंदर प्रभु की कृपा जाग्रत होकर काम करने लगती है :

जिस नो भए गोबिंद दइआला।।
गुर का बचनु तिनि बाधिओ पाला।।
– आदि ग्रंथ (प्रभाती म॰5, पृ॰1348)

सत्गुरु की आज्ञा का पालन करके, जो व्यक्ति प्रभु का अनुभव पा लेता है, उससे महान इस दुनिया में कोई अन्य दूसरा नहीं है। इसलिये हमें 'नाम' को पाने की कोशिश करनी चाहिये और संत–सत्गुरु की कृपा द्वारा उससे संपर्क स्थापित करना चाहिये।

मेरे मन नामु हरी भजु सदा दीबाणु।।
जो हरि महलु पावै गुर बचनी तिसु जेवडु अवरु नाही किसै दा ताणु।।
– आदि ग्रंथ (गौंड म॰4, पृ॰861)

'हरि–नाम' के फल इतने अधिक हैं कि उनको गिना नहीं जा सकता। जो 'नाम' के रंग में रंगा जाता है, वह हमेशा प्रभु–प्रियतम के गुण गाता रहता है। उसके सभी काम वक़्त पर अपने आप होते जाते हैं।

जिसकी वह कामना करता है, वह हो जाता है, क्यों स्वयं प्रकृति उसकी सेवा में तत्पर रहती है। वह सभी बिमारियों और बुराइयों से मुक्त है। वह सदैव 'मैं–पने' से मुक्त होता है और कभी अहंकार नहीं करता है।

अमीरी–ग़रीबी, आरामी–बेआरामी, सुख–दुख, नामवरी–गुमनामी, वह इन सभी द्वंद्वों से परे होता है, क्योंकि वह सदैव शांति व स्थिरता की अवस्था में रहता है।

मन–माया का ज़हर उस पर कोई असर नहीं डाल सकता। दुनिया में रहते हुए भी, वह दुनिया का नहीं होता, प्रत्युत् वह मोह रहित और चिंतामुक्त होता है। वह जहाँ कहीं चाहे, जा सकता है।

दुनियावी माया व भ्रम उसपर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते। वह काल की सत्ता से बच निकलता है, क्योंकि समय (Time) उसे बन्धन में नहीं जकड़ सकता, देश (Space) की सीमाएँ उस पर लागू नहीं होतीं, न ही निमित्त (Causation) उसे वशीभूत कर सकता है।

वह शाश्वत जीवन पा जाता है और पुनः 'प्रभु के साम्रज्य' या 'अदन के बाग़', जहाँ से वह प्रभु की प्रथम आज्ञा के उल्लंघन के कारण निकाला गया था, को फिर से जीत लेता है।

वह, न केवल अपनी आत्मा को बचा लेता है, बल्कि 'शब्द' की शक्ति से अनेक ऐसे लोगों को भी बचा लेता है, जो उसके सम्पर्क में आते हैं– अपने पुरखों और वंशजों की आत्माओं को भी।

धन्य है ऐसा व्यक्ति, जिसे किसी संत–सत्गुरु की शरण में आने का सौभाग्य मिलता है और वह इस प्रकार जीवन का सार पा लेता है।

संक्षिप्त जीवन चरित्र :
परम संत कृपाल सिंह जी महाराज

संत कृपाल सिंह जी महाराज 6 फ़रवरी, 1894 ई. में, ज़िला रावलपिंडी के एक छोटे से गाँव, सय्यद कसराँ में एक संभ्रात सिक्ख घराने में पैदा हुए। रखने वालों ने नाम भी चुन कर रखा– 'कृपाल', जिसने दयामेहर के ख़ज़ाने दोनों हाथों से लुटाये और रूहानियत (आत्मज्ञान) को दौलत से दुनिया को मालामाल कर दिया।

अध्ययनशील विद्यार्थी

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात।' बचपन ही से महापुरुषों के लक्षण आप में दिखाई देने लगे थे। घर से खाने–पीने की जो चीज़ें इन्हें मिलतीं, वे सब अपने साथी बालकों को बाँट देते और आप किसी एकांत स्थान में जाकर ध्यान में लीन हो जाते। इनका बचपन का ज़माना अनगिनत चमत्कारों से भरा पड़ा है, जिसके कारण 6 वर्ष की आयु से ही लोग इन्हें संत मानने लगे थे। इनका विद्यार्थी जीवन ज्ञान प्राप्ति और अध्ययनशीलता की अथक लगन का नमूना था। स्कूल की पढ़ाई के ज़माने में कॉलिज की पूरी लायब्रेरी की किताबें आपने पढ़ डाली थीं।

ज्ञान प्राप्ति की अनन्य लगन

आप मिशन स्कूल में पढ़ते थे, जहाँ ईसाई पादरी अक्सर लैक्चर देने आया करते थे। एक बार एक पादरी साहब स्कूल में आए और एक एक कक्षा में जाकर विद्यार्थियों से उनकी इच्छाओं–आकांक्षाओं और जीवन के आदर्श के बारे में कई सवाल पूछे। जब इनकी (कृपाल सिंह जी की) कक्षा में पहुँचे तो पादरी साहब ने पूछा, "बच्चों! तुम किस लिए पढ़ रहे हो? पढ़–लिख कर तुम क्या बनना चाहते हो?" अपनी–अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न उत्तर लड़कों ने दिए। किसी ने कहा, मैं पढ़ाई ख़त्म करके डॉक्टर

बनूँगा, किसी ने कहा, मैं इंजीनियर बनूँगा, किसी ने कुछ, किसी ने कुछ कहा। रस्मी से जवाब थे जिनके पीछे एक ही उद्देश्य था कि पढ़—लिख कर रोज़ी पैदा की जाए। जब कृपाल सिंह जी की बारी आई तो उन्होंने कहा, "I read for the sake of knowledge," अर्थात मैं ज्ञान प्राप्ति के लिए पढ़ रहा हूँ। पादरी साहब ये जवाब सुनकर बहुत ख़ुश हुए और भविष्य—वाणी की कि ये लड़का एक दिन दुनिया में नाम पैदा करेगा।

यह जवाब ज्ञान प्राप्ति के लिए अनन्य लगन का परिचायक था, जो इन्हें उस परम ज्ञान की मंज़िल तक ले गयी, जिसको पाकर सब कुछ जाना हुआ और पाया हुआ हो जाता है।

जन-कल्याण की प्रेरणा

संत कृपाल सिंह जी ने पूर्व और पश्चिम के परमार्थाभिलाषियों के पथ—प्रदर्शन के लिए अनेकों ग्रंथ लिखे हैं, लेकिन सबसे बड़ा ग्रंथ उनका अपना जीवन है, जिसके महत्त्वपूर्ण दृष्टांत अंधेरी रात में चमकते तारों के समान जीवन पथ के यात्री को रास्ता दिखाते हैं। 12 वर्ष की आयु में श्री रामानुज के जीवन वृत्तांत में उन्होंने पढ़ा कि जब वे गुरु से दीक्षा लेकर वापस घर लौटे, तो गाँव के लोगों को इकट्ठा करके गुप्त मंत्र, जो गुरु से मिला था, उन्हें बताने लगे। लोगों ने टोका कि यह तुम क्या कर रहे हो, गुरुमंत्र बताना महापाप है, नरकों में जाओगे। रामानुज ने कहा, "अकेला मैं ही नरकों में जाऊँगा ना! यह सारे लोग तो बच जाएँगे।" आप फ़रमाते हैं, "यह वृत्तांत पढ़कर मैं बहुत प्रभावित हुआ और मैंने सोचा कि यदि यह आत्मज्ञान की यह दात कभी मेरे हाथ आई तो मैं भी उसे इसी तरह मुफ़्त लुटा दूँगा।"

जीवन का लक्ष्य

1911 ई० में आपने मैट्रीकुलेशन परीक्षा पास की। उस वक़्त आपकी आयु 17 वर्ष की थी। अब यह सवाल सामने आया, जो पढ़ाई ख़त्म होने पर हरेक विद्यार्थी के सामने आता है, कि मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है? मुझे ज़िंदगी में क्या काम करना है? आप फ़रमाते हैं कि "पूरे सात दिन मैंने इस सोच में गुज़ार दिए और अंत में फ़ैसला किया कि मेरे लिए परमात्मा पहले है, दुनिया बाद में।" फिर सारा जीवन इस आदर्श— प्रभु प्राप्ति में लगा दिया।

महान जीवन की तैयारी

महाराज कृपाल सिंह जी के बचपन और विद्यार्थी जीवन से यह तथ्य दिन के उजाले की तरह सामने आता है कि उन्हें शुरू ही से उस महान कार्य का, जो आगे चलकर उन्हें करना था, पूर्ण आभास था। बचपन ही से उनका हर क़दम उस महान जीवन की तैयारी के लिए उठता रहा। उस जीवन के लिए असाधारण संस्कार एवं क्षमताएँ आप लेकर आए थे। चार वर्ष की आयु मे ही वो ध्यानास्थित होकर अन्तर दिव्य मण्डलों में विचरने लगे थे। आप फ़रमाते थे कि सुरत अर्थात आत्मा के सिमट जाने से नींद का काम पूरा हो जाता है। आत्मा पिंड (स्थूल शरीर) को छोड़ ऊपर दिव्य मण्डलों की सैर करके वापस आती है तो शरीर recharge जाता है अर्थात नया जीवन प्राप्त करता है। ये उच्च प्रवृत्तियाँ और संस्कार आप में जन्मजात थे और इनसे आप ने जीव–कल्याण के महान कार्य में बड़ा काम लिया।

प्रभु–प्राप्ति की ओर

उन्हीं दिनों एक घटना घटी जिसने प्रभु की तलाश की चिंगारी को, जो इनके हृदय में सुलग रही थी, एक धधकती ज्वाला बना दिया। लाहौर में आप एक जवान औरत का हाल देखने गए, जो बीमार थी और जीवन के अंतिम स्वाँस ले रही थी। सहसा वह अपने रिश्तेदारों से कहने लगी, "मेरा कहा–सुना माफ़ करना, मैं जा रही हूँ," यह कहकर प्राण त्याग दिए। ये दृश्य देखकर आप सोचने लगे, वह क्या चीज़ थी जो इस औरत के शरीर से निकल गई है, जिससे यह मुर्दा पड़ी है और हममें वह चीज अभी मौजूद है? वह कौन–सी ताकत है जो हाड़–माँस के इस शरीर को चलाती है और जब इससे निकल जाती है तो मिट्टी का ढ़ेर बाक़ी रह जाता है? शव के साथ आप श्मशान भूमि पहुँचे। वहाँ उस जवान औरत की चिता के पास ही एक बूढ़े आदमी की लाश पड़ी थी। यह दृश्य देखकर ख़्याल आया कि मौत जवानी और बुढ़ापे में कोई फ़र्क नहीं देखती। थोड़ी दूर आगे एक स्मारक पर लिखा था– "ओ जाने वाले, कभी हम भी तेरी तरह चलते फिरते थे, लेकिन आज मिट्टी का ढ़ेर होके पाँव तले पड़े हैं।" एक के बाद एक, यह तीन दृश्य देखकर दिल को चोट लगी। इसके बाद रातों की नींद

उड़ गई। प्रभु प्रियतम के वियोग में यह अवस्था बनी कि रात को आँसुओं से सारा तकिया भीग जाता। इस तलाश ने कई रंग दिखाये। किताबें पढ़ी, हरेक समाज के धर्मग्रंथ पढ़े। साधु महात्माओं से मिले– क्या क्या नहीं किया? यह सवाल आख़िर हुजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज के चरणों में जाकर हल हुआ।

जीवन की पवित्रता, आत्म–निरीक्षण और निरन्तर अभ्यास से आपको त्रिकालदर्शिता प्राप्त हो गई– पीछे क्या हुआ, आगे क्या होने वाला है, सभी बातें साफ़ दिखाई देने लगीं। आपने प्रार्थना की, "हे प्रभु! मैं तो तुझे पाना चाहता हूँ। ये दैवी शक्तियाँ जो तूने दया करके मुझे प्रदान की हैं, इनका शुक्रिया! इन्हें अपने पास रख। तुझसे यही माँगता हूँ कि मेरा जीवन एक साधारण व्यक्ति की तरह गुज़रे। दूसरे यह कि यदि मेरे हाथों किसी का भला हो तो मुझे उसका कोई अहसास न हो।" यह दो प्रार्थनायें 'कृपाल' के विशाल, प्रभु प्रेम और विश्व प्रेम से ओत–प्रोत हृदय की अनुपम झाँकी प्रस्तुत करती हैं।

सत्गुरु दयाल से भेंट

धर्मग्रंथों के अध्ययन से आप इस निष्कर्ष पर तो पहुँच चुके थे कि परमार्थ में सफलता के लिए गुरु का मिलना ज़रूरी है, पर हर वक़्त मन में यह धड़का लगा रहता था कि किसी अधूरे से वास्ता न पड़ जाए, सारा जीवन बर्बाद न चला जाए। इनके हृदय की सच्ची पुकार प्रभु ने सुनी और वक़्त के संत–सत्गुरु, श्री हुजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज का दिव्य स्वरूप इन्हें अंतर में आने लगा। यह 1917 ई० की बात है, हुजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज जी के चरणों में जाने से सात साल पहले की। बाबा सावन सिंह जी महाराज से मुलाकात भी एक विचित्र संयोग था। 1924 ई० की बात है, आप लाहौर में मिलिट्री अकाउन्ट्स के दफ़्तर में काम करते थे। नदी का तट देखने का शौक आपको ब्यास ले गया। हुजूर बाबा सावन सिंह महाराज के चरणों में पहुँचे तो देखा कि ये तो वही महापुरुष हैं जिनका दिव्य स्वरूप साल साल से अंतर में पथ–प्रदर्शन करता रहा था। पूछा, "हुजूर, श्री चरणों में लाने में इतनी देर क्यों की?" हुजूर महाराज मुस्कुरा दिये। कहने लगे, "यही वक़्त मुनासिब था।"

आदर्श शिष्य

गुरु की तलाश में कड़ी से कड़ी कसौटी आपने अपने सामने रखी। जब वह मिल गया तो तन, मन, धन सब कुछ गुरु को अर्पण कर दिया। गुरु भक्ति की और ऐसी की कि गुरु में अभेद हो गये। इनके महान कल्याणकारी जीवन की मोटी–मोटी बातों को भी बयान करने की यहाँ गुंजाइश नहीं है। वह करन–कारण प्रभु–सत्ता, उसे नाम कहो, शब्द कहो, जो मानव तन में प्रकट होकर जीवों का कल्याण करती चली आई है, इनके अन्तर में प्रकट होकर पूर्व से पश्चिम तक जीवों का प्रभु से जोड़ती रही। यह उसका प्रताप था कि भारत के सभी वर्गों जातियों व समाजों के अतिरिक्त यूरोप और अमरीका में सभी मतों के इसाइयों, इसराइल के यहूदियों, भारत, पाकिस्तान और अरब देशों के मुसलमानों, अफ़्रीका और अमरीका के हबशियों, तिब्बत, मलाया व अन्य पूर्वी देशों के बौद्धों का प्रेम प्यार व सम्मान उनको प्राप्त था। इनके दीक्षितों में विश्व के लगभग सभी देशों, जातियों, विचारधाराओं तथा समाजों के लोग शामिल हैं।

महाराज कृपाल सिंह जी को पुरबले संस्कारों तथा गुरु कृपा के प्रताप से देह स्वरूप में गुरु (परम संत श्री हुज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज) से मिलाप होने से सात साल पहले ही गुरुमुख की अवस्था प्राप्त हो चुकी थी। लम्बी खोज के बाद जब देह स्वरूप में सत्गुरु दयाल के दर्शन हुए तो बरबस इनके मुख से निकला, "हुज़ूर! अपने चरणों में लाने में इतनी देर क्यों की?" कोई पूछ–ताछ नहीं, कोई सवाल–जवाब नहीं, सात साल से अंतर दिव्य मंडलों में जो महापुरुष मार्गदर्शन करते रहे, उनसे सवाल–जवाब की गुंजाइश ही कहाँ रह गयी थी? शिष्य के सवाल के पीछे लंबी खोज की, विरह वेदना की, लंबी कहानी थी। गुरु के उत्तर में उसकी (गुरु के मानव तन में काम करने वाली प्रभु–सत्ता की) मौज या इच्छा का इशारा था, स्पष्ट संकेत था इस बात का कि इस सारी क्रिया में इंसानी कोशिशों का दख़ल नहीं, यह उस परम सत्ता का काम है जो गुरु के चोले में प्रकट होकर जीवों का उद्धार अर्थात उन्हें तन–मन से ऊपर लाकर प्रभु से जोड़ने और मिलाने का काम करती है। गुरु शिष्य की कहानी उस पहली मुलाक़ात ही में अपनी चरम सीमा में पहुँच गयी, किन्तु प्रभु रूप महापुरुषों का जीवन अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए हुआ करता है, वे ज़िंदगी की क़लम से

लिखी एक खुली किताब होते है, जीवन पथ के यात्रियों के मार्गदर्शन के लिए। अपनी जीवन यात्रा में वे जिज्ञासुओं के लिए पद चिन्ह छोड़ जाते हैं, इस लिए उनकी कहानी चरम पर पहुँच कर भी एक शुरूआत बन जाती है। जैसे अध्यापक प्राइमरी में प्राइमरी की, मिडिल में मिडिल की और एम.ए. में एम.ए. की योग्यता दर्शाता है, इसी तरह महापुरुष पूर्ण होते हुए भी गृहस्थी, जिज्ञासु, सेवक और शिष्य– सारे आदर्शों को अपने जीवन में प्रस्तुत करते हैं।

गुरु और गुरुमुख की कहानी

ग्रहणशीलता से पिता–पूत की, गुरु और गुरुमुख की कहानी शुरू होती है जो विकास की विभिन्न स्थितियों से गुज़र कर उस मंज़िल पर पहुँचती है जहाँ पिता–पूत में, गुरु और शिष्य में कोई अंतर नहीं रह जाता और वह (शिष्य) सेंट पॉल के शब्दों में पुकार उठता है :

"It is I, not now I, it is Christ but lives in me."

अर्थात "यद्यपि मैं वही हूँ, परन्तु अब 'मैं' नहीं रहा, क्योंकि अब मेरे अन्तर में निवास करने वाला मसीह है।" यह प्रेम की पुरातन परंपरा है।

प्रेम गली अति सांकरी जा में दो न समांहि।

यहाँ दो से एक होकर चलना पड़ता है। शिष्य अपना अस्तित्व गुरु में लीन कर देता है। सूफ़ियों की परिभाषा में वह फ़ना–फ़िलशेख़ हो जाता है, गुरु में समा जाता है। जो प्रभु में समा गया वो (सूफ़ियों की इस्तेलाह या परिभाषा में) फ़ना–फ़िल्लाह हो जाता है, प्रभु में समा जाता है। महाराज कृपाल सिंह जी के शब्दों में "गुरु God-man (प्रभु में अभेद) है, अर्थात, God (परमात्मा) जमा इंसान। जो Guru-man अर्थात गुरुमुख बन गया, प्रभु उस में आ गया कि नहीं?"

Receptivity या ग्रहणशीलता (गुरु से) जो संत कृपाल सिंह जी महाराज को पुरबले संस्कारों और गुरु कृपा की देन थी, उसे कैसे पैदा किया जाए? एक ऐसा शिष्य जिसकी पिछली background या पृष्ठभूमि नहीं, उसे कैसे प्राप्त कर सकता है? इस संदर्भ में महाराज कृपाल सिंह जी का मशहूर कथन सामने आता है, "एक इंसान ने जो किया, वही काम अन्य दूसरा इंसान भी कर सकता है यदि उसे सही मार्गदर्शन और मदद

मिले।" उन के गुरुपद काल ही में नहीं शिष्यत्व काल में भी इस बारे में (गुरु से दिल से दिल को राह बनाने के बारे में) बहुत लोगों ने उनके मार्गदर्शन और सहायता से लाभ उठाया। अपने प्रवचनों और लिखतों में गुरु से यकदिली बनाने का मज़मून का (जिसे वो परमार्थ का मूल और आधार मानते थे) ऐसा सुविस्तार और बोधगम्य स्पष्टीकरण उन्होंने किया है और ऐसी पते की बातें बताई हैं, कि अध्यात्म के पूरे साहित्य में कोई मिसाल नहीं मिलती। इस सिलसिले में गुरु दर्शन पर वे बड़ा ज़ोर देते थे। गुरु दर्शन के बारे में बड़ी गूढ़ बातें आप बताया करते थे। दर्शन के प्रसंग में अपने सत्संग प्रवचनों में हुज़ूरे–पुरनूर उपासना का आदर्श प्रस्तुत करते थे (उप–आसन) अर्थात पास बैठना। पास बैठना ये नहीं हैं कि,

दिल दिया कहीं और ही, तन साधु के संग।

साधु संग, अर्थात साधु के पास बैठना यह है कि दर्शन में इतना लीन हो जाए कि तन–मन की सुधि भूल जाए। अपने जीवन का दृष्टान्त प्रस्तुत करते हुए फ़र्माया करते थे :

"हुज़ूर अपने काम में लीन होते, मैं चुप–चाप बैठा देखता रहता। अभिनेता होता है ना, उसकी हर बात में अभिनय होता है, खाने–पीने में, उठने–बैठने में, बोलने–चालने में। एक तो उसका वास्तविक स्वरूप, जो वह स्वयं आप है (अर्थात परमात्मा), एक जो वो बन के आया है, जो पार्ट वह करता है (अर्थात इन्सान)। हमारी तरह ही मानव देह वह रखता है, लेकिन वह कुछ और भी है। वह सदेह–परमात्मा है। चित्तवृत्ति एकाग्र कर के चुप–चाप बैठे देखते रहो तो God-in-man की, प्रभु–सत्ता जो गुरु के मानव तन में काम करती है, उसकी झलक मिलती है।"

जब आप श्री हुज़ूर महाराज जी के चरणों में जाते तो 'दीदा शौ यक़सर' अर्थात सर्वथा आँख बन जाते, अपलक नेत्रों से चुप–चाप देखते रहते। दर्शन में ऐसे लीन हो जाते कि तन–बदन की सुधि न रहती। पास बैठे लोगों को एक आनन्द की अनुभूति होती, मुफ़्त नशा मिल जाता। एक दिन आप सत्गुरु दयाल के दर्शनों में लीन थे, कोई और वहाँ मौजूद न था। एक भक्त महिला ने देखा तो शोर मचा दिया, "मैंने आप दोनों की चोरी पकड़ ली है।" सत्गुरु दयाल हँसकर कहने लगे, "क्या चोरी पकड़ ली है?" "आप दोनों देह में नहीं हो, उठकर आँखों में आ गए हो।"

ऐसे कई दृष्टान्त उनकी जीवन गाथा में मिलते हैं जिन पर अमर जीवन की मुहर लगी हुई है, जो उन्होंने ख़ुद पाया और जिस का अंश दुनिया भर के परमार्थभिलाषियों को देते रहे। उनकी हर लिखत, हर कथन उनका, उस जीवन का, abundance of heart का, उनके करुणामय हृदय के अनन्त स्त्रोत का, रंग और असर लिए हुए है। उदाहरणार्थ उपरोक्त विषय (अर्थात परमार्थ में रसाई, जो गुरु से एकात्मता की देन है), पर उनका ये सारगर्भित कथन, "मैंने सत्गुरु दयाल से कभी कोई सवाल नहीं किया। बस चुप–चाप बैठे दर्शन करता रहता। देखने–देखने में मुझे सब कुछ मिल गया, बिन मांगे मिल गया।"

जीवन की पडताल

जीवन की पड़ताल की डायरी जो परमार्थाभिलाषियों तथा सतपथ के यात्रियों को संत कृपाल सिंह जी महाराज की ख़ास देन है तथा यह उनके अपने जीवन, अनुभव और विश्व के सारे धर्मों–मज़हबों–मतों की शिक्षाओं के तुलनात्मक अध्ययन का निचोड़ है। उन्होने स्वयं सात साल की उम्र में डायरी रखना शुरू कर दिया था, जिसमें दिन भर की ग़लतियों की कड़ाई और बेलिहाज़ी से लिखते और आगे के लिए उन ग़लतियों से बचने का यत्न करते। आगे चल कर जब उन्होंने गुरु पद पर कार्य शुरू किया तो आत्म–निरीक्षण की डायरी को एक ऐसा वैज्ञानिक रूप दिया जिसमें दुनिया के सारे धर्मग्रंथों और आज तक आए सारे महापुरुषों की शिक्षाओं का निचोड़ डायरी में प्रस्तुत कर दिया और अपने शिष्यों और सत्संगीजनों को डायरी के द्वारा अपनी त्रुटियों को चुन–चुन कर बाहर निकालने पर ज़ोर देते रहे। डायरी के विषय में आप फ़रमाते थे कि इंसान कुछ भी न करे, सच्चाई के साथ केवल डायरी भरना शुरू कर दे तो उसका जीवन पलटा खा जाएगा और दिल का दर्पण साफ़ हो कर सत्य की झलक उसमें पड़ने लगेगी। डायरी के बारे में हुज़ूर महाराज जी ने विस्तार के साथ कहा और लिखा है। यहाँ उनका एक ही कथन दोहराना काफ़ी है कि "हमें पता ही नहीं हम कहाँ खड़े हैं। यह पता हो कि हम गंदगी में बैठे हैं तो उससे निकलने की कोशिश भी करेंगे। हमें पता ही नहीं हममें क्या त्रुटियाँ है। अपनी त्रुटियों को देखें, तभी पता चले। अपनी तरफ़ नज़र मार कर देखें तो दूसरों के दोष निकालने की फ़ुर्सत ही न मिले।"

अपने व्यस्त–अति–व्यस्त जीवन में उन्होंने कई किताबें लिखी जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण किताब, वर्तमान युग का महान धर्मग्रंथ, 'गुरुमत सिंद्धात' है। यह अमर रचना, जो गुरुमुखी भाषा में है, दो भागों में, दो हज़ार पृष्ठों में फैली हुई है। इसमें गुरुग्रंथ साहिब और दुनिया के सभी समाजों के धर्मग्रंथों के प्रमाण देकर सिद्ध किया गया है कि धर्मग्रंथ, जो आज तक लिखे गये और महापुरुष, जो आज दिन तक आए, सबकी मूलभूत तालीम एक ही है। इस महान ग्रंथ में दुनिया के सारे धर्मग्रंथों का सार प्रस्तुत किया गया है। पश्चिम के परमार्थाभिलाषियों के लिए आपने अंग्रेज़ी भाषा में कई ग्रंथ रचे। आपकी पुस्तकों का अनुवाद अंग्रेज़ी, जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, इण्डोनेशियन, रूसी और ग्रीक (भारत के अतिरिक्त विश्व की कुल 14 भाषाओं में) हो चुका है।

अध्यात्म का सार्वभौम प्रसार

36 वर्ष की सरकारी नौकरी के बाद, मार्च 1947 ई॰ में, आप डिप्टी असिस्टेन्ट कन्ट्रोलर ऑफ़ मिलिट्री एकाउन्ट्स के पद पर रिटायर हुए और उसके बाद, सत्गुरु दयाल हुज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज के मिशन को पूरा करने में लगे रहे, जो 2 अप्रैल, 1948 ई॰ को अपना रूहानियत का, अर्थात जीवों के कल्याण का काम, आपको सौंप कर परमधाम सिधार गये। गुरु के आदेशानुसार आपने 1948 ई॰ में रूहानी सत्संग और 1951 में दिल्ली में 'सावन–आश्रम' की स्थापना की, जहाँ जात–पात, रंग–वर्ण, देश व समाज के भेद–भाव के बग़ैर हरेक परमार्थाभिलाषी को, आत्मतत्व का व्यक्तिगत अनुभव उन्होंने प्रदान किया। धर्म को और प्रभु को मानने वाले लोगों को– वो किसी भी धर्म, देश, जाति, नस्ल के हों– आपस में जोड़ने और मिलाने की साँझी धरती, Common Ground, जो हुज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज के ज़माने में क़ायम हो चुकी थी और जिसके रूहानी फैज़ (पारमार्थिक लाभ) का सिलसिला (अर्थात परमार्थाभिलाषियों को मन–इन्द्रियों से ऊपर लाकर आत्मानुभव प्रदान करने के कार्य का सिलसिला) जो भारत के कोने–कोने में और भारत से बाहर यूरोप, इंग्लैंड और अमरीका तक फैल चुका था, उस काम को उन्होंने अपने 26 वर्ष की पल–पल कार्यरत, व्यस्त–अति–व्यस्त रूहानी पादशाही में और आगे बढ़ाया और इतना आगे फैलाया कि यूरोप के

लगभग सभी मुल्कों, अफ़्रीका के विभिन्न देशों, इंग्लैंड, अमरीका (उत्तरी और दक्षिणी अमरीका) कैनेडा, पूर्व में मलाया, कोरिया, आस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया आदि देशों में रूहानी सत्संग की 250 से ऊपर शाखायें उनके जीवन काल में स्थापित हो चुकी थीं।

विश्व यात्राएँ

1955 में उन्होंने पश्चिम–यूरोप, इंग्लैंड, अमरीका आदि की यात्रा की और लोगों को आत्मानुभव की दात दी। उस ऐतिहासिक विदेश यात्रा में उन्होंने, जो महान कार्य सार्वभौमिक स्तर पर उन्हें करना था, उसकी पक्की नींव रखी और अपने महान सत्गुरु की रूहानी दात के डंके सारी दुनिया में बजा दिये। पश्चिमी देशों में भाषण पर टिकट लगता है, जिसका एक हिस्सा वक्ता को मिलता है। महाराज जी ने हर जगह free talks (मुफ़्त व्याख्यान) दीं। लोगों ने उन्हें धन देना चाहा तो उन्होंने कहा, "कुदरत की सारी दातें– रोशनी, पानी, हवा– मुफ़्त हैं और सबके लिए हैं। रूहानियत (आत्मज्ञान) भी कुदरत की देन है। वह सब के लिए है और सबको मुफ़्त मिलेगी।" दो वर्ष पश्चात, 1957 में दिल्ली में वे सर्व–सम्मति से 'World Fellowship of Religions' (विश्व सर्वधर्म संघ) के प्रधान चुने गये, जिसे उसके संयोजक, मुनि सुशील कुमार जी महाराज एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का रूप देना चाहते थे। संत जी ने उसका संविधान बनाया और उस संस्था के अन्तर्गत जो चार विश्व सम्मेलन, 1957 में दिल्ली में, 1960 में कलकत्ता में और 1963 और 1970 में फिर दिल्ली मे हुए, वे सब उनकी अध्यक्षता में हुए। इन सम्मेलनों के फलस्वरूप धर्मों का एक शक्तिशाली common platform या सयुंक्त मंच बना, विभिन्न धर्मों के लोगों के एक जगह मिल बैठने और विचार–विमर्श करने की प्रथा चली, जिससे आपस की ग़लतफ़हमियाँ दूर हुईं और लोग एक–दूसरे के क़रीब आने लगे, भेद–भाव दूर हुए, धर्मांधता, तास्सुब, तंगदिली, कम हुई और समन्वय और सहिष्णुता की भावना को बढ़ावा मिला। मगर उसके साथ ही लोगों में अपने–अपने समाज को आगे बढ़ाने की भावना बनी रही, बल्कि और मज़बूत हुई और ऐसी आवाज़ें सुनाई देने लगीं, "दुनिया भर के हिन्दुओं, एक हो जाओ, मुसलमानों, एक हो जाओ।" इस चीज़ को देखकर महाराज

जी इस नतीजे पर पहुँचे कि अब इसके बाद एक और क्रान्तिकारी क़दम आगे बढ़ाना होगा।

धर्मों और मज़हबों का– सभी समाजों का– उद्देश्य तो यही है न कि इंसान नेक–पाक–सदाचारी बनें, सही मानों में इंसान बनें। यह सोचकर उन्होंने एक महान क्रान्तिकारी क़दम उठाने का फ़ैसला किया, जो मानव केन्द्र की स्थापना और 'विश्व मानव एकता सम्मेलन' के रूप में दुनिया के सामने आया।

1962 में ईसाईयों की डेढ़ हज़ार वर्ष पुरानी धर्म संस्था, 'Sovereign Order of St. John of Jerusalem, Knights of Malta' ने, जो मुस्लिम–ईसाई धर्मग्रंथों में 'Knight Templars' कहलाते थे, उन्होंने महाराज जी को 'Grand Commander' की उपाधि से सम्मानित किया। इसके लिए उन्हें अपने डेढ़ हज़ार वर्ष पुराने संविधान में संशोधन करना पड़ा। सिक्ख समाज के एक महापुरुष को धर्मवीर मानकर उन्होंने स्वीकार किया कि धर्म और आस्तिकता ईसाइयों का एकाधिकार नहीं। कैथोलिक ईसाईयों के धर्मगुरु पोप ने आपसे भेंट करने के बाद गै़र–ईसाइयों से मेल–जोल बढ़ाने की घोषणा की और इस हेतु जो सलाहकार समिति बनायी, उसमें महाराज कृपाल सिंह जी का नाम भी शामिल किया।

1963 में हुजू़र दूसरी बार विश्व यात्रा पर गये। तब तक रूहानी सत्संग की दो सौ शाखायें सारी दुनिया में फैल चुकी थीं। इस यात्रा में उन्होंने रूहानी सत्संग की शाखाओं का गठन किया, नई शाखायें स्थापित कीं, नए परमार्थाभिलाषियों को नामदान दिया और साथ ही मानव एकता और विश्व सर्वधर्म सम्मेलन के common platform का संदेश लोगों को दिया। दूसरी विश्व यात्रा में हुजू़र महाराज जी ने विभिन्न स्तरों पर काम किया। वे हुक्मरानों (विभिन्न देशों के सत्ताधीशों) से मिले और उन्हें बताया कि प्रभु ने लाखों लोगों की सुरक्षा और कल्याण का जो काम उन्हें सौंपा है, उसे पूरी ईमानदारी के साथ पूरा करें। यदि पड़ोसी देश अव्यवस्थित या कमज़ोर पड़ जाए, तो वे उसकी मजबूरी का लाभ उठा कर उसका शोषण न करे, बल्कि उसकी सहायता करें। वे राजनीतिज्ञों, जन–नायकों, धमोचार्यों, सभी से मिले। ईसाई समाज की प्राचीनतम धर्म संस्था से सम्म. ान प्राप्त करने के कारण उनके लिए सारे गिरजों के दरवाज़े खोल दिए

गए थे और इस यात्रा की अधिकतर talks (प्रवचन) उन्होंने गिरजों में दी, बल्कि नामदान तक गिरजों में दिया। ये बात आज तक नहीं हुई थी। अगस्त 1972 से जनवरी 1973 तक, पांच महीने की अपनी तीसरी और आख़िरी विश्व यात्रा में, हुज़ूर महाराज ने सिर्फ़ एक काम किया– खुले आम लोगों को नामदान देने का काम। उपदेश–प्रवचन के बाद अगले दिन सबको भजन पर बिठा दिया जाता और नामदान अभिलाषियों को, हरेक को नामदान दिया जाता।

मानव केन्द्र की स्थापना

1969 में हुज़ूर महाराज जी की हीरक जयन्ती सब समाजों ने मिल कर मनायी। विश्व एकता और राष्ट्र नवचेतना के अग्रदूत और मार्गदर्शक का इससे बढ़कर अभिनन्दन नहीं हो सकता था कि उनकी हीरक जयन्ती का वर्ष राष्ट्रीय एकता वर्ष के रूप में मनाया गया। सभी समाजों ने उस वर्ष राष्ट्रीय एकता के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहने का प्रण किया। महाराज जी मंच पर भाषण करके संतुष्ट हो जाने वाले नहीं थे। उसी वर्ष उन्होंने मानव केन्द्र की योजना बनायी। उसमें श्री काका साहिब कालेलकर, प॰ दीनानाथ दिनेश और अन्य महापुरुषों को साथ लिया और 1970 में, देहरादून में मानव केन्द्र का भव्य स्वरूप, भारत का सबसे बड़ा पक्का अंडाकार सरोवर, बाग़, अस्पताल आदि बनकर तैयार हो गये। हीरक जयन्ती के अवसर पर अपनी जन्मतिथि, छः फ़रवरी के अनुरूप, छह शब्दों में उन्होंने अपनी तालीम का जो निचोड़ पेश किया था, 'भले बनो, भला करो, एक रहो'– 'मानव–केन्द्र' उसका साकार स्वरूप था।

विश्व मानव एकता सम्मेलन

विश्व सर्वधर्म सम्मेलन के महान कार्य और उसके व्यापक प्रभाव का उन्हें पूरा अहसास था। लेकिन उन्होंने देखा और अपने प्रवचनों और किताबों में कहा और लिखा कि समाजों के विवेकवान लोग (नेतागण, धर्माचार्य) तो बहुत हद तक एक हो गए है और भेद–भाव से ऊपर उठ गए हैं, लेकिन उनके अनुयायियों में वो बात पैदा नहीं हुई। तभी उन्होंने धर्म की बजाय मानव और मानवता के आधार पर एकता सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया। विश्व के इतिहास में अपने ढंग का यह पहला प्रयास

था। इससे पहले सम्राट अशोक और हर्ष के ज़माने में जो सम्मेलन हुए, वे धर्म के आधार पर हुए थे। दिल्ली और पूरे देश में इतना बड़ा विश्व स्तर का सम्मेलन इससे पहले कभी नहीं हुआ था। विभिन्न देशों के पाँच सौ से अधिक प्रतिनिधि इसमें शामिल हुए। भारत के प्रतिनिधि उनके अतिरिक्त थे। इस सम्मेलन की एक बड़ी विशेषता यह थी कि यद्यपि इसके लिए धन और साधन रूहानी–सत्संग ने जुटाये, लेकिन महाराज जी ने ये सम्मेलन रूहानी–सत्संग की तरफ़ से नहीं किया, बल्कि सब समाजों के सम्मिलित तत्वावधान में किया। उन्होंने सम्मेलन के आठ सचिव नियुक्त किए जो विभिन्न समाजों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। महाराज जी के शब्दों में, ″परमात्मा ने इंसान बनाये। उसने मुहर (ठप्पा) लगा के नहीं भेजा कि यह हिन्दू है, यह मुसलमान। समाजें इंसान ने बनाईं, इसलिए कि इंसान सही मा′नो में इंसान बने, नेक–पाक–सदाचारी बने, इंसान इंसान के काम आये, जिससे उसकी जीवन यात्रा सुख से व्यतीत हो और फिर सब मिलकर, जहाँ जिस समाज में कोई है, उसमें रहते हुए और अपनी–अपनी समाज मर्यादा का पालन करते हुए, उस लक्ष्य को पाये जो मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य और सब समाजों का साँझा आदर्श है। समाजें इंसान के लिए बनी, इंसान समाजों के लिए नहीं बना था। मगर वह मक्सद किनारे रह गया। हम समाजों के उद्देश्य (मानव निर्माण और प्रभु प्राप्ति) को भूलकर अपने–अपने समाजों को ही बनाने–सँवारने में लग गए।″ विश्व मानव एकता सम्मेलन में हुजूर महाराज जी ने इंसान और इंसानियत के आधार पर एकता का आदर्श पेश किया। उन्होंने कहा कि, ″इंसान सब एक है। बाहर की और अंदर की बनावट सबकी एक है। एक ही तरह से सब पैदा होते हैं और मरते हैं। वह हक़ीक़त सबमें हैं, सबकी पैदा करने वाली, प्रतिपालक और जीवनाधार है। एकता तो आगे ही मौजूद है, मगर हम भूल गए हैं।″ उस व्यापक जन्मजात एकता के आधार पर उन्होंने इंसान इंसान को मिलाने का ये महान प्रयास किया।

पहली अगस्त 1974 में (महाप्रयाण से 20 दिन पहले) भारत के संसद भवन में उनके सम्मान में एक सभा आयोजित की गयी जिसमें उनका मानपत्र प्रस्तुत किया गया। इस सभा की अध्यक्षता संसद के स्पीकर श्री गुरदयाल सिंह ढ़िल्लों ने की। संसद के इतिहास में ये पहला मौक़ा था जब

संसद सदस्यों की ओर से संसद भवन में एक आध्यात्मिक महापुरुष को सम्मानित किया गया।

संत कृपाल सिंह जी महाराज ने विभिन्न स्तरों पर और दिशाओं में विश्व में नव जाग्रति और नव चेतना के जो बीज बोए, वे एक दिन फल लायेंगे और वह वक़्त आ गया है। जैसा कि वे आख़िरी दिनों में कहा करते थे, "सतयुग कोई आसमानों से फट पड़ने वाला नहीं, कलयुग के घोर अंधकार ही से उसका अभ्युदय होगा और वह दिन दूर नहीं। यह जो नयी चेतना, नयी जाग्रति सब समाजों में दिखाई दे रही है, यह प्रभु प्रेरणा से है और सतयुग के अभ्युदय की निशानी है।"

सावन-कृपाल दयाधारा का नया दौर

हुजूर संत कृपाल सिंह जी महाराज अपने जीवन की संध्या–बेला अक्सर कहा करते थे कि मेरा मिशन मेरे बाद भी जारी रहेगा और दिनों–दिन आगे बढ़ेगा और फैलेगा। आज, उनके अनामी पद लीन होने के दस साल बाद, "सावन–कृपाल रूहानी मिशन" के अंतर्गत हम इन दो महापुरुषों की विशाल दयाधारा को नयी–नयी दिशाओं में बढ़ते–फैलते देख रहे हैं। इतनी तेज़ी से काम आगे बढ़ा–फैला है कि देख कर अक़्ल चक्कर खाती है। आज वही कार्य संत दर्शनसिंह जी महाराज के उत्तराधिकारी, संत राजिन्दर सिंह जी महाराज की देखरेख में चल रहे हैं।